उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

जुलाई-सितंबर, 2012

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
चन्द्रकांत विठाल पवार **बनाम** महाराष्ट्र राज्य और अन्य	64
जसबीर सिंह **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य	108
जागीर सिंह **बनाम** जगजीत सिंह और एक अन्य	50
दिनेश और एक अन्य **बनाम** राजस्थान राज्य	81
दिनेश चन्द्र **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य	1
दिनेश जगजीवन वदगामा **बनाम** गुजरात राज्य	23
दिलबाग सिंह **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य	150
प्रदीप कुमार तुली **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य	116
मनोहर सिंह **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य	139
रामचन्द **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य, खाद्य निरीक्षक की मार्फत	128
रामशरण रामवगस लोहार **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य	36
हरीश चावला **बनाम** राज्य	55
हिमाचल प्रदेश राज्य **बनाम** उषा देवी (देखिए – पृष्ठ संख्या 150)	
हिमाचल प्रदेश राज्य **बनाम** सुरेश कुमार और अन्य	104

संसद् के अधिनियम

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	(1) – (25)

जुलाई-सितंबर, 2012 (संयुक्तांक)

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
अनूप कुमार वार्ष्णेय

संपादक
डा. एम. सी. पांडेय

महत्वपूर्ण निर्णय

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 300, अपवाद 1 – गंभीर और अचानक प्रकोपन – जहां मृत्यु प्रकोपन के अत्यधिक आवेग के अधीन आत्मसंयम की शक्ति से वंचित हो जाने के परिणामस्वरूप कारित की गई हो और यह प्रकोपन गंभीर और अचानक हो वहां अभियुक्त द्वारा कारित मृत्यु हत्या नहीं बल्कि आपराधिक मानव वध है ।

दिनेश और एक अन्य बनाम **राजस्थान राज्य** 81

संसद् के अधिनियम

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ (1) – (25)

पृष्ठ संख्या 1 – 173 **(2012) 2 दा. नि. प.**

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका – जुलाई - सितंबर, 2012 (संयुक्तांक) (पृष्ठ संख्या 1 – 173)

संपादक-मंडल

श्री विनोद कुमार भसीन,
सचिव, विधायी विभाग

डा. संजय सिंह,
अपर सचिव (प्रशा.), विधायी विभाग

डा. आर. डी. मीना, संयुक्त सचिव
राजभाषा खंड

डा. बी. एन. मणि, अधिवक्ता,
(पूर्व संपादक) वि.सा.प्र.

डा. प्रीती सक्सेना, प्रोफेसर,
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

डा. वैभव गोयल, संकायाध्यक्ष
विधि संकाय, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ

श्री सुरेन्द्र शर्मा, प्राचार्य,
विधि विभाग, गुरू गोविद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय, दिल्ली

डा. आर. पी. सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव,
राजभाषा खंड

श्री लालजी प्रसाद,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक,
वि.सा.प्र.

श्री के. जी. अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनूप कुमार वार्ष्णेय,
प्रधान संपादक

श्री महमूद अली खां,
संपादक

श्री जुगल किशोर,
संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पाण्डेय,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री विनोद कुमार आर्य, कमला कान्त, अविनाश शुक्ल और असलम खान

उप-संपादक : सर्वश्री दयाल चन्द ग्रोवर, एम. पी. सिंह, जसवन्त सिंह और बी. के. भटनागर

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 36

वार्षिक : ₹ 135

© 2012 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 (1954 का 37)

– धारा 16(1)(क)(i), धारा 7(i) और धारा 2 (iक)(ड) – मिलावटी दूध का नमूना लिया जाना – मामले के अभिलेख से यह साबित होता है कि खाद्य निरीक्षक द्वारा मिलावटी दूध का नमूना हिलाकर और एक रूप बनाने के पश्चात् लिया गया था तथा यदि नमूने में ली गई खाद्य वस्तु अपमिश्रित पाई जाती है तब अभियुक्त को उक्त धाराओं के अपराध का दोषी ठहराया जाना उचित है ।

रामचन्द बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य, खाद्य निरीक्षक की मार्फत** 128

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2)

– धारा 468 और 469 – कूटरचना – अपराध का संज्ञान – विद्वान् मजिस्ट्रेट कतिपय परिस्थितियों में परिसीमा अवधि की समाप्ति के पश्चात् भी अपराध का संज्ञान ले सकता है यदि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से उसका समाधान हो जाता है कि विलंब को उचित रूप से स्पष्ट किया गया है या न्यायहित में ऐसा करना आवश्यक है ।

दिनेश चन्द्र बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 1

– धारा 472 [सपठित दंड संहिता, 1860 – धारा 447] – चालू रहने वाला अपराध – आपराधिक अतिचार एक चालू रहने वाला अपराध है, अतः विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा आपराधिक अतिचार के अपराध का संज्ञान लिए जाने में परिसीमा काल बाधित नहीं है क्योंकि नया परिसीमा काल हर क्षण प्रारंभ होता है जिसके दौरान अपराध चालू रहता है ।

जसबीर सिंह बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 108

पृष्ठ संख्या

– धारा 482 – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का अभिखंडन – यदि एक ही घटना या उसी संव्यवहार के एक या अधिक भाग से संबंधित दो प्रथम इत्तिला रिपोर्टों में एक जैसे ही अभिकथन हों तो दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित किया जा सकता है ।

प्रदीप कुमार तुली बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 116

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 300 – हत्या – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्त द्वारा प्रयुक्त हथियार की प्रकृति, ऐसी रीति जिस तरह उसने मृतक पर हमला किया, प्रहार की गंभीरता, शरीर का वह मुख्य अंग जिस पर उसने प्रहार किया और हेतुक से यह साबित होने पर कि अभियुक्त का आशय मृतक की हत्या करना था, वहां अभियुक्त का कार्य दंड संहिता की धारा 300 के किसी अपवाद के अधीन न आने के कारण हत्या के अपराध का दोषी ठहराए जाने योग्य है ।

रामशरण रामवगस लोहार बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** 36

– धारा 300, अपवाद 1 – गंभीर और अचानक प्रकोपन – जहां मृत्यु प्रकोपन के अत्यधिक आवेग के अधीन आत्मसंयम की शक्ति से वंचित हो जाने के परिणामस्वरूप कारित की गई हो और यह प्रकोपन गंभीर और अचानक हो वहां अभियुक्त द्वारा कारित मृत्यु हत्या नहीं बल्कि आपराधिक मानव वध है ।

दिनेश और एक अन्य बनाम **राजस्थान राज्य** 81

– धारा 300 और 304 का भाग 2 – हत्या – प्राइवेट प्रतिरक्षा – यदि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से यह प्रकट होता है कि उसी घटना के दौरान अभियुक्त को भी क्षतियां पहुंची थीं और अभियोजन के पास अभियुक्त को पहुंची क्षतियों का कोई स्पष्टीकरण नहीं है तथा यदि यह मान भी लिया जाए कि अभियुक्त को यह जानकारी थी कि उसके द्वारा किए गए प्रहार

से मृतक की मृत्यु कारित हो सकती है फिर भी यह निष्कर्ष नहीं

पृष्ठ संख्या

निकाला जा सकता कि अभियुक्त का आशय मृतक की मृत्यु कारित करने का था, इसलिए, अभियुक्त प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का फायदा पाने का हकदार है ।

दिनेश जगजीवन वदगामा बनाम **गुजरात राज्य** 23

– धारा 302/34 तथा धारा 96 – हत्या – प्राइवेट प्रतिरक्षा का अभिवाक् – अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्यों और अभिलेख पर की सामग्री से स्पष्ट रूप से यह साबित हुआ है कि अभियुक्त ने अपने सगे भाई (मृतक) की हत्या धारदार आयुध से अनेक प्रहार करके पूर्ववर्ती झगड़े के कारण तथा अपने या अपने परिवार के सदस्यों के जीवन या संपत्ति को किसी आसन्न या तात्कालिक संकट की कोई युक्तियुक्त आशंका न होते हुए की थी, विचारण न्यायालय द्वारा की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि उचित है और उसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है – तथापि, अन्य अभियुक्त की अपराध में आलिप्तता साबित नहीं होने पर उसकी दोषमुक्ति उचित है ।

दिलबाग सिंह बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 150

– धारा 307 – हत्या का प्रयत्न – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के परिशीलन से यह स्पष्ट होता है कि अभियुक्त ने अग्न्यायुध से हत्या करने के आशय से पीड़ित व्यक्ति के जांघ पर एक बार और पुन: दोबारा गोली चलाई और सह अपराधी से भी गोली चलाने के लिए कहा, अत: अभियुक्त को उक्त धारा के अधीन हत्या कारित करने के प्रयत्न के अपराध से दोषी ठहराना उचित है ।

हरीश चावला बनाम **राज्य** 55

– धारा 376(2)(क) और धारा 511 – बलात्संग करने का प्रयत्न – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा साक्षियों के साक्ष्य से यह तो साबित होता है कि स्थानीय पुलिस थाने के हेड

कांस्टेबल, अभियोक्त्री जिसकी आयु लगभग 14½ वर्ष थी, को उसके साथ मैथुन करने के लिए एकान्त स्थान में ले गया था, किंतु

पृष्ठ संख्या

चिकित्सीय साक्ष्य के आधार पर गुप्तांग में प्रवेशन के बारे में ठोस संदेह था, अतः अभियुक्त को बलात्संग करने के प्रयत्न के अपराध के लिए दोषी ठहराना उचित होगा ।

चन्द्रकांत विठाल पवार बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य** 64

– धारा 409 [सपठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2)] – लोक सेवक द्वारा आपराधिक न्यासभंग – जहां साक्षियों के साक्ष्य और अभिलेख से यह साबित होता है कि अभियुक्त ने उसे सौंपी गई संपत्ति (सीमेंट की बोरियों) को हिसाब में नहीं लिया और दुर्विनियोजित करके स्वयं के लिए धनीय अभिलाभ अर्जित किया, वहां अभियुक्त को उक्त धाराओं के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाना उचित है ।

मनोहर सिंह बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य** 139

– धारा 451, 147 और 323 – गंभीर क्षति – जहां अभियोजन यह साबित नहीं कर सका कि दोनों पक्षों की लड़ाई में आक्रामक कौन था और एक ही घटना की बाबत प्रति मामलों का विचारण एक ही न्यायालय द्वारा किया जाना था किंतु इस मामले में पृथक्-पृथक् मामले भिन्न-भिन्न न्यायालयों द्वारा विचारित किए गए वहां अभियुक्तों को संदेह का फायदा प्रदान कर दोषमुक्त करना उचित है ।

हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम **सुरेश कुमार और अन्य** 104

– धारा 467 और 468 – कूटरचना – कूटरचना का अपराध गठित करने के लिए अभियुक्त द्वारा छल करने के आशय से कूटरचित दस्तावेज का उपयोग किया जाना आवश्यक है, इसलिए, अभियुक्त के विरुद्ध छल करने का अपराध प्रकट न होने पर उसके विरुद्ध अपराध के विचारण के लिए समन जारी

किया जाना उचित और न्यायसंगत नहीं है ।

दिनेश चन्द्र बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** 1

पृष्ठ संख्या

रणबीर दंड संहिता, 1989 संवत् (1932 ईस्वी)

– धारा 306/498-क – जमानत – जहां सक्षम अधिकारिता रखने वाले न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि अभियुक्त अभियोजन साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ नहीं करेगा और किसी भी रीति से न्याय के अनुक्रम में अड़चन डालेगा वहां वह न्यायालय अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए अभियुक्त को जमानत देने या जमानत देने से इनकार करने के लिए सशक्त है, क्योंकि अभिलेख पर ऐसी कोई बात नहीं लाई गई कि अभियुक्त ने जमानत का दुरुपयोग किया है, अतः जमानत देने के आदेश में हस्तक्षेप करना न्यायोचित नहीं है ।

जागीर सिंह बनाम **जगजीत सिंह और एक अन्य** 50

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 3 – प्रत्यक्षदर्शी साक्षी – यदि अभियोजन यह साबित करने में सफल रहता है कि अभियोजन ने केवल उन साक्षियों को पेश किया जो अपराध किए जाने के समय उपस्थित थे और उनकी उपस्थिति स्वाभाविक थी तो अभियोजन द्वारा पेश प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों को पक्षपाती और हितबद्ध साक्षी नहीं कहा जा सकता ।

दिनेश और एक अन्य बनाम **राजस्थान राज्य** 81

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 47259/88

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमश: चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ को पाठकों की सुविधा के लिए श्रृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रय के लिए उपलब्ध विधि पाठ्य पुस्तकों की सूची

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	कीमत (₹)
1.	भारत का विधिक इतिहास	श्री सुरेन्द्र मधुकर	410	30.00
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि	डा. एन. पी. परांजपे	371	40.00
3.	वाणिज्य विधि	डा. आर. एल. भट्ट	630	108.00
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (तृतीय संस्करण)	श्री शर्मन लाल अग्रवाल	357	40.00
5.	अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. सी. खरे	273	115.00
6.	मानव अधिकार	डा. शिवदत्त शर्मा	340	120.00
7.	दण्ड प्रक्रिया संहिता	न्या. महावीर सिंह	840	200.00

पुस्तकों की सूची जिन पर छूट देने की स्वीकृति प्राप्त की गई है ।

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल दर (₹)	संशोधित दर (₹)
1.	संविदा विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रामगोपाल चतुर्वेदी	552	275.00	137.00
2.	श्रम विधि (तृतीय संस्करण)	श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा	658	452.00	226.00
3.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान (तृतीय संस्करण)	डा. सी. के. पारिख अनुवादक डा. एन. के. पटौरिया	969	293.00	146.00
4.	आधुनिक पारिवारिक विधि	श्री राम शरण माथुर	767	429.00	214.00
5.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय)	संकलन संपादन – ब्रह्मदेव चौबे	209	225.00	112.00
6.	हिन्दू विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रवीन्द्र नाथ	617	425.00	212.00
7.	भारतीय दंड संहिता	डा. रवीन्द्र नाथ	696	741.00	370.00
8.	भारतीय भागीदारी अधिनियम (द्वितीय संस्करण)	श्री माधव प्रसाद वाशिष्ठ	272	165.00	82.00
9.	प्रशासनिक विधि (तृतीय संस्करण)	डा. कैलाश चन्द्र जोशी	635	200.00	100.00
10.	विधिक उपचार (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. के. कपूर	414	311.00	155.00
11.	विधि शास्त्र	डा. शिवदत्त शर्मा	501	580.00	377.00

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दिनेश चन्द्र

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

तारीख 7 मार्च, 2011

न्यायमूर्ति बालाकृष्णन् नारायण

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 468 और 469 – कूटरचना – अपराध का संज्ञान – विद्वान् मजिस्ट्रेट कतिपय परिस्थितियों में परिसीमा अवधि की समाप्ति के पश्चात् भी अपराध का संज्ञान ले सकता है यदि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से उसका समाधान हो जाता है कि विलंब को उचित रूप से स्पष्ट किया गया है या न्यायहित में ऐसा करना आवश्यक है ।

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 467 और 468 – कूटरचना – कूटरचना का अपराध गठित करने के लिए अभियुक्त द्वारा छल करने के आशय से कूटरचित दस्तावेज का उपयोग किया जाना आवश्यक है, इसलिए, अभियुक्त के विरुद्ध छल करने का अपराध प्रकट न होने पर उसके विरुद्ध अपराध के विचारण के लिए समन जारी किया जाना उचित और न्यायसंगत नहीं है ।

पुनरीक्षणकर्ता की नियुक्ति तारीख 9 अगस्त, 1982 को मैसर्स हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड में ऐटा डेयरी, उत्तर प्रदेश में सामान्य कर्मकार के रूप में हुई थी जिसका रजिस्ट्रीकृत कार्यालय हिन्दुस्तान लिवर हाउस, 165/166 बेकबेय, बाम्बे-1 है । नियुक्ति पत्र कंपनी की ओर से कारखाना प्रबंधक आर. एस. राणा द्वारा जारी किया गया । पुनरीक्षणकर्ता की पुष्टि तारीख 22 नवंबर, 1982 के पत्र द्वारा की गई थी जो पुन: कारखाना प्रबंधक आर. एस. राणा द्वारा जारी किया गया था (नियुक्ति पत्र और स्थायीकरण पत्र शपथपत्र के उपाबंध 1 और 2 के रूप में फाइल किया गया) । ऐटा डेयरी का उपक्रम लिफ्टन इंडिया को अंतरित हो गया और पुनरीक्षणकर्ता समेत इसके सभी कर्मचारियों की सेवाएं कंपनी के उपाध्यक्ष

के तारीख 11 मई, 1984 के पत्र (उपाबंध सं. 3) में वर्णित निबंधनों और शर्तों पर लिफ्टन इंडिया को अंतरित हो गईं । वर्ष 1994 में लिफ्टन इंडिया लिमिटेड का समामेलन ब्रुक बोण्ड इंडिया से हो गया और तारीख 4 मार्च, 1994 के लिफ्टन इंडिया लिमिटेड के प्रबंध निदेशक के पत्र (उपाबंध सं. 12) द्वारा पुनरीक्षणकर्ता को यह सूचित किया गया कि वह ब्रुक बोण्ड इंडिया लिमिटेड का कर्मचारी हो गया है । वर्ष 1997 में पुन: ब्रुक बोण्ड इंडिया लिमिटेड हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड को अंतरित हो गया और तारीख 24 सितंबर, 1999 को ऐटा के उपक्रम को हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड द्वारा मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड को बेच दिया गया और इसके सभी कर्मचारियों की सेवाएं मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड को अंतरित हो गईं । अगस्त, 2003 में मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड ने ऐटा के संयंत्र को मैसर्स अनिक इंडस्ट्रीज को बेच दिया । एक ओर पुनरीक्षणकर्ता और दूसरी ओर मैसर्स हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड और मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के बीच मैसर्स अनिक इंडस्ट्रीज लिमिटेड को इसे बेचे जाने पर इसके कर्मचारियों और मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड ऐटा के उपक्रम के बीच हुए समझौते के अधीन स्वैच्छिक सेवानिवृत्त स्कीम निधि प्राप्त करने के पुनरीक्षणकर्ता के हक के बीच विवाद उठा जब पुनरीक्षणकर्ता के नियोक्ता ने इनकार किया कि पुनरीक्षणकर्ता उनका नियमित कर्मचारी था । इसके पश्चात् तारीख 20 दिसंबर, 2007 को पुनरीक्षणकर्ता ने तारीख 20 दिसंबर, 2007 के पत्र (उपाबंध सं. 23) द्वारा मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के प्रबंधक से अपने मूल दस्तावेजों को वापस करने का अनुरोध किया । तारीख 22 सितंबर, 2004 को एक आवेदन (उपाबंध सं. 24) श्रम न्यायालय के समक्ष उत्तर प्रदेश मजदूर फेडरेशन शाखा अलीगढ़ द्वारा सुलह के लिए लाया गया । नियोक्ता द्वारा आक्षेप फाइल किया गया और फेडरेशन द्वारा तारीख 16 अगस्त, 2005 को प्रत्युत्तर (उपाबंध सं. 25) फाइल किया गया । 14 नवंबर, 2005 को नियोक्ता जानबूझकर श्रम न्यायालय के समक्ष सुलह कार्यवाहियों से प्रवृत्त रहे जिस तारीख को औद्योगिक विवाद के अस्तित्व की अभिस्वीकृति की गई थी । 18 जुलाई, 2006 को एक निर्देश विरचित किया गया और श्रम न्यायालय ऐटा को अग्रेषित किया गया तथा 2006 के न्यायनिर्णयन मामला सं. 193, दिनेश चंद बनाम हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड और अन्य को नियोक्ता द्वारा आक्षेप किया गया और तारीख 18 मई, 2007 को पुनरीक्षणकर्ता ने श्रम न्यायालय के समक्ष अपना दावा (उपाबंध सं. 30) प्रस्तुत किया । औद्योगिक विवाद के अस्तित्व के बारे में हिन्दुस्तान लिवर

लिमिटेड और मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड प्रारंभिक आक्षेप (उपाबंध सं. 31 और 32) फाइल किया गया जिस पर पुनरीक्षणकर्ता ने दस्तावेजों द्वारा समर्थित तारीख 8 मई, 2007 को अपना उत्तर (उपाबंध सं. 33) प्रस्तुत किया । पुनरीक्षणकर्ता के दावे के विरुद्ध हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड और न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड अपने-अपने लिखित कथन (उपाबंध सं. 34 और 35) फाइल किए । तारीख 28 मार्च, 2008 को नियोक्ताओं द्वारा लाया गया स्थानांतरण मामला सं. 193 को ऐटा जिला से फिरोजाबाद तारीख 12 अप्रैल, 2010 को अंतरित हो गया और 2010 के न्यायनिर्णयन मामला सं. 26 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । इसके पश्चात् विपक्षी पक्षकार सं. 3 हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड ने भारतीय दंड संहिता की धारा 420, 465, 467, 468 और 471 के अधीन तारीख 25 मई, 2010 को आगरा के मुख्य न्यायाधीश के समक्ष पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध परिवाद फाइल किया जो 2010 के परिवाद मामला सं. 570 (उपाबंध सं. 38) के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । यह पुनरीक्षण आवेदन 2010 के परिवाद मामला सं. 570 में आगरा के विशेष मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित तारीख 8 नवंबर, 2010 के विरुद्ध पुनरीक्षणकर्ता दिनेश चंद्र द्वारा फाइल किया गया है जिसके द्वारा उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 465, 467, 468 और 471 के अधीन दंडनीय अपराधों का विचारण झेलने के लिए पुनरीक्षणकर्ता को समन किया गया । उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 में यह निहित किया गया है कि कोई न्यायालय उपधारा 2 में विनिर्दिष्ट प्रवर्ग के किसी अपराध का संज्ञान परिसीमाकाल के पश्चात् नहीं करेगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468(2) यह विहित करती है कि परिसीमाकाल 6 मास हो यदि अपराध केवल जुर्माने से दंडनीय होगा । एक वर्ष हो, यदि अपराध एक वर्ष से अनधिक की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय है; 3 वर्ष हो यदि अपराध एक वर्ष से अधिक किंतु 3 वर्ष की अनधिक की अवधि के लिए दंडनीय होगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468(3) में यह कहा गया है कि धारा 468 के प्रयोजनों के लिए उन अपराधों के संबंध में जिनका एक साथ विचारण किया जा सकता है, परिसीमाकाल उस अपराध के प्रतिनिर्देश से अवधारित किया जाएगा जो यथास्थिति कठोरतर या कठोरतम दंड से दंडनीय है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 469 यह उपबंध करती है कि किसी अपराधी के संबंध में परिसीमाकाल अपराध की तारीख को प्रारंभ

होगा; या जहां अपराध के किए जाने की जानकारी अपराध द्वारा व्यथित व्यक्ति को या किसी पुलिस अधिकारी को नहीं है वहां उस दिन प्रारंभ होगा जिस दिन प्रथम बार ऐसे अपराध की जानकारी ऐसे व्यक्ति या ऐसे पुलिस अधिकारी को होती है, इनमें से जो भी पहले हो; या जहां यह ज्ञात नहीं है कि अपराध किसने किया है, वहां उस दिन प्रारंभ होगा जिस दिन प्रथम बार अपराधी का पता अपराध द्वारा व्यथित व्यक्ति को या अपराध का अन्वेषण करने वाले पुलिस अधिकारी को चलता है, इनमें से जो भी पहले हो । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 470, 471, 472 और 473 धाराएं हैं जो ऐसी स्थितियों के बारे में हैं जिसके अधीन कतिपय दशाओं में समय को परिसीमा की संगणना के प्रयोजनों के लिए अपवर्जित किया जाता है और ऐसी परिस्थितियां जिसके अधीन न्यायालय परिसीमा की अवधि की समाप्ति के पश्चात् किसी अपराध का संज्ञान ले सकेगा यदि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर यह समाधान हो जाता है कि विलंब को उचित रूप से स्पष्ट किया गया है या यह कि न्यायहित में ऐसा करना आवश्यक है । इस प्रकार इस मामले में जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 465 और 471 के अधीन दंडनीय अपराधों का विद्वान् विशेष मजिस्ट्रेट द्वारा लिए गए संज्ञान का संबंध है । यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 469 के अधीन विहित परिसीमा द्वारा वर्जित होना प्रतीत होता है । अभिकथित रूप से कूटरचित दस्तावेज वर्ष 1982 में तैयार किया गया था और पुनरीक्षणकर्ता और परिवाद कर्ताओं के बीच सुलह कार्यवाही के दौरान सुलह अधिकारी के समक्ष वर्ष 2004 में फाइल किया गया था । परिवाद में उस तारीख जिसका पुनरीक्षणकर्ता द्वारा अभिकथित रूप से कूटरचित दस्तावेज परिवादी की जानकारी में आया, इससे संबंधित परिवाद में किसी अभिकथन का कोई संकेत नहीं है । पुनरीक्षणकर्ताओं के विरुद्ध अभियोजन चलाने में विलंब के बारे में और न ही विलंब की माफी के किसी अनुरोध के बारे में परिवाद में कोई स्पष्टीकरण नहीं है । परिवाद में आत्यंतिक रूप से ऐसी तारीख जिसके प्रश्नगत दस्तावेज पुनरीक्षणकर्ता द्वारा कूटरचित किया गया था और उसके द्वारा अपराध किया गया था, के बारे में कोई बात नहीं है । (पैरा 28, 29 और 30)

कूटरचना का अपराध गठित करने का आवश्यक लक्षण यह है कि अभियुक्त ने किसी दस्तावेज या उसके किसी भाग पर हस्ताक्षर किए, सीलबंद किया या निष्पादित करे या बेईमानी से या कपटपूर्वक निष्पादन द्योतित करने वाला कोई चिह्न लगाया हो जिससे कि यह विश्वास किया

जाए कि ऐसा दस्तावेज या दस्तावेज का भाग, इलैक्ट्रोनिक अभिलेख या अंकीय चिह्न की रचना, हस्ताक्षर, मुद्रांकन, निष्पादन, पारेषण ऐसे व्यक्ति द्वारा या ऐसे व्यक्ति के प्राधिकार द्वारा किया गया था, जिसके द्वारा या जिसके प्राधिकार द्वारा उसकी रचना, हस्ताक्षर, मुद्रांकन या निष्पादन लगाए जाने या पारेषित न होने की बात वह जानता है ; या जो विधिपूर्ण प्राधिकार के बिना रद्दकरण या अन्यथा द्वारा बेईमानी या कपटपूर्वक किसी दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख में उसके किसी तात्विक भाग में इसके बनाए जाने, निष्पादित किए जाने या अंकीय हस्ताक्षर लगाए जाने के पश्चात् ऐसे परिवर्तन के समय जीवित या मृत स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा परिवर्तन करता है या जो बेईमानी से या कपटपूर्वक किसी व्यक्ति से यह जानते हुए किसी दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख पर हस्ताक्षर करवाता है, मुद्रा लगवाता है, निष्पादन करवाता है या परिवर्तन करवाता है या अपने हस्ताक्षर लगाता है कि ऐसा व्यक्ति विकृतचित्तता या मत्तता के कारण या उसके साथ की गई प्रवंचना के कारण वह दस्तावेज की अंतर्वस्तु या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख या परिवर्तन की प्रकृति को नहीं जान सकता या वह नहीं जानता है । भारतीय दंड संहिता की धारा 465 यह उपबंध करती है कि जो कोई कूटरचना करेगा वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि दो वर्ष की हो सकेगी या जुर्माने से या दोनों से दंडित किया जाएगा । भारतीय दंड संहिता की धारा 471 के अधीन अपराध के आवश्यक तत्व इस प्रकार हैं कि दस्तावेज अभियुक्त द्वारा कूटरचित किया जाए और यह जानते हुए या विश्वास करने के कारण रखते हुए कि वह कूटरचित है, कपटपूर्वक या बेईमानी से असली दस्तावेज के रूप में उसके द्वारा उपयोग किया जाए । धारा 471 यह उपबंध करती है जो उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 471 के अधीन अपराध कारित करने से दोषसिद्ध किया जाता है, को उसी रीति से दंडित किया जाएगा मानो उसने कुछ दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख की कूटरचना की हो जिसका यह अभिप्राय है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 471 के अधीन दोषसिद्धि का वही दंड है जो कूटरचना के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 465 के अधीन विहित है अर्थात् 2 वर्ष या जुर्माना या दोनों । इस प्रकार यदि यह मान लिया जाए कि परिवादी भारतीय दंड संहिता की धारा 465 या 471 के अधीन अपराधों को प्रकट करता है उस दशा में यह प्रश्न उठता है कि क्या तारीख 8 नवंबर, 2010 को पूर्वोक्त अपराधों के लिए विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया संज्ञान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के अधीन विहित परिसीमा को दृष्टिगत करते हुए वर्जित है । यद्यपि परिवाद में उस पत्र का

जो पुनरीक्षणकर्ता द्वारा कूटरचित किया गया अभिलिखित है, प्रकट नहीं किया गया है, किंतु अभिलेख पर लाई गई सामग्री से यह स्वीकृत स्थिति उद्भूत होती है कि अभिकथित रूप से कूटरचित दस्तावेज पुनरीक्षणकर्ता द्वारा 9 अगस्त, 1982 को तैयार किया गया था । पुनरीक्षणकर्ता द्वारा उक्त दस्तावेज वर्ष 2004 में किसी समय सुलह कार्यवाही के दौरान सुलह अधिकारी के समक्ष फाइल किया गया था जिसमें परिवादी ने स्वीकृत रूप से भाग लिया था । भारतीय दंड संहिता की धारा 465 और 471 के अधीन अपराध वहीं पूर्ण हो जाता है जब ऐसा दस्तावेज जिसका कूटरचित होना अभिकथित है, फाइल किया जाता है या असली के रूप में उपयोग किया जाता है । इस प्रकार निरापद रूप से यह स्वीकार किया जा सकता है कि धारा 465 और 471 के अधीन अपराध वर्ष 2004 में किया गया था और परिवादी को काफी पहले वर्ष 2004 में उक्त दस्तावेज के बारे में जानकारी मिल गई थी किंतु कूटरचित होना अभिकथित करते हुए प्रश्नगत दस्तावेज की बाबत परिवाद विशेष न्यायाधीश, आगरा के समक्ष 25 मई, 2010 को परिवादी द्वारा फाइल किया गया था और 8 नवंबर, 2010 को विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिया गया था । (पैरा 24, 25, 26 और 27)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1996]	(1996) 1 एस. सी. सी. 542 : **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **ईश्वर परीराजी कालपात्रि और अन्य** ।	18, 20

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक पुनरीक्षण सं. 495.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 401 के अधीन पुनरीक्षण ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री अरविंद श्रीवास्तव और चंदन कुमार

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री सामित गोपाल, जी. एस. चतुर्वेदी और अनिल उत्पल, सहायक सरकारी अधिवक्ता

न्यायमूर्ति बालाकृष्णन् नारायण – पुनरीक्षणकर्ता की ओर से विद्वान् काउंसेल अधिवक्ता श्री अरविंद श्रीवास्तव, श्री चंदन कुमार तथा प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से श्री जी. एस. चतुर्वेदी वरिष्ठ अधिवक्ता जिनकी सहायता श्री

सामित गोपाल विद्वान् काउंसेल कर रहे थे और राज्य की ओर से विद्वान् सहायक सरकारी अधिवक्ता को सुना ।

2. यह पुनरीक्षण आवेदन 2010 के परिवाद मामला सं. 570 में आगरा के विशेष मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा पारित तारीख 8 नवंबर, 2010 के विरुद्ध पुनरीक्षणकर्ता दिनेश चंद्र द्वारा फाइल किया गया है जिसके द्वारा उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 465, 467, 468 और 471 के अधीन दंडनीय अपराधों का विचारण झेलने के लिए पुनरीक्षणकर्ता को शमन किया गया ।

3. प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने न्यायालय में यह कहा कि वे कोई प्रति-शपथपत्र फाइल नहीं करना चाहते और पुनरीक्षण के इस आवेदन को इस प्रक्रम पर ही अंतिम रूप से निपटाया जाए ।

4. पुनरीक्षण ज्ञापन के साथ फाइल शपथपत्र में यथाकथित मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि पुनरीक्षणकर्ता की नियुक्ति तारीख 9 अगस्त, 1982 को मैसर्स हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड में ऐटा डेयरी, उत्तर प्रदेश में सामान्य कर्मकार के रूप में हुई थी जिसका रजिस्ट्रीकृत कार्यालय हिन्दुस्तान लिवर हाउस, 165/166 बेकबेय, बाम्बे-1 है । नियुक्ति पत्र कंपनी की ओर से कारखाना प्रबंधक आर. एस. राणा द्वारा जारी किया गया था पुनरीक्षणकर्ता की पुष्टि तारीख 22 नवंबर, 1982 के पत्र द्वारा की गई थी जो पुन: कारखाना प्रबंधक आर. एस. राणा द्वारा जारी किया गया था (नियुक्ति पत्र और स्थायीकरण पत्र शपथपत्र के उपाबंध 1 और 2 के रूप में फाइल किया गया) । ऐटा डेयरी का उपक्रम लिफ्टन इंडिया को अंतरित हो गया और पुनरीक्षणकर्ता समेत इसके सभी कर्मचारियों की सेवाएं कंपनी के उपाध्यक्ष के तारीख 11 मई, 1984 के पत्र (उपाबंध सं. 3) में वर्णित निबंधनों और शर्तों पर लिफ्टन इंडिया को अंतरित हो गईं ।

5. वर्ष 1994 में लिफ्टन इंडिया लिमिटेड का समामेलन ब्रुक बोण्ड इंडिया से हो गया और तारीख 4 मार्च, 1994 के लिफ्टन इंडिया लिमिटेड के प्रबंध निदेशक के पत्र (उपाबंध सं. 12) द्वारा पुनरीक्षणकर्ता को यह सूचित किया गया कि वह ब्रुक बोण्ड इंडिया लिमिटेड का कर्मचारी हो गया है ।

6. वर्ष 1997 में पुन: ब्रुक बोण्ड इंडिया लिमिटेड हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड को अंतरित हो गया और तारीख 24 सितंबर, 1999 को ऐटा के उपक्रम को हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड द्वारा मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट

लिमिटेड को बेच दिया गया और इसके सभी कर्मचारियों की सेवाएं मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड को अंतरित हो गईं । अगस्त, 2003 में मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड ने ऐटा के संयंत्र को मैसर्स अनिक इंडस्ट्रीज को बेच दिया । एक ओर पुनरीक्षणकर्ता और दूसरी ओर मैसर्स हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड और मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के बीच मैसर्स अनिक इंडस्ट्रीज लिमिटेड को इसे बेचे जाने पर इसके कर्मचारियों और मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड ऐटा के उपक्रम के बीच हुए समझौते के अधीन स्वैच्छिक सेवानिवृत्त स्कीम निधि प्राप्त करने के पुनरीक्षणकर्ता के हक के बीच विवाद उठा जब पुनरीक्षणकर्ता के नियोक्ता ने इनकार किया कि पुनरीक्षणकर्ता उनका नियमित कर्मचारी था । इसके पश्चात् तारीख 20 दिसंबर, 2007 को पुनरीक्षणकर्ता ने तारीख 20 दिसंबर, 2007 के पत्र (उपाबंध सं. 23) द्वारा मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के प्रबंधक से अपने मूल दस्तावेजों को वापस करने का अनुरोध किया । तारीख 22 सितंबर, 2004 को एक आवेदन (उपाबंध सं. 24) श्रम न्यायालय के समक्ष उत्तर प्रदेश मजदूर फेडरेशन शाखा अलीगढ़ द्वारा सुलह के लिए लाया गया । नियोक्ता द्वारा आक्षेप फाइल किया गया और फेडरेशन द्वारा तारीख 16 अगस्त, 2005 को प्रत्युत्तर (उपाबंध सं. 25) फाइल किया गया । 14 नवंबर, 2005 को नियोक्ता जानबूझकर श्रम न्यायालय के समक्ष सुलह कार्यवाहियों से प्रवृत्त रहे जिस तारीख को औद्योगिक विवाद के अस्तित्व की अभिस्वीकृति की गई थी ।

7. 18 जुलाई, 2006 को एक निर्देश विरचित किया गया और श्रम न्यायालय ऐटा को अग्रेषित किया गया तथा 2006 के न्यायनिर्णयन मामला सं. 193, दिनेश चंद बनाम हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड और अन्य को नियोक्ता द्वारा आक्षेप किया गया और तारीख 18 मई, 2007 को पुनरीक्षणकर्ता ने श्रम न्यायालय के समक्ष अपना दावा (उपाबंध सं. 30) प्रस्तुत किया । औद्योगिक विवाद के अस्तित्व के बारे में हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड और मैसर्स न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड प्रारंभिक आक्षेप (उपाबंध सं. 31 और 32) फाइल किया गया जिस पर पुनरीक्षणकर्ता ने दस्तावेजों द्वारा समर्थित तारीख 8 मई, 2007 को अपना उत्तर (उपाबंध सं. 33) प्रस्तुत किया । पुनरीक्षणकर्ता के दावे के विरुद्ध हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड और न्युट्रिया इंडिया प्राइवेट लिमिटेड अपने-अपने लिखित कथन (उपाबंध सं. 34 और 35) फाइल किए । तारीख 28 मार्च, 2008 को नियोक्ताओं द्वारा लाया गया स्थानांतरण मामला सं. 193 को ऐटा जिला से

फिरोजाबाद तारीख 12 अप्रैल, 2010 को अंतरित हो गया और 2010 के न्यायनिर्णयन मामला सं. 26 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । इसके पश्चात् विपक्षी पक्षकार सं. 3 हिन्दुस्तान लिवर लिमिटेड ने भारतीय दंड संहिता की धारा 420, 465, 467, 468 और 471 के अधीन तारीख 25 मई, 2010 के आगरा के द्वारा मुख्य न्यायाधीश के समक्ष पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध परिवाद फाइल किया जो 2010 के परिवाद मामला सं. 570 (उपाबंध सं. 38) के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया ।

8. परिवादी की ओर से स्वपन भट्टाचार्या के कथन (उपाबंध सं. 39) को अभिलिखित करने के पश्चात् निचले न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा पुनरीक्षणकर्ता को विचारण झेलने के लिए शमन किया ।

9. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल ने बलपूर्वक यह आग्रह किया कि आक्षेपित आदेश मामले के तथ्यों और अभिलेख की सामग्रियों पर विवेक का कोई प्रयोग किए बिना नैमित्तिक और यांत्रिक रूप से फाइल किया गया है ।

10. उन्होंने आगे यह निवेदन किया कि यदि मजिस्ट्रेट परिवाद में किए गए अभिकथनों और परिवाद के कथन का परिशीलन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध छल के किसी अपराध का पता नहीं चला तो उसमें भारतीय दंड संहिता की धारा 468 के अधीन पुनरीक्षणकर्ता को शमन करने की कार्यवाही आरंभ करने में विधि की प्रकट गलती की है ।

11. उसने आगे यह निवेदन किया कि धारा 465 और 471 के अधीन अपराधों के लिए उसके द्वारा किया गया संज्ञान स्पष्टत: दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के अधीन मात्र इस कारण से विहित परिसीमा द्वारा वर्जित था कि ऐसा दस्तावेज जो पुनरीक्षणकर्ता द्वारा कूटरचित किया गया अभिकथित है कि तारीख 9 अगस्त, 1982 का है और यह काफी पहले वर्ष 2004 में सुलह कार्यवाहियों के दौरान श्रम न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षणकर्ता द्वारा फाइल किया गया था और यद्यपि प्रत्यर्थी सं. 3 परिवादी को उक्त दस्तावेज की पूरी जानकारी थी फिर भी परिवादी ने कभी इसकी सत्यता को विवादित नहीं किया न ही 2006 के न्यायनिर्णयन मामला सं. 193 में श्रम न्यायालय के समक्ष या सुलह कार्यवाहियों के दौरान उक्त दस्तावेज को कूटरचित और छल रचित अभिकथित नहीं किया तथा आक्षेपित परिवाद 2006 के न्यायनिर्णयन मामला सं. 193 के ऐटा से

फिरोजाबाद में अंतरित होने के पश्चात् पूर्णत: मिथ्या और तंग करने वाले अभिकथनों के साथ विपक्षी पक्षकार सं. 2 द्वारा आगरा में एकमात्र पुनरीक्षणकर्ता जो गरीब कर्मकार है और आगरा में उसके विरुद्ध चलाए गए अभियोजन के प्रति अपने नियोक्ताओं की शक्ति का सामना करने की स्थिति में नहीं है जबकि वह ऐटा में रह रहा है, दुर्भाव पूर्णत: तंग करने के आशय से किया गया था और उस न्यायनिर्णयन मामले में आगे कोई कार्यवाही न करने के लिए उस पर दबाव डालने के लिए फाइल किया गया था जो पुनरीक्षणकर्ता द्वारा परिवादी के विरुद्ध संस्थित किया गया था ।

12. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल ने आगे यह निवेदन किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 465, 467, 468 और 471 के अधीन दंडनीय अपराधों की बाबत परिवाद में किया गया अभिकथन संदिग्ध हैं और मात्र अभिकथन हैं जो उक्त अपराधों के घटकों का गठन नहीं करते या समाधान नहीं करते तथा ऐसे अभिकथनों के आधार पर आपराधिक प्रक्रिया का आरंभ किया जाना न्याय का दुरुपयोग और पुनरीक्षणकर्ता के प्रति घोर अन्याय की कोटि में आता है ।

13. उन्होंने आगे यह निवेदन किया कि पुनरीक्षणकर्ता की बाबत परिवाद में यह अभिकथित करते हुए पैरा 20 में परिवादी ने केवल यह अभिकथन किया गया है कि तारीख 9 अगस्त, 1982 का दस्तावेज कूटरचना पर आधारित है और श्री आर. एन. रामानाथन का हस्ताक्षर कूटरचित है । भारतीय दंड संहिता की धारा 463 के अधीन कूटरचना को परिभाषित किया गया है जिसमें किसी कपटपूर्ण दस्तावेज को तैयार करने का आशय अनिवार्य है । किसी व्यक्ति को नुकसान या क्षति कारित करने या किसी दावे का समर्थन करने के आशय से कूटरचित दस्तावेज को बनाना कूटरचना के अपराध के लिए आवश्यक है । ऐसा कोई अभिकथन नहीं किया गया है कि पुनरीक्षणकर्ता ने नुकसान कारित करने या किसी दावे का समर्थन करने के आशय से कोई मिथ्या दस्तावेज बनाया । मिथ्या दस्तावेज बनाने को भारतीय दंड संहिता की धारा 464 में परिभाषित किया गया है जिसका अभी समाधान नहीं होता है । ऐसा कोई अभिकथन नहीं है कि पुनरीक्षणकर्ता ने बेईमानी से या कपट से यह विश्वास कारित करने के आशय से तारीख 9 अगस्त, 1982 का दस्तावेज बनाया कि ऐसा दस्तावेज किसी व्यक्ति के प्राधिकार द्वारा बनाया गया था जिसके प्राधिकार द्वारा वह जानता है कि यह नहीं बनाया गया था । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि

भारतीय दंड संहिता की धारा 463 या 464 के किसी भी लक्षण का समाधान नहीं हुआ है । जहां तक यह कि क्या दस्तावेज 9 अगस्त, 1982 एक मूल्यवान प्रतिभूति है कि या इसका मूल्यवान प्रतिभूति होना तात्पर्यित है इसके माध्यम से या कोई विधिक अधिकार सृजित किया गया है, परिवाद में ऐसा कोई अभिकथन नहीं है । जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 468 का संबंध है, मजिस्ट्रेट ने स्वयं छल के अपराध से कपट किया है ।

14. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल ने अंत में यह निवेदन किया कि यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि निचले न्यायालय द्वारा लिया गया भारतीय दंड संहिता की धारा 465 और 471 के अधीन अपराधों का संज्ञान परिसीमा द्वारा वर्जित है तो परिवाद पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध कोई अन्य अपराध प्रकट नहीं करता और उस दशा में आक्षेपित समन करने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है ।

15. श्री जी. एस. चतुर्वेदी विद्वान् वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह निवेदन किया कि परिवाद में किए गए अभिकथनों और अभिलेख की अन्य सामग्रियों से यह नहीं कहा जा सकता कि पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध कोई अपराध नहीं प्रकट होता ।

16. उन्होंने आगे यह निवेदन किया कि समन करने के प्रक्रम पर केवल प्रथमदृष्ट्या मामला होना देखा जाता है और अभियुक्त के विवादित प्रतिवाद की परीक्षा नहीं की जाती ।

17. उनका अगला निवेदन यह है कि ऐसे दस्तावेज जिसका पुनरीक्षणकर्ता ने अपने निवेदनों के समर्थन में व्यापक अवलंब लिया है और जो पुनरीक्षण के ज्ञापन के साथ फाइल शपथपत्र के उपाबंध के रूप में फाइल किए गए हैं, को विधि के अनुसार साबित किया जाना है और इस प्रक्रम पर परीक्षण नहीं किया जा सकता है क्योंकि परिवाद में किए गए अभिकथनों की सत्यता का पक्षकारों द्वारा विनिश्चय दिए गए उनके साक्ष्य के पश्चात् ही और परिवादी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 244 के अधीन अपने साक्ष्य देने के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 245(1) के अधीन उन्मोचन के प्रक्रम पर भी किया जा सकता है ।

18. श्री चतुर्वेदी ने आगे यह निवेदन किया कि किसी परिवाद को मात्र दुर्भाव के आधार पर या इस आधार पर अभिखंडित नहीं किया जा सकता है । परिवादी के विरुद्ध किसी मामले का अभियोजन करने से

अभियुक्त को निवारित करने के आशय से तब तक अभियुक्त द्वारा की गई कार्यवाही के प्रत्युत्तर के रूप में नहीं फाइल किया जाता है जब तक परिवाद में किए गए प्रकथनों और अभिकथनों से अभियुक्त द्वारा किसी अपराध का किया जाना प्रकट नहीं होता । इस मामले में परिवादी ने यह विशिष्ट मामला उठाया है कि पुनरीक्षणकर्ता ने कपटपूर्ण ढंग से उसके नियुक्ति पत्र की कूटरचना की थी जो परिवादी कंपनी द्वारा कभी जारी नहीं किया गया था या ऐसे अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित नहीं था जिसके हस्ताक्षर उक्त पत्र पर होना तात्पर्यित है और इस प्रकार निचले न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 465, 467, 468 और 471 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए पुनरीक्षणकर्ता को विचारण का सामना करने के लिए समन करने में कोई अवैधता या अनियमितता नहीं की है । अपने पूर्वोक्त निवेदन के समर्थन में श्री चतुर्वेदी ने **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **ईश्वर परीराजी कालपात्रि और अन्य**[1] वाले मामले में सर्वोच्च न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लिया ।

19. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा दिए गए निवेदनों की सावधानीपूर्वक परीक्षा की और अभिलेख पर ली गई अन्य सामग्री तथा आक्षेपित आदेश और पक्षकारों की ओर से उद्धृत निर्णयज विधि का परिशीलन किया ।

20. यह मुद्दा कि क्या आपराधिक अभियोजन को दुर्भाव के आधार पर या इस कारण अभिखंडित किया जा सकता है कि इसे इस बात के होते हुए कि परिवादी के विरुद्ध किसी मामले का अभियोजन करने से किसी अभियुक्त को निवारित करने के आशय से अभियुक्त द्वारा की गई कार्रवाई की घोर निन्दा के रूप में संस्थित किया गया है कि अभियुक्त द्वारा किसी अपराध का होना परिवाद में प्रकट करते हैं, अब अनिर्णीत विषय नहीं रहा है और **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **ईश्वर परीराजी कालपात्रि और अन्य**[1] वाले मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय द्वारा निहित कर दिया गया है । सर्वोच्च न्यायालय के पूर्वोक्त निर्णय के पैरा 22 में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "22. वस्तुत: वर्तमान जैसे मामले में दुर्भाव का प्रश्न कतई सुसंगत नहीं है यदि किया गया परिवाद सही है और अपराध किया गया है जो न्यायालय में स्थापित हो सकता है तो इसका कोई महत्व

---

[1] (1996) 1 एस. सी. सी. 542.

नहीं है । परिवादी ऐसा व्यक्ति था जिससे उसकी दुश्मनी थी या यह कि वह दुर्भाव का दोषी था । यदि ऐसे तथ्य जो अपराध या अवचार का किया जाना साबित करते हैं तत्समय विद्यमान हैं तो अभियोजन मात्र इस कारण असफल नहीं हो सकता कि परिवादी अभियुक्त के विरुद्ध परिवादी या अभियोजन का विद्वेष था । दुर्भाव के अभिकथनों की सत्यता या साक्ष्य परीक्षा का निर्धारण करते समय सुसंगत नहीं हो सकते हैं । किंतु मात्र यह तथ्य कि परिवादी दुर्भाव का दोषी है, अभियोजन अभिखंडित करने का कोई आधार नहीं होगा । इस मामले में तथ्यों के विनिर्दिष्ट प्रकथन किए गए हैं, जिसके द्वारा यह अभिकथन किया गया था कि प्रत्यर्थी के पास अननुपातिक रूप से काफी आस्तियां थीं । उसे दंडित करने की दृष्टि से प्रत्यर्थी के विरुद्ध अभियोजन चलाए जाने अपीलार्थी का दुर्भावपूर्ण आशय, सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय को ऐसे साक्ष्य की परीक्षा करने से निवारित करने का कोई कारण नहीं हो सकता जो उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए हैं, यह निष्कर्ष निकालने के लिए कि क्या कोई अपराध किया गया था या नहीं । दुर्भाव के अभिकथन मुखबिर के विरुद्ध पी. पी. शर्मा वाले मामले में भी किए गए थे । इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जब कोई इत्तिला पुलिस थाने में दर्ज कराई जाती है और कोई अपराध दर्ज किया जाता है तो इत्तिलाकर्ता के दुर्भाव का द्वितीयक महत्व होगा । न्यायालय में अन्वेषण के दौरान एकत्र की गई सामग्री और प्रस्तुत साक्ष्य है जो अभियुक्त व्यक्ति के भाग्य का विनिश्चय करता है । इत्तिलाकर्ता के विरुद्ध दुर्भाव के अभिकथन महत्वहीन हैं और स्वयं कार्यवाहियों को अभिखंडित करने का आधार नहीं हो सकते ।"

21. इस प्रकार, उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए पुनरीक्षणकर्ता के अभियोजन का तब तक मात्र दुर्भाव के आधार पर अभिखंडित नहीं किया जा सकता जब तक पुनरीक्षणकर्ता यह साबित करने में सक्षम न हो कि परिवाद में किए गए अभिकथन से पुनरीक्षण द्वारा किसी अपराध के किए जाने का प्रकटन नहीं होता या लिया गया संज्ञान परिसीमा द्वारा वर्जित था ।

22. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा दिए गए संबद्ध निवेदनों का मूल्यांकन करने और यह परीक्षा करने के लिए कि क्या परिवाद में किए गए अभिकथनों को यदि उन्हें उनकी समग्रता में विचार किया जाता है और

सही होना स्वीकार किया जाता है तो किसी अपराध का गठन करते हैं और क्या विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 465 और 471 के अधीन अपराधों के संबंध में लिया गया संज्ञान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 द्वारा वर्जित था । भारतीय दंड संहिता और दंड प्रक्रिया संहिता के सुसंगत उपबंधों को उद्धृत करना उपयोगी होगा । आक्षेपित आदेश द्वारा पुनरीक्षणकर्ता को भारतीय दंड संहिता की धारा 465, 467, 468 और 471 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए विचारण का सामना करने हेतु समन किया गया है किंतु विद्वान् मजिस्ट्रेट ने आक्षेपित आदेश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 420 के अधीन पुनरीक्षणकर्ता को समन करने के प्रक्रम पर पुनरीक्षणकर्ता द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन अपराध का किया जाना प्रकट नहीं होता । भारतीय दंड संहिता की धारा 465, 467, 468 और 471 इस प्रकार है :–

> "465. **कूटरचना के लिए दंड** – जो कोई कूटरचना करेगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनों से दंडित किया जाएगा ।
>
> 467. **मूल्यवान प्रतिभूति, बिल, इत्यादि की कूटरचना** – जो कोई किसी ऐसी दस्तावेज की, जिसका कोई मूल्यवान प्रतिभूति या विल या पुत्र के दत्तकग्रहण का प्राधिकार होना तात्पर्यित हो, अथवा जिसका किसी मूल्यवान प्रतिभूति की रचना या अन्तरण का, या उस पर के मूलधन, ब्याज या लाभांश को प्राप्त करने का, या किसी धन, जंगम सम्पत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति को प्राप्त करने या परिदत्त करने का प्राधिकार होना तात्पर्यित हो, अथवा किसी दस्तावेज को, जिसका धन दिए जाने की अभिस्वीकृति करने वाला निस्तारणपत्र या रसीद होना, या किसी जंगम सम्पत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के परिदान के लिए निस्तारणपत्र या रसीद होना तात्पर्यित हो, कूटरचना करेगा वह आजीवन कारावास से, या दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।
>
> 468. **छल के प्रयोजन से कूटरचना** – जो कोई कूटरचना इस आशय से करेगा कि वह दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख जिसकी कूटरचना की जाती है, छल के प्रयोजन से उपयोग में लाई जाएगी, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष

तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा, और जुर्माने से भी दंडनीय होगा ।

471. **कूटरचित दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख का असली के रूप में उपयोग में लाना** – जो कोई किसी ऐसी दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख को, जिसके बारे में वह यह जानता या विश्वास करने का कारण रखता हो कि वह कूटरचित दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख है, कपटपूर्वक या बेईमानी से असली के रूप में उपयोग में लाएगा, वह उसी प्रकार दंडित किया जाएगा, मानो उसने ऐसी दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख की कूटरचना की हो ।"

23. छल और कूटरचना के अपराधों को भारतीय दंड संहिता की धारा 415 और 463 के अधीन परिभाषित किया गया है जो इस प्रकार हैं : –

"415. **छल** – जो कोई किसी व्यक्ति से प्रवंचना कर उस व्यक्ति को, जिसे इस प्रकार प्रवंचित किया गया है, कपटपूर्वक या बेईमानी से उत्प्रेरित करता है कि वह कोई संपत्ति किसी व्यक्ति को परिदत्त कर दे, या वह सम्मति दे दे कि कोई व्यक्ति किसी संपत्ति को रख रखे या साशय उस व्यक्ति को, जिसे इस प्रकार प्रवंचित किया गया है, उत्प्रेरित करता है कि वह ऐसा कोई कार्य करे, या करने का लोप करे, जिसे वह यदि उसे हर प्रकार प्रवंचित न किया गया होता तो, न करता, या करने का लोप न करता, और जिस कार्य या लोप से उस व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक, ख्याति संबंधी या साम्पत्तिक नुकसान या अपहानि कारित होती है, या कारित होनी सम्भाव्य है, वह 'छल' करता है, यह कहा जाता है ।

463. **कूटरचना** – जो कोई, किसी मिथ्या दस्तावेज या मिथ्या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख अथवा दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख के किसी भाग को इस आशय से रचता है कि लोक को या किसी व्यक्ति को नुकसान या क्षति कारित की जाए, या किसी दावे या हक का समर्थन किया जाए, या यह कारित किया जाए कि कोई व्यक्ति संपत्ति अलग करे या कोई अभिव्यक्त या विवक्षित संविदा करे या इस आशय से रचता है कि कपट करे, या कपट किया जा सके, वह कूटरचना करता है ।"

24. कूटरचना का अपराध गठित करने का आवश्यक लक्षण यह है

कि अभियुक्त ने किसी दस्तावेज या उसके किसी भाग पर हस्ताक्षर किए, सीलबंद किया या निष्पादित करे या बेईमानी से या कपटपूर्वक निष्पादन द्योतित करने वाला कोई चिन्ह लगाया हो जिससे कि यह विश्वास किया जाए कि ऐसा दस्तावेज या दस्तावेज का भाग, इलैक्ट्रोनिक अभिलेख या अंकीय चिह्न की रचना, हस्ताक्षर, मुद्रांकन, निष्पादन, पारेषण ऐसे व्यक्ति द्वारा या ऐसे व्यक्ति के प्राधिकार द्वारा किया गया था, जिसके द्वारा या जिसके प्राधिकार द्वारा उसकी रचना, हस्ताक्षर, मुद्रांकन या निष्पादन लगाए जाने या पारेषित न होने की बात वह जानता है ; या जो विधिपूर्ण प्राधिकार के बिना रद्दकरण या अन्यथा द्वारा बेईमानी या कपटपूर्वक किसी दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख में उसके किसी तात्विक भाग में इसके बनाए जाने, निष्पादित किए जाने या अंकीय हस्ताक्षर लगाए जाने के पश्चात् ऐसे परिवर्तन के समय जीवित या मृत स्वयं या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा परिवर्तन करता है या जो बेईमानी से या कपटपूर्वक किसी व्यक्ति से यह जानते हुए किसी दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख पर हस्ताक्षर करवाता है, मुद्रा लगवाता है, निष्पादन करवाता है या परिवर्तन करवाता है या अपने हस्ताक्षर लगाता है कि ऐसा व्यक्ति विकृतचित्तता या मत्तता के कारण या उसके साथ की गई प्रवंचना के कारण वह दस्तावेज की अंतर्वस्तु या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख या परिवर्तन की प्रकृति को नहीं जान सकता या वह नहीं जानता है ।

25. भारतीय दंड संहिता की धारा 465 यह उपबंध करती है कि जो कोई कूटरचना करेगा वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि दो वर्ष की हो सकेगी या जुर्माने से या दोनों से दंडित किया जाएगा ।

26. भारतीय दंड संहिता की धारा 471 के अधीन अपराध के आवश्यक तत्व इस प्रकार हैं कि दस्तावेज अभियुक्त द्वारा कूटरचित किया जाए और यह जानते हुए या विश्वास करने के कारण रखते हुए कि वह कूटरचित है, कपटपूर्वक या बेईमानी से असली दस्तावेज के रूप में उसके द्वारा उपयोग किया जाए । धारा 471 यह उपबंध करती है जो उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 471 के अधीन अपराध कारित करने से दोषसिद्ध किया जाता है, को उसी रीति से दंडित किया जाएगा मानो उसने कुछ दस्तावेज या इलैक्ट्रोनिक अभिलेख की कूटरचना की हो जिसका यह अभिप्राय है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 471 के अधीन दोषसिद्धि का वही दंड है जो कूटरचना के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 465 के

अधीन विहित है अर्थात् 2 वर्ष या जुर्माना या दोनों ।

27. इस प्रकार यदि यह मान लिया जाए कि परिवादी भारतीय दंड संहिता की धारा 465 या 471 के अधीन अपराधों को प्रकट करता है उस दशा में यह प्रश्न उठता है कि क्या तारीख 8 नवंबर, 2010 को पूर्वोक्त अपराधों के लिए विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा लिया गया संज्ञान दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 के अधीन विहित परिसीमा को दृष्टिगत करते हुए वर्जित है । यद्यपि परिवाद में उस पत्र का जो पुनरीक्षणकर्ता द्वारा कूटरचित किया गया अभिलिखित है, प्रकट नहीं किया गया है, किंतु अभिलेख पर लाई गई सामग्री से यह स्वीकृत स्थिति उद्भूत होती है कि अभिकथित रूप से कूटरचित दस्तावेज पुनरीक्षणकर्ता द्वारा 9 अगस्त, 1982 को तैयार किया गया था । पुनरीक्षणकर्ता द्वारा उक्त दस्तावेज वर्ष 2004 में किसी समय सुलह कार्यवाही के दौरान सुलह अधिकारी के समक्ष फाइल किया गया था जिसमें परिवादी ने स्वीकृत रूप से भाग लिया था । भारतीय दंड संहिता की धारा 465 और 471 के अधीन अपराध वहीं पूर्ण हो जाता है जब ऐसा दस्तावेज जिसका कूटरचित होना अभिकथित है, फाइल किया जाता है या असली के रूप में उपयोग किया जाता है । इस प्रकार निरापद रूप से यह स्वीकार किया जा सकता है कि धारा 465 और 471 के अधीन अपराध वर्ष 2004 में किया गया था और परिवादी को काफी पहले वर्ष 2004 में उक्त दस्तावेज के बारे में जानकारी मिल गई थी किंतु कूटरचित होना अभिकथित करते हुए प्रश्नगत दस्तावेज की बाबत परिवाद विशेष न्यायाधीश, आगरा के समक्ष 25 मई, 2010 को परिवादी द्वारा फाइल किया गया था और 8 नवंबर, 2010 को विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिया गया था ।

28. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 में यह निहित किया गया है कि कोई न्यायालय उपधारा 2 में विनिर्दिष्ट प्रवर्ग के किसी अपराध का संज्ञान परिसीमाकाल के पश्चात् नहीं करेगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468(2) यह विहित करती है कि परिसीमाकाल 6 मास हो यदि अपराध केवल जुर्माने से दंडनीय होगा । एक वर्ष हो, यदि अपराध एक वर्ष से अनधिक की अवधि के लिए कारावास से दंडनीय है ; 3 वर्ष हो यदि अपराध एक वर्ष से अधिक किंतु 3 वर्ष की अनधिक की अवधि के लिए दंडनीय होगा । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468(3) में यह कहा गया है कि धारा 468 के प्रयोजनों के लिए उन अपराधों के संबंध में जिनका एक साथ विचारण किया जा सकता है, परिसीमाकाल उस अपराध के

प्रतिनिर्देश से अवधारित किया जाएगा जो यथास्थिति कठोरतर या कठोरतम दंड से दंडनीय है ।

29. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 469 यह उपबंध करती है कि किसी अपराधी के संबंध में परिसीमाकाल अपराध की तारीख को प्रारंभ होगा ; या जहां अपराध के किए जाने की जानकारी अपराध द्वारा व्यथित व्यक्ति को या किसी पुलिस अधिकारी को नहीं है वहां उस दिन प्रारंभ होगा जिस दिन प्रथम बार ऐसे अपराध की जानकारी ऐसे व्यक्ति या ऐसे पुलिस अधिकारी को होती है, इनमें से जो भी पहले हो ; या जहां यह ज्ञात नहीं है कि अपराध किसने किया है, वहां उस दिन प्रारंभ होगा जिस दिन प्रथम बार अपराधी का पता अपराध द्वारा व्यथित व्यक्ति को या अपराध का अन्वेषण करने वाले पुलिस अधिकारी को चलता है, इनमें से जो भी पहले हो । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 470, 471, 472 और 473 धाराएं हैं जो ऐसी स्थितियों के बारे में हैं जिसके अधीन कतिपय दशाओं में समय को परिसीमा की संगणना के प्रयोजनों के लिए अपवर्जित किया जाता है और ऐसी परिस्थितियां जिसके अधीन न्यायालय परिसीमा की अवधि की समाप्ति के पश्चात् किसी अपराध का संज्ञान ले सकेगा यदि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर यह समाधान हो जाता है कि विलंब को उचित रूप से स्पष्ट किया गया है या यह कि न्यायहित में ऐसा करना आवश्यक है ।

30. इस प्रकार इस मामले में जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 465 और 471 के अधीन दंडनीय अपराधों का विद्वान् विशेष मजिस्ट्रेट द्वारा लिए गए संज्ञान का संबंध है । यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 469 के अधीन विहित परिसीमा द्वारा वर्जित होना प्रतीत होता है । अभिकथित रूप से कूटरचित दस्तावेज वर्ष 1982 में तैयार किया गया था और पुनरीक्षणकर्ता और परिवाद कर्ताओं के बीच सुलह कार्यवाही के दौरान सुलह अधिकारी के समक्ष वर्ष 2004 में फाइल किया गया था । परिवाद में उस तारीख जिसका पुनरीक्षणकर्ता द्वारा अभिकथित रूप से कूटरचित दस्तावेज परिवादी की जानकारी में आया, इससे संबंधित परिवाद में किसी अभिकथन का कोई संकेत नहीं है । पुनरीक्षणकर्ताओं के विरुद्ध अभियोजन चलाने में विलंब के बारे में और न ही विलंब की माफी के किसी अनुरोध के बारे में परिवाद में कोई स्पष्टीकरण नहीं है । परिवाद में आत्यंतिक रूप से ऐसी तारीख जिसके प्रश्नगत दस्तावेज पुनरीक्षणकर्ता द्वारा कूटरचित किया गया था और उसके द्वारा अपराध किया गया था, के बारे में कोई बात नहीं है । अब मैं आगे यह परीक्षा करता हूं कि क्या परिवाद में किया

गया अभिकथन भारतीय दंड संहिता की धारा 467, 468 और 471 के अधीन अपराधों के तत्वों को पूरा करते हैं ।

31. भारतीय दंड संहिता की धारा 467 के अधीन अपराध गठित करने के आवश्यक लक्षण भारतीय दंड संहिता की धारा 465 के अधीन अपराध गठित करने के आवश्यक लक्षण के अलावा हैं जो इस प्रकार हैं :–

(i) कोई मूल्यवान प्रतिभूति,

ख(i) पुत्र के दत्तक ग्रहण का प्राधिकार किसी व्यक्ति को देने वाला होगा जिससे मूल्यवान प्रतिभूति का अंतरण किया जाना होगा,

(ii) मूल्यवान प्रतिभूति पर मूलधन, ब्याज या लाभांश को प्राप्त करने वाला,

(iii) किसी धन, जंगम संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति को प्राप्त करने वाला,

(iv) धन के संदाय की अभिस्वीकृति करने वाला निस्तारण पत्र होगा,

(v) किसी जंगम संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के परिदान के लिए निस्तारण पत्र या रसीद होना तात्पर्य होगा ।

32. भारतीय दंड संहिता की धारा 468 के अधीन अपराध गठित करने के अपेक्षित तत्व इस प्रकार हैं :–

(i) यह कि प्रश्नगत दस्तावेज कूटरचित होगा,

(ii) अभियुक्त ने इसकी कूटरचना की,

(iii) उसने कूटरचना इस आशय से की होगी कि वह छल के प्रयोजन में इसका उपयोग करेगा ।

33. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक यह तर्क किया कि परिवाद भारतीय दंड संहिता की धारा 467 और 468 के अधीन अपराध किए जाने को प्रकट नहीं करता । अपने निवेदनों को पुष्ट करते हुए आगे उन्होंने परिवाद के पैरा 20 को निर्दिष्ट किया और यह प्राख्यान किया क्योंकि स्वयं विद्वान् विशेष न्यायाधीश ने यह निष्कर्ष निकाला था कि भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध अपराध नहीं बनता जिसका यह अर्थ है कि परिवाद के अभिकथन और दंड

प्रक्रिया संहिता की धारा 200 के अधीन अभिलिखित परिवादी के कथन किए गए अभिकथन पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 415 के अधीन अपराध नहीं बनाते जो भारतीय दंड संहिता की धारा 468 के अधीन अपराध गठित करने की पूर्वापेक्षा है । अत: पुनरीक्षणकर्ता को उक्त अपराधों के लिए विचारण नहीं किया जा सकता ।

34. उन्होंने आगे जोरदार रूप से आग्रह किया कि ऐसे दस्तावेज जिनका अभिकथित रूप से पुनरीक्षणकर्ता द्वारा कूटरचित किया जाना अभिकथित है भारतीय दंड संहिता की धारा 467 के अधीन वर्णित किसी दस्तावेज के अन्तर्गत नहीं आता । अत: पुनरीक्षणकर्ता को पूर्वोक्त अपराध के लिए विचारण का सामना करने के लिए समन नहीं किया जा सकता ।

35. परिवादी के विद्वान् काउंसेल द्वारा पुनरीक्षणकर्ता के पूर्वोक्त निवेदनों का उत्तर यह है कि नियुक्ति पत्र एक मूल्यवान प्रतिभूति है और अपने निवेदन को पुष्ट करने के लिए उन्होंने भारतीय दंड संहिता की धारा 30 में दी गई "मूल्यवान प्रतिभूति" की परिभाषा के शब्दों की ओर इस न्यायालय का ध्यान आकृष्ट किया और यह आग्रह किया कि नियुक्ति पत्र की कूटरचना करना मूल्यवान प्रतिभूति की कूटरचना करने के बराबर होगा।

36. परिवादी के विद्वान् काउंसेल की दलील की परीक्षा करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 30 जो मूल्यवान प्रतिभूति को परिभाषित करती है, को नीचे दोहराया जा रहा है :–

> "30. "**मूल्यवान प्रतिभूति**" – "मूल्यवान प्रतिभूति" शब्द उस दस्तावेज के द्योतक हैं, जो ऐसी दस्तावेज है, या होनी तात्पर्यित है, जिसके द्वारा कोई विधिक अधिकार सृजित, विस्तृत, अन्तरित, निर्बन्धित, निर्वापित किया जाए, छोड़ा जाए या जिसके द्वारा कोई व्यक्ति यह अभिस्वीकार करता है कि वह विधि दायित्व के अधीन है, या अमुक विधिक अधिकार नहीं रखता है ।"

37. मूल्यवान प्रतिभूति की परिभाषा की परीक्षा करने के बाद विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या ऐसे दस्तावेज जिसका पुनरीक्षणकर्ता द्वारा कूटरचित किया जाना अभिकथित है, भारतीय दंड संहिता की धारा 30 के अधीन दी गई मूल्यवान प्रतिभूति परिभाषा के अन्तर्गत आता है और क्या निचले न्यायालय ने धारा 467 और 468 के अधीन अपराधों का संज्ञान लेने के पहले परिवाद में किए गए अभिकथनों और अभिलेख के अन्य सामग्री के प्रतिनिर्देश से मामले के पूर्वोक्त पहलू की परीक्षा की थी या नहीं ।

38. मैंने सावधानीपूर्वक आक्षेपित आदेश का परिशीलन किया किंतु मैं ऐसे किसी विचार पर की गई चर्चा का उल्लेख नहीं पाता हूं ।

39. मेरी राय में पूर्वोक्त अपराधों के अधीन संज्ञान लेने के पूर्व निचले न्यायालय को यह परीक्षा करना लाजिमी था कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 30 के अधीन यथापरिभाषित मूल्यवान प्रतिभूति की परिभाषा के अन्तर्गत ऐसा दस्तावेज आता है जो भारतीय दंड संहिता की धारा 367 के अधीन अपराध गठित करने के लिए पुनरीक्षणकर्ता द्वारा अभिकथित रूप से कूटरचित किया गया है । भारतीय दंड संहिता की धारा 467 के अधीन संज्ञान लेते समय उस पर विचार नहीं किया गया और पूर्वोक्त अपराध के अधीन विचारण का सामना करने के लिए पुनरीक्षणकर्ता के प्रति प्रक्रिया जारी करने की पारिणामिक विषय को कायम नहीं रखा जा सकता ।

40. विचारार्थ अंतिम प्रश्न यह है कि क्या परिवाद में किया गया अभिकथन और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 200 के अधीन अभिलिखित स्वपन भट्टाचार्या का कथन भारतीय दंड संहिता की धारा 468 के अधीन अपराध का उल्लेख करता है जैसाकि पहले उल्लेख किया गया है । निचले न्यायालय की यह दृढ़ राय थी कि भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन अपराध संज्ञान लेने के प्रक्रम पर यह प्रकट नहीं किया गया था जिसका यह अर्थ है कि न्यायालय परिवाद में किए गए अभिकथनों और अभिलेख पर लाई गई सामग्री के परिशीलन से यह समाधान नहीं हो गया था कि पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन अपराध का पता चला था क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 468 के अधीन अपराध गठित करने का एक आवश्यक लक्षण यह है कि कूटरचित दस्तावेज का आशय अभियुक्त द्वारा छल करने के लिए उपयोग करने हेतु किया जाना चाहिए और यदि अभियुक्त के विरुद्ध छल का अपराध प्रकट नहीं होता है तो प्रश्न यह उठता है कि क्या उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 468 के अधीन अपराध का विचारण झेलने के लिए समन किया जा सकता है । पुन: विचारण न्यायालय पर दंड संहिता की धारा 468 के अधीन संज्ञान लेने के अन्य पूर्वोक्त आकस्मिकता पर अपने विवेक पर असफल रहा ।

41. पूर्वगामी चर्चा को ध्यान में रखते हुए मेरी यह राय है कि आक्षेपित आदेश को कायम नहीं रखा जा सकता और यह अपास्त किए जाने योग्य है । मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 467 और 468 के

अधीन न्यायालय द्वारा लिए गए संज्ञान का संबंध है, पर विचारण न्यायालय द्वारा पुनर्विचार किए जाने की अपेक्षा है ।

42. पूर्वोक्त कारणों से यह पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया जाता है । विशेष मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, आगरा द्वारा पारित तारीख 8 नवंबर, 2010 के आदेश को अपास्त किया जाता है ।

43. विशेष मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, आगरा को विधि के अनुसार और यहां उपरोक्त व्यक्त मताभिव्यक्तियों के आलोक में मामले में नए सिरे से आदेश पारित करने का निदेश दिया जाता है ।

44. विचारण न्यायालय यदि परिवाद में किए गए अभिकथनों और अभिलेख की सामग्री पर पुनर्विचार करने और इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 467 और 468 के अधीन प्रथमदृष्ट्या अपराध बनते हैं, की दशा में न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धारा 467 और 468 के अधीन संज्ञान लेते हुए नए सिरे से आदेश पारित कर सकेगा और उस दशा में न्यायालय भारतीय दंड संहिता की धारा 465 और 471 के अधीन अपराधों और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468(3) के उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, का संज्ञान ले सकता है और तद्नुसार प्रक्रिया जारी कर सकता है ।

45. इस बाबत आवश्यक कार्यवाही इस आदेश की प्रमाणित प्रति उसके समक्ष प्रस्तुत करने की तारीख से 1 मास की अवधि के भीतर न्यायालय द्वारा पूरी की जाएगी ।

पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया गया ।

पां.

दिनेश जगजीवन वदगामा

बनाम

गुजरात राज्य

तारीख 8 अप्रैल, 2011

न्यायमूर्ति ए. एल. दवे और न्यायमूर्ति आर. एम. छाया

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 300 और 304 का भाग 2 – हत्या – प्राइवेट प्रतिरक्षा – यदि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से यह प्रकट होता है कि उसी घटना के दौरान अभियुक्त को भी क्षतियां पहुंची थीं और अभियोजन के पास अभियुक्त को पहुंची क्षतियों का कोई स्पष्टीकरण नहीं है तथा यदि यह मान भी लिया जाए कि अभियुक्त को यह जानकारी थी कि उसके द्वारा किए गए प्रहार से मृतक की मृत्यु कारित हो सकती है फिर भी यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि अभियुक्त का आशय मृतक की मृत्यु कारित करने का था, इसलिए, अभियुक्त प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का फायदा पाने का हकदार है ।

संक्षेप में अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अपीलार्थी ने मृतक साराभाई को उधार के रूप में धन प्रदान किया था और मृतक ने अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा मौखिक रूप से बारंबार मांग किए जाने के बाद भी उधार दी गई रकम का पुनर्संदाय (अपीलार्थी-अभियुक्त को) नहीं किया और, इसलिए, जब तारीख 31 जुलाई, 2003 को राजकोट में गोकुलधाम मुख्य मार्ग के अम्बेडकर नगर कार्नर पर 'मकवाना' पान सेंटर के निकट अपराह्न लगभग 12.30 बजे अपीलार्थी मृतक से मिला तो उत्तेजित हो गया और उसने मृतक को भद्दी-भद्दी गालियां दीं । आगे अभियोजन का पक्षकथन यह भी है कि अपीलार्थी ने अपनी पतलून की पिछली जेब से रामपुरी चाकू निकाल लिया और मृतक के कांख के नीचे दाहिनी तरफ एक घातक प्रहार और दाहिनी भुजा के ऊपर भाग पर दो घातक प्रहार कर दिए जिसके परिणामस्वरूप मृतक गिर पड़ा और अपीलार्थी चाकू समेत भाग खड़ा हुआ । मृतक को साक्षियों द्वारा लक्ष्मीभाई की होंडा मोटर साइकिल पर माधूराम अस्पताल ले जाया गया जहां चिकित्सकों ने उसको मृत घोषित कर दिया । विजूभाई भीखाभाई जोगराना ने घटना की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट राजकोट सिटी के मालवीय नगर पुलिस थाना में दर्ज कराई थी । अन्वेषण अधिकारी ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की और अन्वेषण

आरंभ किया । अन्वेषण अधिकारी ने परिवादी, अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों चिकित्सक और अन्य व्यक्तियों, जो मामले के तथ्यों से परिचित थे, का कथन अभिलिखित किया । अन्वेषण के दौरान अपराध में फंसाने वाली वस्तुओं का अभिग्रहण किया गया और उनको विवेचना के लिए एफ. एस. एल. भेज दिया गया । सीरम संबंधी रिपोर्ट प्राप्त किए जाने और साथ ही मृत्यु का कारण अभिनिश्चित किए जाने और अन्वेषण पूर्ण किए जाने के पश्चात् अपीलार्थियों के विरुद्ध राजकोट के विद्वान् प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय में भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 504 और 188 के अधीन दंडनीय अपराधों के बाबत आरोप पत्र फाइल कर दिया गया । क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का विचारण सेशन न्यायालय द्वारा किया जाता है, मामले को विचारण के लिए राजकोट के सेशन न्यायालय को सुपुर्द कर दिया गया जहां उसको 2003 के सेशन मामला संख्या 168 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का मूल्यांकन किए जाने और पक्षों के विद्वान् काउंसेल को सुने जाने के पश्चात् विद्वान् न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 504 और 188 के अधीन दंडनीय अपराधों के बाबत अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध अभियोजन का पक्षकथन युक्तियुक्त संदेह के परे साबित हो गया है । विद्वान् न्यायाधीश ने इस निष्कर्ष को दृष्टि में रखते हुए अपीलार्थी-अभियुक्त को तारीख 10 सितंबर, 2004 के निर्णय और आदेश, जैसाकि ऊपर निर्दिष्ट किया गया है, द्वारा दोषसिद्ध कर दिया जिसके विरुद्ध प्रस्तुत अपील फाइल की गई । वर्तमान अपील राजकोट के फास्ट ट्रैक न्यायालय संख्या 6 के विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा 2003 के सेशन मामला संख्या 168 में दिए गए तारीख 10 सितंबर, 2004 के निर्णय और आदेश जिसके द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में "आई पी. सी.") की धारा 302 और 504 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया और उसको आजीवन कारावास भोगने और 2000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय में चूक होने पर एक माह का अतिरिक्त कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया, से उत्पन्न हुई है । उसको धारा 504 के अधीन अपराध कारित करने के लिए दो माह का साधारण कारावास भोगने के लिए भी दंडादिष्ट किया गया । दोनों दंडादेशों के साथ-साथ चलने के लिए भी आदेशित किया गया । उच्च न्यायालय द्वारा अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि अपीलार्थी ने मृतक

साराभाई को धन उधार दिया था और अपीलार्थी द्वारा निरंतर मांग किए जाने पर और विनिर्दिष्ट रूप से उस कहासुनी के कारण जो तारीख 31 जुलाई, 2003 को अन्य व्यक्तियों जो मृतक साराभाई के नातेदार थे, की उपस्थिति में हुई थी, अपीलार्थी ने अपनी आत्मरक्षा के प्रयोजनार्थ अतिरिक्त कथन के रूप में यह अभिवाक् किया है । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से प्रकट होने वाले तथ्यों के आधार पर इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि अभियोजन पक्ष आक्रमणकारी हो सकते थे । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह ज्ञात होता है कि मृतक और अपीलार्थी के मध्य कहासुनी हुई थी जैसाकि ऊपर अभिकथित किया गया है । नरेन्द्रभाई खीमजीभाई मकवाना जो गोकुलधाम मुख्य मार्ग पर "मकवाना पान सेंटर" के नाम से पान की दुकान चलाता है और किशन पान कोल्ड ड्रिंक्स के स्वामी सुरेशभाई खोडाभाई दंगर के साक्ष्य से यह भी प्रकट होता है कि घटना के पहले हंगामा हुआ था और अभियोजन इस बात को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं कर सका है कि अपीलार्थी ही हमलावर था । अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है जिसके आधार पर सुगमतापूर्वक यह अनुमान लगाया जा सके कि अपीलार्थी न कि मृतक साराभाई हमलावर था । जैसाकि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, अपीलार्थी को निर्विवाद रूप से उसी घटना के दौरान क्षतियां पहुंची थीं और जब उसने यह अभिवाक् किया है कि उसने आत्मरक्षार्थ कार्रवाई की थी, तो इस बात को अनदेखा आसानी से नहीं किया जा सकता, विशेष रूप से तब जबकि अभियोजन द्वारा उसको पहुंची क्षतियों के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है । उन विभिन्न विनिश्चयों, जहां यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि अभियुक्त ने आत्मरक्षार्थ कार्रवाई की है तो उसको युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने की आवश्यकता नहीं है और यदि दो मत संभव होते हैं तो अभियुक्त को संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए । न्यायालय अभियुक्त को पहुंची क्षतियों को ध्यान में रखते हुए उसके इस अभिवाक् को अभिनिर्धारित करने में कठिनाई महसूस करते हैं कि उसका अभिवाक् बिल्कुल ही विश्वास किए जाने योग्य नहीं है । यह उल्लेख भी किया जाता है कि आत्मरक्षा के अभिवाक् पर आंखें मूंद कर विश्वास नहीं किया जा सकता । अभियोजन सीरम संबंधी रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी की दोषिता साबित कर पाने में समर्थ नहीं हो सके हैं, चूंकि अपीलार्थी का मानव रक्त समूह "ए" है । मृतक का मानव रक्त समूह भी "ए" है । साक्ष्य में यह बात हमारे सामने आई है कि अपीलार्थी को, जैसाकि ऊपर अभिकथित किया गया है, क्षतियां कारित हुई थीं जिनको

अपीलार्थी द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है । इसलिए, सीरम संबंधी रिपोर्ट के आधार पर अभियोजन का पक्षकथन साबित नहीं होता । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निजी रक्षा के अभिवाक् को स्वीकार किया जाना चाहिए । फिर भी (अभियोजन द्वारा) यह कहा जा सकता था कि अपीलार्थी-अभियुक्त को इस बात की जानकारी थी कि उसके द्वारा किए गए प्रहार मृतक की मृत्यु कारित कर देंगे, इसके आधार पर हम यह अनुमान पर नहीं पहुंच सकते कि अपीलार्थी का आशय मृतक की मृत्यु कारित करने का था । चूंकि अपीलार्थी को छ: व्यक्तियों द्वारा घेर लिया गया था, उसने अपने जीवन की रक्षा के प्रयोजनार्थ अपनी निजी रक्षा के अधिकार का प्रयोग किया और मृतक पर प्रहार किए । इन परिस्थितियों में अपीलार्थी द्वारा मृतक साराभाई पर कारित की गई क्षतियों को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 300 में अपवाद-2 का लाभ पाने का अधिकारी है । चर्चा के आधार पर यह दर्शित होता है कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा निजी रक्षा का अधिकार प्रयोग किए जाने के प्रतिरक्षा पक्षकथन का अधिमूल्यन करने में त्रुटि कारित की है । अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा किया गया प्रतिरक्षा का पक्षकथन असंभाव्य नहीं है । जैसीकि ऊपर चर्चा की गई है । अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह दर्शित होता है कि घटना की संभाव्यता, जो अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित कथन में अभिकथित तरीके में उत्पन्न हुई थी, से इनकार नहीं किया जा सकता । इसलिए, लाभ अपीलार्थी को मिलेगा और निजी प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग की उसकी स्वीकार किए जाने योग्य है । अत: यह नहीं कहा जा सकता कि उसने साराभाई गागजीभाई भरवाड की हत्या का अपराध कारित किया है । परिणामस्वरूप, अपील भागतः मंजूर की जाती है । भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय साराभाई गागजीभाई भरवाड की हत्या के अपराध से धारा 304 के भाग 2 के अधीन दंडनीय हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के बाबत अपीलार्थी की दोषसिद्धि परिवर्तित की जाती है । (पैरा 18, 19, 20 और 21)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2005 की दांडिक अपील सं. 2363.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374(2) के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री जे. एम. बुद्धभट्टी

प्रत्यर्थी-राज्य की ओर से श्री के. एल. पांड्या (अपर लोक अभियोजक)

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आर. एम. छाया ने दिया ।

न्या. छाया – वर्तमान अपील राजकोट के फास्ट ट्रैक न्यायालय संख्या 6 के विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा 2003 के सेशन मामला संख्या 168 में दिए गए तारीख 10 सितंबर, 2004 के निर्णय और आदेश जिसके द्वारा अपीलार्थी-अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में "आई पी. सी.") की धारा 302 और 504 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया और उसको आजीवन कारावास भोगने और 2000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय में चूक होने पर एक माह का अतिरिक्त कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया, से उत्पन्न हुई है । उसको धारा 504 के अधीन अपराध कारित करने के लिए दो माह का साधारण कारावास भोगने के लिए भी दंडादिष्ट किया गया । दोनों दंडादेशों के साथ-साथ चलने के लिए भी आदेशित किया गया ।

2. संक्षेप में अभियोजन का पक्षकथन यह है कि अपीलार्थी ने मृतक साराभाई को उधार के रूप में धन प्रदान किया था और मृतक ने अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा मौखिक रूप से बारंबार मांग किए जाने के बाद भी उधार दी गई रकम का पुनर्संदाय (अपीलार्थी-अभियुक्त को) नहीं किया और इसलिए जब तारीख 31 जुलाई, 2003 को राजकोट में गोकुलधाम मुख्य मार्ग के अम्बेडकर नगर कार्नर पर "मकवाना" पान सेंटर के निकट अपराह्न लगभग 12.30 बजे अपीलार्थी मृतक से मिला तो उत्तेजित हो गया और उसने मृतक को भद्दी-भद्दी गालियां दीं । आगे अभियोजन का पक्षकथन यह भी है कि अपीलार्थी ने अपनी पतलून की पिछली जेब से रामपुरी चाकू निकाल लिया और मृतक के कांख के नीचे दाहिनी तरफ एक घातक प्रहार और दाहिनी भुजा के ऊपर भाग पर दो घातक प्रहार कर दिए जिसके परिणामस्वरूप मृतक गिर पड़ा और अपीलार्थी चाकू समेत भाग खड़ा हुआ । मृतक को साक्षियों द्वारा लक्ष्मीभाई की होंडा मोटर साइकिल पर माधूराम अस्पताल ले जाया गया जहां चिकित्सकों ने उसको मृत घोषित कर दिया । विजूभाई भीखाभाई जोगराना ने घटना की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट राजकोट सिटी के मालवीय नगर पुलिस थाना में दर्ज कराई थी ।

3. अन्वेषण अधिकारी ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की और अन्वेषण आरंभ किया । अन्वेषण अधिकारी ने परिवादी, अन्य प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों, चिकित्सक और अन्य व्यक्तियों, जो मामले के तथ्यों से परिचित थे, का कथन अभिलिखित किया । अन्वेषण के दौरान अपराध में फंसाने वाली वस्तुओं का अभिग्रहण किया गया और उनको विवेचना के लिए एफ. एस. एल. भेज दिया गया । सीरम संबंधी रिपोर्ट प्राप्त किए जाने और साथ

ही मृत्यु का कारण अभिनिश्चित किए जाने और अन्वेषण पूर्ण किए जाने के पश्चात् अपीलार्थियों के विरुद्ध राजकोट के विद्वान् प्रथम वर्ग न्यायिक मजिस्ट्रेट के न्यायालय में भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 504 और 188 के अधीन दंडनीय अपराधों के बाबत आरोप पत्र फाइल कर दिया गया । क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का विचारण सेशन न्यायालय द्वारा किया जाता है, मामले को विचारण के लिए राजकोट के सेशन न्यायालय के सुपुर्द कर दिया गया जहां उसको 2003 के सेशन मामला संख्या 168 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया ।

4. विचारण न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने (सेशन न्यायाधीश ने) अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 504 और 188 के अधीन दंडनीय अपराधों के बाबत आरोप विरचित किए, जो प्रदर्श-10 है । अपीलार्थी को आरोप पढ़कर सुनाए और समझाए गए जिसने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण का सामना करने का दावा किया ।

5. अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य अभिलिखित किए जाने के पश्चात् विद्वान् न्यायाधीश ने अपीलार्थी को उन परिस्थितियों के बारे में समझाया जो अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य में उसके विरुद्ध प्रकट हुई थीं और पुन: उसका कथन अभिलिखित किया जैसाकि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपेक्षित होता है । आगे दिए गए अपने कथन, जो उसने अतिरिक्त कथन के रूप में दिया था, अपीलार्थी का पक्षकथन यह था कि मृतक साराभाई ने अपीलार्थी से धन उधार लिया था और मृतक ने बारंबार मांग किए जाने के बाद भी उसका पुनर्संदाय नहीं किया था । अपीलार्थी का आगे पक्षकथन यह है कि घटना की तारीख पर, जब वह अम्बेडकर नगर, गोकुलधाम मुख्य मार्ग से पुनीतनगर स्थित अपने निवास को जाने के लिए गुजर रहा था, तभी मृतक साराभाई गागजीभाई, जोगराना, हरीभाई, मीठाभाई और खोडियार नगर के अन्य व्यक्तियों ने उसको मकवाना पान सेंटर के निकट घेर लिया और उन सभी ने उसकी हत्या करने के आशय से उसके ऊपर छड़ी और पत्थरों से प्रहार करने लगे और जब मृतक साराभाई ने उसके ऊपर छड़ी से प्रहार करने का प्रयास किया, तो अपीलार्थी ने अभियुक्त से छड़ी छीन ली और निजी रक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए उसने मृतक साराभाई के ऊपर उपरोक्त निर्दिष्ट क्षतियां कारित कर दीं । उसने आगे अभिकथित किया है कि उसका कोई आशय मृतक साराभाई की हत्या कारित करने का नहीं था ।

6. अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का मूल्यांकन किए जाने और पक्षों के विद्वान् काउंसेल को सुने जाने के पश्चात् विद्वान् न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302, 504 और 188 के अधीन दंडनीय अपराधों के बाबत अपीलार्थी-अभियुक्त के विरुद्ध अभियोजन का पक्षकथन युक्तियुक्त संदेह के परे साबित हो गया है । विद्वान् न्यायाधीश ने इस निष्कर्ष को दृष्टि में रखते हुए अपीलार्थी-अभियुक्त को तारीख 10 सितंबर, 2004 के निर्णय और आदेश, जैसाकि ऊपर निर्दिष्ट किया गया है, द्वारा दोषसिद्ध कर दिया जिसके विरुद्ध प्रस्तुत अपील फाइल की गई ।

7. अपीलार्थी की ओर से अधिवक्ता श्री एम. बुद्धभट्टी और राज्य की ओर से सहायक लोक अभियोजक श्री पांड्या को विस्तारपूर्वक सुना ।

8. अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता श्री बुद्धभट्टी ने हमारा ध्यान अभियोजन साक्षियों, जो घटना के साक्षी हैं, के मौखिक परिसाक्ष्य की ओर बारंबार दिलाया । श्री बुद्धभट्टी ने बताया कि इस तथ्य के बावजूद कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया है और यद्यपि इन साक्षियों के साक्ष्य में यह स्पष्ट हो चुका है कि अपीलार्थी ने चाकू से प्रहार कारित किए थे, किंतु फिर भी अपीलार्थी का आशय मृतक साराभाई की हत्या कारित करने का नहीं था । श्री बुद्धभट्टी ने दृढ़तापूर्वक दलील दी कि अपीलार्थी ने आगे दिए गए कथन में स्पष्टत: वर्णित किया है कि घटना किस प्रकार से घटित हुई थी । अपीलार्थी ने आगे अपने कथन में अभिकथित किया है कि उसने मृतक साराभाई को रकम उधार दी थी और मृतक साराभाई ने बारंबार मांग किए जाने के बाद भी उक्त रकम का पुनर्संदाय नहीं किया और घटना की तारीख पर जब अपीलार्थी घटनास्थल से गुजर रहा था, तभी उसको मृतक साराभाई, गागजीभाई जोगराना, हरीभाई, मीठाभाई और अन्य व्यक्तियों ने चारों ओर से घेर लिया और उसके ऊपर छड़ी और पत्थरों से प्रहार करने लगे । विद्वान् अधिवक्ता श्री बुद्धभट्टी ने अभिवाक् किया कि अपीलार्थी के पास, अपने जीवन की रक्षा करने के सिवाय कोई अन्य विकल्प नहीं था, इसलिए, अपीलार्थी ने मृतक के पतलून के पीछे की, जेब से चाकू निकाला और ऐसा करते हुए उसके हाथ पर क्षतियां कारित हुईं और उसने इन परिस्थितियों के अंतर्गत मृतक के ऊपर प्रहार कर दिए । श्री बुद्धभट्टी ने दलील दी कि अपीलार्थी द्वारा यह कार्य आत्मरक्षा के प्रयोजनार्थ कारित किया गया था और इसलिए यद्यपि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान

अपराध अपीलार्थी की संलिप्तता है, किंतु उस अपराध को हत्या नहीं माना जाएगा, चूंकि मृतक आत्मरक्षा के अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए क्षतिग्रस्त हो गया था और अंतत: इन्हीं क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो गई । अत:, श्री बुद्धभट्टी ने दलील दी कि अपीलार्थी का पक्षकथन भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के स्पष्टीकरण-2 के अधीन आएगा और यह न्यायालय इस दलील को स्वीकार कर सकता है और विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान की गई दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त कर सकता है या अनुकल्प में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग-2 के अधीन दंडनीय हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध में परिवर्तित कर सकता है ।

9. विद्वान् अपर लोक अभियोजक श्री के. एल. पांड्या ने इस अपील का विरोध किया । श्री पांड्या ने दलील दी कि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों और अन्य अभियोजन साक्षियों ने अभियोजन के पक्षकथन का पूर्णत: समर्थन किया । श्री पांड्या ने दलील दी कि अभियोजन ने प्रस्तुत मामले में आशय को साबित कर दिया है । श्री पांड्या ने दलील दी कि प्रस्तुत मामला एक शंकाहीन मामला है और जो प्रत्यक्ष साक्ष्य उपलब्ध है वह अपीलार्थी को हत्या के अपराध के साथ सम्बद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं । श्री पांड्या ने आगे दलील दी कि चिकित्सीय साक्ष्य और साथ ही सीरम संबंधी रिपोर्ट के रूप में साक्ष्य अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन करते हैं । सीरम संबंधी रिपोर्ट (प्रदर्श-73) के आधार पर विद्वान् सहायक लोक अभियोजक श्री पांड्या ने बताया कि आयुध चाकू और साथ ही मृतक और अपीलार्थी के रक्तरंजित कपड़े जिन पर 'ए' समूह का मानव रक्त लगा हुआ था जो मृतक का भी रक्त समूह है । श्री पांड्या ने इस बात पर जोर दिया कि अपीलार्थी ने मृतक को रामपुरी छूरी से, जिसको उसी के बताए जाने के आधार पर बरामद कर लिया गया था, गंभीर क्षतियां कारित की थीं और चूंकि प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के साक्ष्य की पुष्टि पर्याप्त रूप से चिकित्सीय साक्ष्य से होती है, अपीलार्थी को सुस्थापित दोषसिद्धि में वर्तमान अपील में इस माननीय न्यायालय द्वारा मध्यक्षेप नहीं किया जाना चाहिए । राज्य के विद्वान् काउंसेल ने अंत में दलील दी कि विद्वान् न्यायाधीश अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का अधिमूल्यन करने में कोई त्रुटि कारित नहीं की है और इसलिए अपील खारिज किए जाने योग्य है ।

10. इस न्यायालय ने भी मामले के समस्त महत्वपूर्ण लक्षणों और मामले की व्यापक और सुसंगत अधिसंभाव्यताओं के संदर्भ में अभिलेख पर

उपलब्ध समस्त साक्ष्य का पूर्ण और गहराईपूर्वक अधिमूल्यन किया है ।

11. यह तथ्य निर्विवाद है कि साराभाई की मृत्यु मानव वध थी । डा. एल्पाबेन जगदीश भाई जेठवा अभि. सा. 7, प्रदर्श-36 के साक्ष्य से साबित होता है कि उसने तारीख 31 जुलाई, 2003 को साराभाई गागजीभाई जोगराना के शव का शवपरीक्षण अपराह्न 5.30 और 6.30 बजे के मध्य किया था और उन्होंने मृतक साराभाई के शव पर निम्नलिखित चार बाह्य क्षतियां पाई थीं :–

(1) सातवीं, आठवीं पसली को वेधता हुआ 8 से. मी. x 3 से. मी. माप का वेधित घाव जिसकी गहराई गुहा तक है और जिसकी स्थिति उर्ध्वाधर है ।

(2) घाव वाले स्थान पर अंतःपर्शुका ट्यूब के साथ घाव के ठीक नीचे अंतःपर्शुका आयन ।

(3) नीलयुक्त विदीर्ण घाव 9 से. मी. x 3 से. मी., दाहिनी भुजा के ऊपर दोनों किनारे नुकीले ।

(4) नीलयुक्त विदीर्ण घाव 1 से. मी. x ½ से. मी. । दोनों 7-8 त्रैविक केशरूका से अधिक । दोनों किनारे नुकीले ।

चिकित्सक ने मत व्यक्त किया कि पूर्वोक्त क्षतियां मुदम्मल आयुध छड़ी द्वारा कारित की जा सकती थीं । चिकित्सक के अनुसार मृतक की मृत्यु का कारण फेफड़े, लिवर में हमले द्वारा कारित क्षति के कारणवश रक्तस्रावी संघाट के कारण कारित हृदीय श्वास का बंद हो जाना था । चिकित्सक ने न्यायालय के समक्ष अपने सशपथ कथन में अभिकथित किया है कि मृतक द्वारा बर्दाश्त की गई क्षति संख्या 1 प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी । चिकित्साधिकारी को साक्ष्य मामले के अभिलेख पर प्रदर्श-37 के रूप में पेश की गई शव-परीक्षा रिपोर्ट से पर्याप्त पुष्टिकरण प्राप्त हो जाता है । अपीलार्थी का यह पक्षकथन नहीं है कि मृतक द्वारा बर्दाश्त की गई क्षतियां आत्महत्याजन्य थीं या दुर्घटनाजन्य हम मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस बाबत संतुष्ट हैं कि अभियोजन ने इस बात को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित कर दिया है कि मृतक की मृत्यु मानव वधोन्माद के कारण थी । मृतक की मानव वधोन्मादी मृत्यु के संबंध में विचारण न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष को उत्कृष्ट रूप से उचित होने के कारण मान्य ठहराया जाता है ।

12. हम प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अर्थात् वजूभाई, भीखाभाई जोगराना (अभि. सा. 6, प्रदर्श-27), हरीभाई गागजीभाई जोगराना (अभि. सा. 9, प्रदर्श-41), मीठाभाई गागजीभाई जोगराना (अभि. सा. 10, प्रदर्श-42) और लक्ष्मणभाई धूलाभाई मारु (अभि. सा. 11, प्रदर्श-43) के मौखिक परिसाक्ष्यों की सूक्ष्मतापूर्वक संवीक्षा किए जाने पर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि ये सभी साक्षी घटनास्थल पर उपस्थित थे । इन सभी साक्षियों ने अभिकथित किया है कि अपीलार्थी द्वारा उधार दिए गए धन के संबंध में मृतक और अपीलार्थी के मध्य कुछ कहासुनी हुई थी । उन्होंने यह भी अभिकथित किया कि अपीलार्थी-अभियुक्त ने चाकू निकाला और मृतक के ऊपर आक्रमण कर दिया । उनकी अलग-अलग की गई प्रतिपरीक्षा में हम यह भी पाते हैं कि उन्होंने प्रतिरक्षा पक्ष के सुझावों से इनकार किया है और अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन किया है ।

13. हम नरेन्द्रभाई खीमजीभाई मकवाना (अभि. सा. 12, प्रदर्श-44) का साक्ष्य पढ़े जाने पर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि वह गोकुलधाम मुख्य मार्ग पर "मकवाना पान सेंटर" नामक पान की दुकान का स्वामी है जहां घटना घटित हुई थी । इस साक्षी ने अभिकथित किया है कि पांच-छः व्यक्तियों और मृतक के बीच कुछ कहासुनी हुई थी और अपीलार्थी ने चाकू निकाल लिया था और मृतक के ऊपर (चाकू से) दो प्रहार किए थे । इसे साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में अभिकथित किया है कि उसका ध्यान पान तैयार करने पर था । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह भी अभिकथित किया है कि निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि चाकू किसने निकाला था । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में अभिकथित किया है कि यदि वह दुकान से बाहर नहीं आता तो कुछ भी नहीं देख सकता था । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया है कि वह दुकान से बाहर नहीं आया था और घटना को नहीं देखा था ।

14. अभि. सा. 13 सुरेशभाई खोदाभाई दंगार ने अपने परिसाक्ष्य (प्रदर्श-45) में अभिकथित किया है कि वह गोकुलधाम मुख्य मार्ग, जहां घटना घटित हुई थी, पर "किशन पान कोल्ड ड्रिंक्स" के नाम से पान की दुकान चलाता है । उसने अभिकथित किया है कि मृतक और अपीलार्थी के मध्य कुछ कहासुनी हो गई थी और अपीलार्थी ने चाकू निकाल लिया था और मृतक के ऊपर प्रहार कर दिया था । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में अभिकथित किया है कि जब मृतक और अपीलार्थी के मध्य कहासुनी हो रही थी तो 5-6 व्यक्ति अपीलार्थी के निकट खड़े थे । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह भी अभिकथित किया है कि हंगामे के कारण 15-20

व्यक्ति एकत्रित हो गए थे और सभी कहासुनी में अंतर्वलित हो गए थे । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में आगे अभिकथित किया कि अपीलार्थी को मृतक से धन की मांग करते हुए और मृतक को अपीलार्थी को सूचना देते हुए कि उसके पास इस समय धन नहीं है, सुना था । इस साक्षी ने प्रतिरक्षा द्वारा दिए गए कतिपय सुझावों से इनकार किया था ।

15. हम साक्षी आत्माराम पांडुराम पवार अभि. सा. 14, प्रदर्श-72, जो सुसंगत समय पर मालवीय नगर पुलिस थाना में तैनात था और जिसने अन्वेषण किया था, के अभिसाक्ष्य को पढ़े जाने पर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उसने उस तरीके को अभिकथित किया है जिसमें साक्षियों के कथन अभिलिखित किए जाने, पंचनामें तैयार किए जाने और अन्वेषण के दौरान एकत्रित की गई फंसाने वाली सामग्री को भेजे जाने को सम्मिलित करते हुए उसके द्वारा अन्वेषण किया गया । उसकी प्रतिपरीक्षा की गई जिसमें उसने अभिकथित किया है कि अन्वेषण के दौरान अभिलेख पर यह स्पष्ट हो गया है कि अपीलार्थी-अभियुक्त को मृतक और उसके नातेदारों द्वारा पीटा गया था । इस साक्षी ने प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा दिए गए इस सुझाव से इनकार किया है कि उसने अपनी बुद्धिमत्ता के आधार पर प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों के कथन अभिलिखित किए थे ।

16. हम सीरम संबंधी रिपोर्ट (प्रदर्श-73) के परिशीलन से इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मृतक साराभाई का रक्त समूह "ए" था । सीरम संबंधी रिपोर्ट आगे यह उपदर्शित करती है कि मृतक साराभाई के कपड़ों पर और अपीलार्थी और साथ ही आयुध चाकू और मृतक के जूतों और टोपी पर पाए गए रक्त निशान समूह "ए" के मानव रक्त, जो मृतक साराभाई का रक्त समूह था, के थे ।

17. मामले के अभिलेख से यह ज्ञात होता है कि अपीलार्थी-अभियुक्त का इलाज डा. मुकेशभाई जेठालाल उपाध्याय द्वारा किया गया था और उन्होंने अपीलार्थी के शरीर पर निम्नलिखित तीन क्षतियां पाई थीं :–

(1) पार्श्विक पश्चकपाल क्षेत्र में 5 से. मी. x ½ से. मी. (बाईं तरफ) ।

(2) हाथ में टगड़ ।

(3) बाएं कंधे में दर्द की शिकायत ।

18. अत:, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि अपीलार्थी ने मृतक

साराभाई को धन उधार दिया था और अपीलार्थी द्वारा निरंतर मांग किए जाने पर और विनिर्दिष्ट रूप से उस कहासुनी के कारण जो तारीख 31 जुलाई, 2003 को अन्य व्यक्तियों जो मृतक साराभाई के नातेदार थे, की उपस्थिति में हुई थी, अपीलार्थी ने अपनी आत्मरक्षा के प्रयोजनार्थ अतिरिक्त कथन के रूप में यह अभिवाक् किया है । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से प्रकट होने वाले तथ्यों के आधार पर इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि अभियोजन पक्ष आक्रमणकारी हो सकते थे । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह ज्ञात होता है कि मृतक और अपीलार्थी के मध्य कहासुनी हुई थी जैसाकि ऊपर अभिकथित किया गया है । नरेन्द्रभाई खीमजीभाई मकवाना (अभि. सा. 12, प्रदर्श-44) जो गोकुलधाम मुख्य मार्ग पर "मकवाना पान सेंटर" के नाम से पान की दुकान चलाता है और किशन पान कोल्ड ड्रिंक्स के स्वामी सुरेशभाई खोडाभाई दंगार (अभि. सा. 13, प्रदर्श-45) के साक्ष्य से यह भी प्रकट होता है कि घटना के पहले हंगामा हुआ था और अभियोजन इस बात को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं कर सका है कि अपीलार्थी ही हमलावर था । अभिलेख पर ऐसा कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है जिसके आधार पर सुगमतापूर्वक यह अनुमान लगाया जा सके कि अपीलार्थी न कि मृतक साराभाई हमलावर था । जैसाकि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, अपीलार्थी को निर्विवाद रूप से उसी घटना के दौरान क्षतियां पहुंची थीं और जब उसने यह अभिवाक् किया है कि उसने आत्मरक्षार्थ कार्रवाई की थी, तो इस बात को अनदेखा आसानी से नहीं किया जा सकता, विशेष रूप से तब जबकि अभियोजन द्वारा उसको पहुंची क्षतियों के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है । उन विभिन्न विनिश्चयों, जहां यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि अभियुक्त ने आत्मरक्षार्थ कार्रवाई की है तो उसको युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करने की आवश्यकता नहीं है और यदि दो मत संभव होते हैं तो अभियुक्त को संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए । हम अभियुक्त को पहुंची क्षतियों को ध्यान में रखते हुए उसके इस अभिवाक् को अभिनिर्धारित करने में कठिनाई महसूस करते हैं कि उसका अभिवाक् बिल्कुल ही विश्वास किए जाने योग्य नहीं है । यह उल्लेख भी किया जाता है कि आत्मरक्षा के अभिवाक् पर आंखें मूंद कर विश्वास नहीं किया जा सकता । अभियोजन सीरम संबंधी रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी की दोषिता साबित कर पाने में समर्थ नहीं हो सके हैं, चूंकि अपीलार्थी का मानव रक्त समूह "ए" है । मृतक का मानव रक्त समूह भी "ए" है । साक्ष्य में यह बात हमारे सामने आई है कि अपीलार्थी को, जैसाकि ऊपर अभिकथित किया गया है, क्षतियां

कारित हुई थीं जिनको अपीलार्थी द्वारा स्पष्ट नहीं किया गया है । इसलिए, सीरम संबंधी रिपोर्ट के आधार पर अभियोजन का पक्षकथन साबित नहीं होता । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निजी रक्षा के अभिवाक् को स्वीकार किया जाना चाहिए ।

19. फिर भी (अभियोजन द्वारा) यह कहा जा सकता था कि अपीलार्थी-अभियुक्त को इस बात की जानकारी थी कि उसके द्वारा किए गए प्रहार मृतक की मृत्यु कारित कर देंगे, इसके आधार पर हम यह अनुमान पर नहीं पहुंच सकते कि अपीलार्थी का आशय मृतक की मृत्यु कारित करने का था । चूंकि अपीलार्थी को छ: व्यक्तियों द्वारा घेर लिया गया था, उसने अपने जीवन की रक्षा के प्रयोजनार्थ अपनी निजी रक्षा के अधिकार का प्रयोग किया और मृतक पर प्रहार किए । इन परिस्थितियों में अपीलार्थी द्वारा मृतक साराभाई पर कारित की गई क्षतियों को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 300 में अपवाद-2 का लाभ पाने का अधिकारी है ।

20. पूर्वोक्त चर्चा के आधार पर यह दर्शित होता है कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा निजी रक्षा का अधिकार प्रयोग किए जाने के प्रतिरक्षा पक्षकथन का अधिमूल्यन करने में त्रुटि कारित की है । अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा किया गया प्रतिरक्षा का पक्षकथन असंभाव्य नहीं है । जैसी कि ऊपर चर्चा की गई है । अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री से यह दर्शित होता है कि घटना की संभाव्यता, जो अपीलार्थी द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित कथन में अभिकथित तरीके में उत्पन्न हुई थी, से इनकार नहीं किया जा सकता । इसलिए, लाभ अपीलार्थी को मिलेगा और निजी प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग की उसकी स्वीकार किए जाने योग्य है । अत: यह नहीं कहा जा सकता कि उसने साराभाई गागजीभाई भरवाड की हत्या का अपराध कारित किया है ।

21. परिणामस्वरूप, अपील भागतः मंजूर की जाती है । भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय साराभाई गागजीभाई भरवाड की हत्या के अपराध से धारा 304 के भाग 2 के अधीन दंडनीय हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध के बाबत अपीलार्थी की दोषसिद्धि परिवर्तित की जाती है ।

22. हमने विद्वान् सहायक लोक अभियोजक और अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता श्री बुद्धभट्टी को दंडादेश पर सुना । अपीलार्थी को जुर्माने के दंडादेश में बिना किसी परिवर्तन के उसके द्वारा पहले ही भोगे गए कठोर

कारावास की अवधि के बदले में कठोर कारावास भोगने के द्वारा दंडादिष्ट किया जाता है । भारतीय दंड संहिता की धारा 504 के अधीन उसकी दोषसिद्धि में कोई परिवर्तन नहीं किया जाता है ।

अपील भागतः मंजूर की गई ।

शु.

(2012) 2 दा. नि. प. 36 **छत्तीसगढ़**

रामशरण रामवगस लोहार

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

तारीख 22 जुलाई, 2011

न्यायमूर्ति सुनील कुमार सिन्हा और न्यायमूर्ति राधे श्याम शर्मा

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 300 – हत्या – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्त द्वारा प्रयुक्त हथियार की प्रकृति, ऐसी रीति जिस तरह उसने मृतक पर हमला किया, प्रहार की गंभीरता, शरीर का वह मुख्य अंग जिस पर उसने प्रहार किया और हेतुक से यह साबित होने पर कि अभियुक्त का आशय मृतक की हत्या करना था, वहां अभियुक्त का कार्य दंड संहिता की धारा 300 के किसी अपवाद के अधीन न आने के कारण हत्या के अपराध का दोषी ठहराए जाने योग्य है ।

संक्षेप में, अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि अपीलार्थी के पिता ने तारीख 24 फरवरी, 1949 को मृतक जेठूराम के दादा वैशाली केवंत से भूमि का टुकड़ा क्रय किया था और भूमि को अपने कब्जे में लिया था । क्रेता के पक्ष में दाखिल-खारिज नहीं किया गया था । जब अपीलार्थी के पिता गांव से चले गए थे तब मृतक ने भूमि को जोतना प्रारंभ किया । कुछ वर्षों के पश्चात् जब अपीलार्थी वापस आया और उसने भूमि का कब्जा वापस लेने की कोशिश की तब मृतक ने उसे कब्जा नहीं दिया । इस कारण तारीख 6 अगस्त, 1993 को उन दोनों के बीच झगड़ा हुआ था । तारीख 21 अगस्त, 1993 को लगभग 11.00 बजे अपराह्न जब मृतक अपने कार्य से वापस आ रहा था तब अपीलार्थी ने अपने भाई और भांजे (बहन का पुत्र) के साथ लाठी से मृतक पर हमला कर दिया । जब मृतक

नीचे गिर गया तब तीनों व्यक्ति भाग गए । उपासराम, (अभि. सा. 1) और देवासराम (अभि. सा. 2) ने घटना देखी थी और वे घटना से भयभीत होकर भाग गए थे । मृतक ने अपनी मृत्यु से पूर्व अपनी पत्नी तिरथबाई और अपने भाई घासी राम को अपीलार्थी द्वारा लाठी से हमला करने के बारे में बताया था । उसके पश्चात् मृतक को पुलिस थाना, अकालतारा ले जाया गया था । मृतक ने स्वयं प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की थी । मृतक को जिला अस्पताल, विलासपुर भेजा गया था जहां उसकी क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । मृतक की मृत्यु की सूचना पुलिस थाना कोतवाली, विलासपुर भेजी गई थी जहां पर मृत्यु की सूचना अभिलिखित की गई थी । पुलिस तत्काल अस्पताल पहुंची और पंचों को बुलाया तथा मृतक के शव की मृत्यु-समीक्षा तैयार की । मृतक के शव को शवपरीक्षण के लिए भेजा गया था । डा. विजय कुमार वर्मा द्वारा शवपरीक्षण किया गया था जिसने रिपोर्ट तैयार की थी । उसने नाक की जड़ के 8 इंच ऊपर सिर पर त्रियक का निशान जो लंबाई में 2 इंच का घाव था उसे सिला गया और मृतक के शव पर पांच अन्य क्षतियां भी पाई गईं । उन्होंने यह राय व्यक्त की है कि मृत्यु का कारण मस्तिष्क और खोपड़ी पर की गईं क्षतियों के कारण मुर्छा आने से हुई थी । अन्वेषण की आगे की कार्यवाही में अपीलार्थी के ज्ञापन कथन तारीख 23 अगस्त, 1993 को अभिलिखित किया गया था और उसके कहने पर बांस के लट्ठे की बरामदगी की गई थी । अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, जांजगिर के न्यायालय में आरोप पत्र फाइल किया गया था जिन्होंने मामले को सेशन न्यायालय के सुपुर्द कर दिया था जहां से इसे अपर सेशन न्यायाधीश शक्ति, कैम्प, जांजगिर द्वारा मामला अंतरित होने पर प्राप्त किया गया था जिन्होंने विचारण किया और अपीलार्थी को दोषसिद्ध करके दंडादिष्ट किया है । यह अपील 1993 के सेशन विचारण संख्या 338 में अपर सेशन न्यायाधीश, शक्ति, जिला विलासपुर, कैम्प जांजगिर द्वारा तारीख 16 नवंबर, 1995 को पारित किए गए निर्णय के विरुद्ध फाइल की है । आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थी रामशरण को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया और आजीवन कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया । अभियुक्त ने अपर सेशन न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की । उच्च न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने तिरथबाई, घासी राम, सम्मात, गोपाल पांडे, सहायक उप-निरीक्षक के साक्ष्य की सावधानीपूर्वक संवीक्षा की । इन साक्षियों के साक्ष्य से पूर्णतया यह स्पष्ट हुआ है कि मामले में अपीलार्थी के

अलावा कोई दूसरा व्यक्ति नहीं था जिसने मृतक पर लाठी से हमला किया था और मूर्छित हो जाने के कारण मृतक की मृत्यु हुई थी जो उसके मस्तिष्क और खोपड़ी पर क्षति के कारण हुई थी । अतः, न्यायालय विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष में कोई दुर्बलता नहीं पाता है कि वह अपीलार्थी था जिसने मृतक की मृत्यु कारित की । जहां तक हेतु का संबंध है अभियोजन पक्ष के लिए हमेशा यह आवश्यक नहीं है कि अभियुक्त की दोषसिद्धि को सुनिश्चित करने के लिए अपराध किए जाने के लिए निश्चित हेतु को सिद्ध करे । यह बात वर्णित मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर हमेशा संबंधित रही है । हेतु का अभाव अभियुक्त की दोषसिद्धि का परिणाम अपरिहार्य रूप से नहीं होता यदि अभियुक्त अकाट्य और विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा दोषी पाया जाता है । तथापि, वर्तमान मामले में मृतक की हत्या करने के लिए अपीलार्थी का हेतु विद्यमान है । अभियोजन पक्ष ने यह अभिकथन किया है कि भूमि संबंधी विवाद के कारण अपीलार्थी और मृतक के बीच झगड़ा हुआ था । दंड संहिता की धारा 300 का निर्धारक तथ्य यह है कि साशय क्षति कारित की गई है जो प्रकृति के साधारण अनुक्रम में हत्या किए जाने के लिए पर्याप्त होनी चाहिए । यह बात अतात्विक है कि क्या अपराधी को इस बात की जानकारी थी कि इस प्रकार के कार्य से संभवतया मृत्यु हो जाएगी । ऐसे परिणाम के बारे में अपराधी की विषयपरक जानकारी असंगत है । साशय क्षति कारित करने के परिणाम को वस्तुपरक रूप से देखा जाना चाहिए । यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि क्या अपराधी का ऐसी शारीरिक क्षति पहुंचाने का आशय था जो प्रकृति के साधारण अनुक्रम में मृत्यु कारित किए जाने के लिए पर्याप्त थी, इस तरह के विच्छेदित कारक को ध्यान में रखना जरूरी है जिस पर ऐसा बल प्रयोग किया जाना जिससे प्रहार किया जाता है और आयुध का प्रकार जिसे प्रयुक्त किया गया है और महत्वपूर्ण अंग या शरीर का विशिष्ट भाग जिसे लक्ष्य किया गया है, और कारित की गई क्षति की प्रकृति, अपराध की उत्पत्ति और परिस्थितियां जिससे मृत्यु हो जाए । अपीलार्थी और मृतक के बीच भूमि संबंधी विवाद था । अपीलार्थी भूमि संबंधी विवाद के कारण मृतक से क्रोध की प्रबल भावना रखता था । तारीख 6 अगस्त, 1993 अर्थात् घटना के 15 दिन पूर्व उन दोनों के बीच झगड़ा हुआ था । अपीलार्थी ने मृतक पर हमला किया तथा उसके सिर पर लाठी से प्रहार किया । मृतक के शरीर पर करीब-करीब लगभग छह क्षतियां पाई गई थीं । क्षतियां जो मृतक जेठूराम को कायम हुई थीं, उनसे स्पष्टतया यह दर्शित हुआ है कि अपीलार्थी द्वारा पर्याप्त बल प्रयोग करके लाठी का प्रयोग किया

गया था और क्षतियां शरीर के नाजुक भागों पर कारित हुई थीं । अपीलार्थी द्वारा प्रयोग में ली गई आयुध की प्रकृति, और वह रीति जिसमें अपीलार्थी ने मृतक पर हमला किया प्रहार की तीव्र मात्रा थी और यह प्रहार उसने मृतक पर किया और शरीर का भाग जिसे उसने ऐसे प्रहार किए जाने के लिए चुना था उससे यह दर्शित हुआ है कि उसका मृतक की हत्या किए जाने का आशय था । न्यायालय की विचारित राय यह है कि पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी का कार्य दंड संहिता की धारा 300 के किसी अपवाद के अधीन नहीं आता है और ऐसे वर्तमान अपराध के बारे में हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध नहीं कहा जा सकता है । (पैरा 19, 21, 22 और 23)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2002]	ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 299 = 2002 क्रिमिनल ला जर्नल 586 : **मेहरबान सिंह और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	12
[1998]	(1998) 8 सुप्रीम 118 = ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 1461 : **राधे श्याम** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	3
[1993]	ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 65 = 1992 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 2582 : **प्रकाश और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	14
[1993]	ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 250 = 1993 क्रिमिनल ला जर्नल 304 : **विशराम और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	13
[1976]	ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 1192 : **के. रामचन्द्रन रेड्डी और एक अन्य** बनाम **लोक अभियोजक** ;	9
[1976]	ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2199 : **मुन्नु राजा और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ।	6

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 1996 की दांडिक अपील सं. 51.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री अभय तिवारी

राज्य/प्रत्यर्थी की ओर से श्री आशीष शुक्ला, सरकारी अधिवक्ता

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति राधे श्याम शर्मा ने दिया ।

न्या. शर्मा – यह अपील 1993 के सेशन विचारण संख्या 338 में अपर सेशन न्यायाधीश, शक्ति, जिला विलासपुर, कैम्प जांजगिर द्वारा तारीख 16 नवंबर, 1995 को पारित किए गए निर्णय के विरुद्ध फाइल की है । आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थी रामशरण को दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया और आजीवन कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया ।

2. संक्षेप में, अभियोजन पक्षकथन निम्नलिखित है :–

अपीलार्थी के पिता ने तारीख 24 फरवरी, 1949 को मृतक जेठूराम के दादा वैशाली केवंत से भूमि का टुकड़ा क्रय किया था और भूमि को अपने कब्जे में लिया था । क्रेता के पक्ष में दाखिल-खारिज नहीं किया गया था । जब अपीलार्थी के पिता गांव से चले गए थे तब मृतक ने भूमि को जोतना प्रारंभ किया । कुछ वर्षों के पश्चात् जब अपीलार्थी वापस आया और उसने भूमि का कब्जा वापस लेने की कोशिश की तब मृतक ने उसे कब्जा नहीं दिया । इस कारण तारीख 6 अगस्त, 1993 को उन दोनों के बीच झगड़ा हुआ था । तारीख 21 अगस्त, 1993 को लगभग 11.00 बजे अपराह्न जब मृतक अपने कार्य से वापस आ रहा था तब उस समय अपीलार्थी ने अपने भाई और भांजे (बहन का पुत्र) के साथ लाठी से मृतक पर हमला कर दिया । जब मृतक नीचे गिर गया तब तीनों व्यक्ति भाग गए । उपासराम (अभि. सा. 1) और देवासराम (अभि. सा. 2) ने घटना देखी थी और वे घटना से भयभीत होकर भाग गए थे । मृतक ने अपनी मृत्यु से पूर्व अपनी पत्नी तिरथबाई (अभि. सा. 3) और अपने भाई घासी राम (अभि. सा. 4) को अपीलार्थी द्वारा लाठी से हमला करने के बारे में बताया था । उसके पश्चात् मृतक को पुलिस थाना, अकालतारा ले जाया गया था । मृतक ने स्वयं प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-18) दर्ज की थी । मृतक को जिला अस्पताल, विलासपुर भेजा गया था जहां उसकी क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । मृतक की मृत्यु की सूचना पुलिस थाना कोतवाली, विलासपुर भेजी गई थी जहां पर मृत्यु की सूचना (प्रदर्श पी-19) अभिलिखित की गई थी । पुलिस तत्काल अस्पताल पहुंची और पंचों को बुलाया तथा मृतक के शव की मृत्यु-समीक्षा (प्रदर्श पी-20) तैयार की । मृतक के शव को शवपरीक्षण के लिए भेजा गया था । डा. विजय कुमार

वर्मा (अभि. सा. 15) द्वारा शवपरीक्षण किया गया था जिसने रिपोर्ट (प्रदर्श पी-21) तैयार की थी । उसने नाक की जड़ के 8 इंच ऊपर सिर पर त्रियक का निशान जो लंबाई में 2 इंच का घाव था उसे सिला गया और मृतक के शव पर पांच अन्य क्षतियां भी पाई गईं । उन्होंने यह राय व्यक्त की है कि मृत्यु का कारण मस्तिष्क और खोपड़ी पर की गईं क्षतियों के कारण मुर्छा आने से हुई थी । अन्वेषण की आगे की कार्यवाही में अपीलार्थी के ज्ञापन कथन तारीख 23 अगस्त, 1993 को अभिलिखित किया गया था, देखिए (प्रदर्श पी-5) और उसके कहने पर बांस के लट्ठे की बरामदगी की गई थी देखिए (प्रदर्श पी-6) ।

अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, जांजगिर के न्यायालय में आरोप पत्र फाइल किया गया था जिन्होंने मामले को सेशन न्यायालय के सुपुर्द कर दिया था जहां से इसे अपर सेशन न्यायाधीश शक्ति, कैम्प, जांजगिर द्वारा मामला अंतरित होने पर प्राप्त किया गया था जिन्होंने विचारण किया और अपीलार्थी को दोषसिद्ध करके दंडादिष्ट किया जैसाकि कि ऊपर उल्लिखित है ।

3. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री अभय तिवारी ने यह दलील दी कि मौखिक मृत्युकालिक कथन के आधार पर अभिलिखित दोषसिद्धि का निष्कर्ष अयुक्तियुक्त है और विश्वसनीय नहीं है । इसे युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया है । उसने यह भी दलील दी कि मृतक अचेत अवस्था में था और वह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को दर्ज करने या घटना के बारे में किसी व्यक्ति को किसी बात को बताने की स्थिति में नहीं था । इसलिए, मौखिक मृत्युकालिक कथन का साक्ष्य विश्वसनीय नहीं है । तिरथबाई (अभि. सा. 3) और घासीराम (अभि. सा. 4) हितबद्ध साक्षी हैं इसलिए उनका परिसाक्ष्य विश्वसनीय नहीं है । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी को दोषसिद्ध किए जाने का अभिलिखित किया गया निष्कर्ष कायम रखने योग्य नहीं है ।

अनुकल्पतः, विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी का कार्य दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय नहीं होगा और यदि सम्पूर्ण मामले को स्वीकार कर लिया जाए तो अपीलार्थी केवल गंभीर क्षति पहुंचाने के लिए दंडित किया जाना चाहिए । उन्होंने **राधे श्याम** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया ।

---

[1] (1998) 8 सुप्रीम 118 = ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 1461.

4. इसके विपरीत, राज्य-प्रत्यर्थी के विद्वान् सरकारी अधिवक्ता आशीष शुक्ला ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन करते हुए यह दलील दी कि अभियोजन साक्षी नैसर्गिक साक्षी हैं और उनका परिसाक्ष्य पूर्णतया विश्वसनीय है । मृतक द्वारा अपनी पत्नी और भाई के समक्ष किया गया मौखिक मृत्युकालिक कथन विश्वसनीय है । उन्होंने यह भी दलील दी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-18) मृत्युकालिक कथन के रूप में भी माना जा सकता है और उसे अपीलार्थी की दोषसिद्धि के लिए साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है ।

5. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को विस्तार से सुना और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य सहित आक्षेपित निर्णय का भी परिशीलन किया । अपीलार्थी की दोषसिद्धि मौखिक मृत्युकालिक कथन पर आधारित है जिसे मृतक द्वारा अपनी पत्नी तिरथबाई (अभि. सा. 3) और भाई घासी राम (अभि. सा. 4) के समक्ष किया गया था । अभियोजन पक्ष के अनुसार उपासराम (अभि. सा. 1) और देवासराम (अभि. सा. 2) की प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में परीक्षा की गई थी किंतु उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया था किंतु उन्होंने अभियोजन पक्षकथन का समर्थन नहीं किया इसलिए अभियोजन पक्षकथन पूर्णतया मौखिक मृत्युकालिक कथन पर आधारित है ।

6. जहां तक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का संबंध है क्या इसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन मृत्युकालिक कथन के रूप में साक्ष्य में ग्राह्य किया जाएगा, उच्चतम न्यायालय ने **मुन्नु राजा और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में जो कुछ अभिनिर्धारित किया है इस प्रकार है :–

> "5. ..... बहादुर सिंह द्वारा पुलिस के समक्ष कथन किए जाने के पश्चात् उसकी क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई और इसलिए, उसके कथन को मृत्युकालिक कथन के रूप में माना जा सका और उसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन ग्राह्य माना गया । कथन करने वाले की मृत्यु हो गई थी और यह कथन उसकी मृत्यु के कारण से संबंधित है ।"

7. वर्तमान मामले में, मृतक द्वारा स्वयं प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-18) दर्ज की गई थी जिसमें उसके द्वारा यह रिपोर्ट दी गई थी कि लगभग 11.00 बजे अपराह्न जब वह उपास गोंड और देवास गोंड के साथ

---

[1] ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2199.

ग्राम बुतर्भवा और करुमाहू के बीच पहुंचा तब रामवगस लोहार का पुत्र रामशरण जो करुमाहू का निवासी है अपने भाई के साथ था जिसका नाम उसे पता नहीं परंतु वह उसे जानता था कि वह भट्टापरा का निवासी था, वह उसका भांजा (बहिन का पुत्र) और उसका जीजा (बहन का पति) जिनके नाम वह नहीं जानता था परंतु उन्हें वह पहचानता था । उसकी जानकारी में यह आया कि वे पिता और पुत्र थे जो भट्टापरा, रायपुर के निवासी हैं । ये सभी चारों व्यक्ति लाठी से लैस थे और उन्होंने अचानक उसे रोककर चारों ओर से घेर लिया तथा उनके हाथों में जो लाठी थी उससे उन्होंने उस पर हमला किया । उसके सिर, बाएं हाथ और पीठ आदि पर क्षतियां कायम हुईं । सिर से रक्त टपकने लगा था । वह जमीन पर गिर गया । इसके पश्चात्, वे घटनास्थल से भाग गए । उपास गोंड और देवास गोंड जो उसके साथ थे, घटना को देखकर वे भी घटनास्थल से भाग गए थे ।

8. तिरथबाई (अभि. सा. 3) ने यह कथन किया है कि उसका पति (मृतक) ने पुलिस थाना अकालतारा में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की थी । घासी राम (अभि. सा. 4) ने यह भी कथन किया है कि जेठूराम (मृतक) ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की थी । गोपाल पांडे, सहायक उप-निरीक्षक (अभि. सा. 11) ने पैरा 1 में यह कथन किया है कि जेठूराम (मृतक) ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की थी जिसे (प्रदर्श पी-18) अभिलिखित किया गया था । इन साक्षियों के साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि मृतक द्वारा स्वयं प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-18) दर्ज की गई थी । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में विनिर्दिष्ट रूप से मृतक के मृत्यु का कारण दर्शित हुआ है, रिपोर्ट को दर्ज करने के पश्चात् मृतक की क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । अतः, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-18) मृत्युकालिक कथन के रूप में माना जा सकता है और उसे साक्ष्य अधिनियम की धारा 32(1) के अधीन साक्ष्य में ग्रहण किया जा सकता है ।

9. **के. रामचन्द्रन रेड्डी और एक अन्य** बनाम **लोक अभियोजक**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है जो इस प्रकार है :–

> "6. ..... निःसंदेह मृत्युकालिक कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अधीन ग्राह्य है । यह शपथ पर कथन नहीं है, इसलिए,

---

[1] ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 1192.

इसकी सच्चाई की प्रतिपरीक्षा द्वारा परीक्षा की जा सकती है, न्यायालयों द्वारा ऐसे कथन पर कार्रवाई करने से पूर्व बारीकी से संवीक्षा की जानी चाहिए । जबकि मरने वाले व्यक्ति के शब्दों को बड़ी पवित्रता के साथ देखा जाता है क्योंकि ऐसा व्यक्ति जो मृत्यु के कगार पर पहुंच चुका है, उससे संभवतः झूठ बोलने की बात प्रकट नहीं होती है या किसी निर्दोष व्यक्ति को फंसाने के लिए षड्यंत्र किया जाना नहीं हो सकता है तब भी न्यायालय को सावधान रहना चाहिए कि मृतक के कथन के संबंध में कि ऐसा कथन शीघ्र सिखाया-पढ़ाया का परिणाम या उसकी कल्पना के परिणामस्वरूप प्रकट हुआ है । न्यायालय का यह समाधान होना चाहिए कि मृतक कथन करने के लिए स्वस्थ मानसिक दशा में था क्या मृतक के पास अपने हमलावरों को पहचानने का स्पष्ट अवसर था और उसने बिना किसी प्रभाव के अपना कथन किया है । जब एकबार न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि मृत्युकालिक कथन सही और स्वेच्छा से किया गया है तब यह पर्याप्त हो सकता है कि बिना किसी भी सम्पुष्टि के दोषसिद्धि का निष्कर्ष निकाला जा सकता है .....।"

10. अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि मृतक को सिर पर क्षतियां पहुंची थीं और वह कोई कथन करने की स्थिति में नहीं था । हमने सावधानीपूर्वक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श पी-18) तथा तिरथबाई (अभि. सा. 3) और घासी राम (अभि. सा. 4) के समक्ष किए गए मौखिक मृत्युकालिक कथन का परिशीलन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि मृतक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करते समय होशो-हवास में था । गोपाल पांडे, सहायक उप-निरीक्षक (अभि. सा. 11) ने यह कथन किया है कि जेठूराम (मृतक) ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की थी और उसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिलिखित की थी । उसने यह भी कथन किया है कि उसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन जेठू राम का कथन अभिलिखित किया था । प्रतिपरीक्षा के पैरा 5 में विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया गया है कि मृतक को बैलगाड़ी में पुलिस थाना ले जाया गया था और उस समय मृतक होशो-हवास में था । तिरथबाई (अभि. सा. 3) ने पैरा 1 में यह कथन किया है कि घटना के पश्चात् उसे उसके पति (मृतक) ने यह बताया था कि अपीलार्थी और उसका भाई, भांजा (बहन का पुत्र) ने उससे मारपीट की थी । मृतक ने उसे यह भी बताया था कि वह उपासराम और देवासराम के साथ था । मृतक के सिर पर क्षतियां पहुंची थीं और वहां से रक्त टपक रहा था । उसने यह भी कथन किया है

कि उसके पति द्वारा उसे ये बातें चेतराम के दरवाजे पर बताईं गई थीं और कुछ बातें जब उसे पुलिस थाने पर ले जाया गया था रास्ते पर उसे बताई गई थीं । उसने आगे यह भी कथन किया है कि वह अपने पति के साथ पुलिस थाने पर भी गई थी और उसके पति ने पुलिस थाने पर रिपोर्ट दर्ज की थी । घासी राम (अभि. सा. 4) ने पैरा 1 में यह कथन किया है कि मृतक जेठूराम उसका भाई था । मृतक ने चेतराम के मकान पर उसे यह बताया था कि अपीलार्थी और उसके भाई, उसका भांजा (बहन के पुत्र) एक अन्य व्यक्ति ने उससे मारपीट की । मृतक ने उसे यह भी बताया था कि वह उपास राम और देवास राम के साथ था । प्रतिपरीक्षा में पैरा 4 में उसने यह कथन किया है कि मृतक ने उससे बातचीत की जब उसे चेतराम के मकान से विलासपुर अस्पताल ले जाया जा रहा था तो उसने मृतक को ब्रेड दिया था जिसका उसने 1-1½ घंटे के भीतर उपभोग कर लिया था । उसने यह भी कथन किया है कि मृतक ने उसे चेतराम के मकान पर यह बताया था कि वह उपासराम और देवासराम के साथ था । इस साक्षी ने यह भी कथन किया है कि उसने चेतराम के मकान पर उपासराम और देवासराम से बातचीत नहीं की और न उसके पश्चात् । सम्मात (अभि. सा. 9) को पक्षद्रोही घोषित किया गया था किंतु उसने प्रतिपरीक्षा के पश्चात् पैरा 2 में यह कथन किया है कि मृतक ने उसे यह बताया था कि अपीलार्थी, उसका भाई और दामाद (बहन का पति) और भांजा (बहन के पुत्र) ने उससे लाठी से मारपीट की थी और देवास राम और उपासराम भयभीत होकर वहां से चले गए थे । चूंकि सम्मात (अभि. सा. 9) को पक्षद्रोही घोषित किया गया था किंतु उसके कथन का भाग जिसकी अभियोजन पक्षकथन द्वारा सम्पुष्टि की गई है, को साक्ष्य में स्वीकार किया जा सकता है । यह सुस्थापित है कि अभियोजन साक्षी का साक्ष्य को पूर्णतया केवल इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि अभियोजन पक्ष ने उसे पक्षद्रोही के रूप में चुना था तथा उससे प्रतिपरीक्षा की । ऐसे साक्षी के साक्ष्य को पूर्णतया अभिलेख से हटाया जाना नहीं माना जा सकता है । किंतु इसे उस वृत्तांत की सीमा तक स्वीकार किया जा सकता है जो उस पर निर्भर पाया गया इसलिए सम्मात (अभि. सा. 9) के कथन का भाग जिसकी तिरथबाई (अभि. सा. 3) और घासी राम (अभि. सा. 4) के कथनों से सम्पुष्टि हुई है, साक्ष्य में ग्राह्य है ।

11. **मुन्नु राजा** वाला मामला (उपरोक्त) में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है जो इस प्रकार है :–

" ..... बहादुर सिंह द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के आधार

पर पुलिस थाने पर किया गया कथन प्रदर्श पी-14 था । इसे सूचना देने के पश्चात् अभिलिखित किया गया था और वास्तव में इसके कारण अन्वेषण आरंभ हुआ था और इसलिए, यह कहना गलत है कि अन्वेषक अधिकारी के समक्ष कथन किया गया था । थाना भारसाधक अधिकारी जिसने कथन अभिलिखित किया था, उस समय अन्वेषक अधिकारी का सामर्थ्य नहीं रखता था जब उसने कथन अभिलिखित किया .....।"

12. **मेहरबान सिंह और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने जो कुछ अभिनिर्धारित किया इस प्रकार है :–

" 7. यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण है कि साक्षी न केवल घटना के स्थान पर पहुंचे थे बल्कि उन्होंने बैलगाड़ी में नजदीक के अस्पताल पर मृतक को ले जाने की कार्यवाही भी की और इससे यह दर्शित हुआ है कि मृतक हाकिया कुछ समय जीवित देखा गया होगा । जबकि उसे बैलगाड़ी में ले जाया रहा था तब वह क्षतिग्रस्त हालत में था और रास्ते में उसकी मृत्यु हो गई । तत्पश्चात् शव को सीधे पुलिस थाने ले जाया गया । मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया कि हाकिया का शव पुलिस थाने में था । अभि. सा. 1 से अभि. सा. 3 का साक्ष्य तथा चिकित्सा साक्ष्य और अन्य चारों ओर की परिस्थितियां विश्वसनीय रूप से साबित की गई हैं कि मृतक द्वारा किया गया मृत्युकालिक कथन सही होगा और सेशन न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने इस मृत्युकालिक कथन को स्वीकार करने में अति सावधानी बरती है और जब कभी इस बारे में किसी अभियुक्त के शामिल होने के बारे में कोई संदेह हुआ तब न्यायालय ने उसको फायदा प्रदान किया तथा उन अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया । तीन साक्षियों के समक्ष अपीलार्थियों के नाम मृतक द्वारा प्रकट किए गए थे जिन्होंने न्यायालय के समक्ष अपना साक्ष्य दिया था और दो न्यायालयों ने उस साक्ष्य को स्वीकार किया था और मामले में कोई दुर्बलता या न्याय की अपहानि का निष्कर्ष नहीं निकाला गया है । अपील में कोई गुणागुण नहीं है और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है ।"

---

[1] ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 299 = 2002 क्रिमिनल ला जर्नल 586.

13. **विशराम और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया जो इस प्रकार है :–

> "5. ..... अभि. सा. 1 ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में स्वयं मृत्युकालिक कथन से पूर्व इस बारे में उल्लेख किया है और आवश्यक ब्यौरे के लिए उसकी प्रतिपरीक्षा में ऐसी कोई महत्वपूर्ण बात प्रकट नहीं हुई थी । इसी भांति अभि. सा. 5 ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह घटना के स्थान पर भी पहुंची थी और चन्द्रशेखर को बेहोश पड़ा हुआ देखा था और उसका पति कमल किशोर होश-हवास में था और जब उससे पूछा गया तो उसने उससे यह बताया कि छह अपीलार्थियों ने उस पर हमला किया और उसे पीटा । इसके पश्चात्, कमल किशोर को अस्पताल ले जाया गया था..... ।"

14. **प्रकाश और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया जो इस प्रकार है :–

> "11. ..... साधारण अनुक्रम में पिता सहित कुटुंब के अन्य सदस्य से यह आशा की जाती है कि वे सबसे पहले आहत से हमलावरों के नाम के बारे में पूछे और यदि आहत संसूचित करने की स्थिति में है तब उससे युक्तियुक्त रूप से यह आशा की जाती है कि यदि वह हमलावरों को पहचानता है तो वह हमलावरों के नामों को बताए । वर्तमान मामले में यह अभिनिर्धारित करने के लिए ऐसा कोई अवसर नहीं है कि मृतक हमलावरों की पहचान करने की स्थिति में नहीं था क्योंकि यह कोई ऐसा मामला नहीं है कि मृतक अभियुक्त-व्यक्तियों को नहीं जानता था । अतः पूर्णतया यह संभव है कि मृतक से हमलावरों के नामों को पूछा जाता तो वह हमलावरों के नामों को बताता .....।"

15. उपरोक्त बातों से हमने यह निष्कर्ष निकाला है कि वर्तमान मामले में अभियोजन पक्ष द्वारा दिया गया मौखिक मृत्युकालिक कथन का साक्ष्य विश्वसनीय है और साक्ष्य में ग्राह्य है तथा यह अपीलार्थी की दोषसिद्धि के लिए आधारित हो सकता है । अभियोजन पक्ष का यह निश्चित मामला है कि अपीलार्थी द्वारा अपराध किया गया था और अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को सही युक्तियुक्त संदेहों के परे साबित

---

[1] ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 250 = 1993 क्रिमिनल ला जर्नल 304.

[2] ए. आई. आर. 1993 एस. सी. 65 = 1992 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 2582.

किया है ।

16. जहां तक हेतु का संबंध है अभियोजन पक्ष के लिए हमेशा यह आवश्यक नहीं है कि अभियुक्त की दोषसिद्धि को सुनिश्चित करने के लिए अपराध किए जाने के लिए निश्चित हेतु को सिद्ध करे । यह बात वर्णित मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर हमेशा संबंधित रही है । हेतु का अभाव अभियुक्त की दोषसिद्धि का परिणाम अपरिहार्य रूप से नहीं होता यदि अभियुक्त अकाट्य और विश्वसनीय साक्ष्य द्वारा दोषी पाया जाता है । तथापि, वर्तमान मामले में मृतक की हत्या करने के लिए अपीलार्थी का हेतु विद्यमान है । अभियोजन पक्ष ने यह अभिकथन किया है कि भूमि संबंधी विवाद के कारण अपीलार्थी और मृतक के बीच झगड़ा हुआ था ।

17 तिरथबाई (अभि. सा. 3) ने पैरा 1 में यह कथन किया है कि अपीलार्थी और मृतक के बीच पिछले दो वर्ष से भूमि संबंधी विवाद चल रहा था । घासी राम (अभि. सा. 4) ने पैरा 1 में यह कथन किया है कि अपीलार्थी ने मृतक के साथ झगड़ा किया था और अपीलार्थी के रिपोर्ट करने पर मृतक और उसका भाई घासी राम (अभि. सा. 4) कारागार भेजे गए थे ।

18. उपरोक्त साक्षियों के साक्ष्य से पूर्णतया यह सुस्पष्ट है कि अपीलार्थी का मृतक के साथ वैरभाव था और उन दोनों के बीच झगड़ा हुआ था ।

19. हमने तिरथबाई (अभि. सा. 3), घासी राम (अभि सा. 4), सम्मात (अभि. सा. 9), गोपाल पांडे, सहायक उप-निरीक्षक (अभि. सा. 11) के साक्ष्य की सावधानीपूर्वक संवीक्षा की । इन साक्षियों के साक्ष्य से पूर्णतया यह स्पष्ट हुआ है कि मामले में अपीलार्थी के अलावा कोई दूसरा व्यक्ति नहीं था जिसने मृतक पर लाठी से हमला किया था और मूर्छित हो जाने के कारण मृतक की मृत्यु हुई थी जो उसके मस्तिष्क और खोपड़ी पर क्षति का कारण हुई थी । अतः, हम विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष में कोई दुर्बलता नहीं पाते हैं कि वह अपीलार्थी था जिसने मृतक की मृत्यु कारित की ।

20. अब हम दंड संहिता की धारा 302 के मुकाबले धारा 304 के उपबंधों की मामले में परीक्षा करेंगे ।

21. दंड संहिता की धारा 300 का निर्धारक तथ्य यह है कि साशय क्षति कारित की गई है जो प्रकृति के साधारण अनुक्रम में हत्या किए जाने

के लिए पर्याप्त होनी चाहिए । यह बात अतात्विक है कि क्या अपराधी को इस बात की जानकारी थी कि इस प्रकार के कार्य से संभवतया मृत्यु हो जाएगी । ऐसे परिणाम के बारे में अपराधी की विषयपरक जानकारी असंगत है । साशय क्षति कारित करने के परिणाम को वस्तुपरक रूप से देखा जाना चाहिए । यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि क्या अपराधी का ऐसी शारीरिक क्षति पहुंचाने का आशय था जो प्रकृति के साधारण अनुक्रम में मृत्यु कारित किए जाने के लिए पर्याप्त थी, इस तरह के विच्छेदित कारक को ध्यान में रखना जरूरी है जिस पर ऐसा बल प्रयोग किया जाना जिससे प्रहार किया जाता है और आयुध का प्रकार जिसे प्रयुक्त किया गया है और महत्वपूर्ण अंग या शरीर का विशिष्ट भाग जिसे लक्ष्य किया गया है, और कारित की गई क्षति की प्रकृति, अपराध की उत्पत्ति और परिस्थितियां जिससे मृत्यु हो जाए ।

22. अपीलार्थी और मृतक के बीच भूमि संबंधी विवाद था । अपीलार्थी भूमि संबंधी विवाद के कारण मृतक से क्रोध की प्रबल भावना रखता था । तारीख 6 अगस्त, 1993 अर्थात् घटना के 15 दिन पूर्व उन दोनों के बीच झगड़ा हुआ था । अपीलार्थी ने मृतक पर हमला किया तथा उसके सिर पर लाठी से प्रहार किया । मृतक के शरीर पर करीब-करीब लगभग छह क्षतियां पाई गई थीं । क्षतियां जो मृतक जेठूराम को कायम हुई थीं, उनसे स्पष्टतया यह दर्शित हुआ है कि अपीलार्थी द्वारा पर्याप्त बल प्रयोग करके लाठी का प्रयोग किया था और क्षतियां शरीर के नाजुक भागों पर कारित हुई थीं ।

23. अपीलार्थी द्वारा प्रयोग में ली गई आयुध की प्रकृति, और वह रीति जिसमें अपीलार्थी ने मृतक पर हमला किया प्रहार की तीव्र मात्रा थी और यह प्रहार उसने मृतक पर किया और शरीर का भाग जिसे उसने ऐसे प्रहार किए जाने के लिए चुना था उससे यह दर्शित हुआ है कि उसका मृतक की हत्या किए जाने का आशय था । हमारी विचारित राय यह है कि पूर्वोक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी का कार्य दंड संहिता की धारा 300 के किसी अपवाद के अधीन नहीं आता है और ऐसे वर्तमान अपराध के बारे में हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानववध नहीं कहा जा सकता है ।

24. पूर्वगामी कारणों से हम अपील में कोई सार नहीं पाते हैं । तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

आर्य

जागीर सिंह

बनाम

जगजीत सिंह और एक अन्य

तारीख 15 मई, 2012

न्यायमूर्ति मुजफ्फर हुसैन अत्तर

रणबीर दंड संहिता, 1989 संवत् (1932 ईस्वी) – धारा 306/498-क – जमानत – जहां सक्षम अधिकारिता रखने वाले न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि अभियुक्त अभियोजन साक्ष्य के साथ छेड़छाड़ नहीं करेगा और किसी भी रीति से न्याय के अनुक्रम में अड़चन डालेगा वहां वह न्यायालय अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए अभियुक्त को जमानत देने या जमानत देने से इनकार करने के लिए सशक्त है, क्योंकि अभिलेख पर ऐसी कोई बात नहीं लाई गई कि अभियुक्त ने जमानत का दुरुपयोग किया है, अतः जमानत देने के आदेश में हस्तक्षेप करना न्यायोचित नहीं है ।

अभियोजन पक्ष के कथनानुसार बिमला कौर का वर्ष 1995 में अभियुक्त जगजीत सिंह से विवाह हुआ था और उसने दो पुत्रों को जन्म दिया । वर्ष 2011 में उन पुत्रों की आयु क्रमशः 13 और 15 वर्ष थी । रणबीर दंड संहिता की धारा 306/498-क के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रेशन सं. 74/11, यह अभिकथन करते हुए पुलिस थाना गंग्याल में दर्ज की गई थी कि उसके पति द्वारा बिमला कौर के साथ निरंतर प्रताड़ना और दुर्व्यवहार किया गया था जिस कारण उसने कुछ जहरीला पदार्थ खाकर आत्महत्या कर ली । अभियुक्त की गिरफ्तारी के पश्चात् उसने अपनी ओर से जमानत मंजूरी के लिए आवेदन फाइल किया था जिस आवेदन को विद्वान् नगर पालिका मजिस्ट्रेट, जम्मू द्वारा तारीख 8 जुलाई, 2011 को आदेश पारित करके मंजूर कर लिया गया था तथा अभियुक्त को 20,000/- रुपए के अलग-अलग प्रतिभूति बंधपत्र और वैयक्तिक बंधपत्र को देने के पश्चात् जमानत पर निर्मुक्त किया गया था । जमानत आदेश इन शर्तों के साथ हुआ था कि अभियुक्त अन्वेषण किए जाने के समय अन्वेषक अधिकारी के समक्ष जब कभी उसका हाजिर होना अपेक्षित हो तो हाजिर होगा और यह भी उपबंध किया है कि वह किसी भी रूप में अभियोजन साक्ष्य पर हेरफेर नहीं करेगा । याची ने विद्वान् सेशन न्यायाधीश, जम्मू के न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण याचिका फाइल की थी जिसे उन्होंने तारीख

26 सितंबर, 2011 को आदेश पारित करके खारिज कर दिया था । व्यथित व्यक्ति ने उच्च न्यायालय में याचिका फाइल की । उच्च न्यायालय द्वारा याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – जमानत का मंजूर किया जाना या इनकार किया जाना सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के विवेकाधीन है । जमानत को मंजूर किए जाने या इनकार किए जाने के मामले पर विचार करते हुए विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध की प्रकृति की ओर ध्यान देते हुए उल्लेख किया जाना चाहिए, मामले के समर्थन में एकत्रित किए गए साक्ष्य तथा प्रथमदृष्ट्या अपने समाधान पर पहुंचने के लिए जमानत इस बात पर मंजूर की जानी चाहिए कि क्या अभियुक्त अन्वेषक अभिकरण से सहयोग करेगा या विधि और न्याय से बचना चाहेगा । अभिलेख पर ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह इंगित होता हो कि अभियुक्त जिसकी जमानत मंजूर की गई थी, ने न्यायालय द्वारा उसे प्रदान की गई छूट का दुरुपयोग किया है । विद्वान् उप-महाधिवक्ता सुश्री जेड. एस. वताली ने भी अभियुक्त के आचरण के संबंध में कुछ भी नहीं कहा था । ऐसी दशा में जहां विद्वान् मजिस्ट्रेट यह उचित समझता है कि विवेक का प्रयोग करते हुए जमानत पर छूट दी जानी चाहिए उस पर उसे प्रथमदृष्ट्या स्वयं इस समाधान की स्थिति पर पहुंचना चाहिए कि जमानत मंजूर करने के पश्चात् अभियुक्त अभियोजन साक्ष्य में हेरफेर नहीं करेगा और किसी भी रीति में चाहे वह कोई भी हो न्याय के प्रक्रम को बाधित नहीं करेगा । मामले के रजिस्ट्रेशन के पश्चात् तथा विचारण न्यायालय द्वारा अंतिम निष्कर्ष निकाले जाने तक अभियुक्त के बारे में निर्दोष होने की उपधारणा की गई । ऐसा केवल तब हुआ जब उसके विरुद्ध सभी संदेह के परे दोषिता साबित हुई है । उसे उन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया है जिनके लिए उसे आरोपित किया गया था । जमानत मंजूर किए जाने की शक्ति का भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में अंतर्विष्ट संवैधानिक प्रत्याभूति की पृष्ठभूमि में विचार किया जाना चाहिए जो किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता की प्रत्याभूति अधिकार से संबंधित है । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने यह सुनिश्चित किया है कि अभियुक्त न्यायालय के समक्ष विचारण के दौरान उपलब्ध रहेगा । इस प्रयोजन की अभियुक्त को न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित करने से उसकी पूर्ति हो सकती है या उसे प्रतिभूतियों की अभिरक्षा में देने से हो सकती है । यद्यपि, विद्वान् मजिस्ट्रेट ने आक्षेपित आदेश में उन सिद्धांतों का उल्लेख किया जिन पर जमानत मंजूर की जा सकती है या नामंजूर की जा सकती है परंतु उस आदेश में समुचित समाधान के बारे में अभिलिखित नहीं किया गया है ।

तथापि, न्यायालय ने उस समय जमानत आवेदन में हस्तक्षेप नहीं किया है क्योंकि अभिलेख पर ऐसा कुछ भी प्रकट नहीं हुआ कि अभियुक्त ने जमानत मंजूर किए जाने की छूट का किसी प्रकार दुरुपयोग किए जाने का कोई प्रयास किया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173-क के अधीन रिपोर्ट सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष अभियुक्त के विरुद्ध फाइल की गई है । (पैरा 4, 5 और 6)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 253.

यह याचिका विद्वान् नगर पालिका मजिस्ट्रेट जम्मू द्वारा पारित किए गए आदेश तथा विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा पारित किए गए आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है ।

याची की ओर से	श्री सुनील सेठी, वरिष्ठ अधिवक्ता और सुश्री वीनू गुप्ता
प्रत्यर्थी सं. 1 की ओर से	श्री के. एस. चिब, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी सं. 2 की ओर से	सुश्री जेड. एस. वताली, उप-महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति मुजफ्फर हुसैन अत्तर – यह याचिका विद्वान् नगर पालिका मजिस्ट्रेट, जम्मू द्वारा तारीख 8 जुलाई, 2011 को पारित किए गए आदेश तथा विद्वान् सेशन न्यायाधीश, जम्मू द्वारा तारीख 26 सितंबर, 2011 को पारित किए गए आदेश को अपास्त करने की ईप्सा करते हुए फाइल की गई है । बिमला कौर का वर्ष 1995 में अभियुक्त जगजीत सिंह से विवाह हुआ था और उसने दो पुत्रों को जन्म दिया । वर्ष 2011 में उन पुत्रों की आयु क्रमशः 13 और 15 वर्ष थी । रणबीर दंड संहिता की धारा 306/498-क के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रेशन सं. 74/11, यह अभिकथन करते हुए पुलिस थाना गंग्याल में दर्ज की गई थी कि उसके पति द्वारा बिमला कौर के साथ निरंतर प्रताड़ना और दुर्व्यवहार किया गया था जिस कारण उसने कुछ जहरीला पदार्थ खाकर आत्महत्या कर ली । अभियुक्त की गिरफ्तारी के पश्चात् उसने अपनी ओर से जमानत मंजूरी के लिए आवेदन फाइल किया था जिस आवेदन को विद्वान् नगर पालिका मजिस्ट्रेट, जम्मू द्वारा तारीख 8 जुलाई, 2011 को आदेश पारित करके मंजूर कर लिया गया था तथा अभियुक्त को 20,000/- रुपए के अलग-अलग प्रतिभूति बंधपत्र और वैयक्तिक बंधपत्र को देने के पश्चात् जमानत पर निर्मुक्त किया गया था । जमानत आदेश इन शर्तों के साथ हुआ था कि अभियुक्त

अन्वेषण किए जाने के समय अन्वेषक अधिकारी के समक्ष जब कभी उसका हाजिर होना अपेक्षित हो तो हाजिर होगा और यह भी उपबंध किया है कि वह किसी भी रूप में अभियोजन साक्ष्य पर हेरफेर नहीं करेगा । याची ने विद्वान् सेशन न्यायाधीश, जम्मू के न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण याचिका फाइल की थी जिसे उन्होंने तारीख 26 सितंबर, 2011 को आदेश पारित करके खारिज कर दिया था ।

2. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री सुनील सेठी ने यह दलील दी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट तथा साक्ष्य में भी किए गए अभिकथन जो मामले के अन्वेषण के दौरान अभिलेख में प्रकट हुए हैं, यह हत्या का मामला है न कि आत्महत्या का । इस निमित्त विद्वान् काउंसेल ने मृतक और अभियुक्त का पुत्र लखविन्दर सिंह के कथन का उल्लेख किया है जिसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164-क के अधीन अभिलिखित किया गया था । विद्वान् काउंसेल ने यह भी निवेदन किया है कि विद्वान् मजिस्ट्रेट ने उन सिद्धांतों पर विचार किए बिना जमानत मंजूर की थी जिन पर उनके द्वारा विवेक का प्रयोग किया जाना था । विद्वान् काउंसेल ने आगे यह दलील दी कि केवल एक आधार पर अभियुक्त को न्यायिक अभिरक्षा पर प्रतिप्रेषित किया गया था, विद्वान् मजिस्ट्रेट ने उसकी जमानत मंजूर कर ली । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि विधि के अंतर्गत इस नियम के अधीन अभियुक्त का आवेदन मंजूर किए जाने का कोई आधार नहीं होगा ।

3. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में किए गए अभिकथन और अप्राप्तवय पुत्र के कथन निश्चित तौर पर गंभीर प्रकृति के हैं । यह अभिकथन किया गया है कि बिमला कौर ने अभियुक्त द्वारा बिमला कौर से किए गए दुर्व्यवहार के कारण उसका आत्महत्या किया जाना गंभीर प्रकृति का मामला है । इन अभिकथनों से यह दर्शित हुआ है कि कोई महिला जो अपना जीवन खो चुकी है जो बहुमूल्य है और न्यायालय में यह निवेदन किया गया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन रिपोर्ट सक्षम अधिकारिता के न्यायालय में अभियुक्त के विरुद्ध फाइल की गई है ।

4. जमानत का मंजूर किया जाना या इनकार किया जाना सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के विवेकाधीन है । जमानत को मंजूर किए जाने या इनकार किए जाने के मामले पर विचार करते हुए विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध की प्रकृति की ओर ध्यान देते हुए उल्लेख किया जाना चाहिए, मामले के समर्थन में एकत्रित किए गए साक्ष्य तथा प्रथमदृष्ट्या अपने समाधान पर पहुंचने के लिए जमानत इस बात पर मंजूर की जानी चाहिए

कि क्या अभियुक्त अन्वेषक अभिकरण से सहयोग करेगा या विधि और न्याय से बचना चाहेगा । अभिलेख पर ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह इंगित होता हो कि अभियुक्त जिसकी जमानत मंजूर की गई थी, ने न्यायालय द्वारा उसे प्रदान की गई छूट का दुरुपयोग किया है । विद्वान् उप-महाधिवक्ता सुश्री जेड. एस. वताली ने भी अभियुक्त के आचरण के संबंध में कुछ भी नहीं कहा था । ऐसी दशा में जहां विद्वान् मजिस्ट्रेट यह उचित समझता है कि विवेक का प्रयोग करते हुए जमानत पर छूट दी जानी चाहिए उस पर उसे प्रथमदृष्ट्या स्वयं इस समाधान की स्थिति पर पहुंचना चाहिए कि जमानत मंजूर करने के पश्चात् अभियुक्त अभियोजन साक्ष्य में हेरफेर नहीं करेगा और किसी भी रीति में चाहे वह कोई भी हो न्याय के प्रक्रम को बाधित नहीं करेगा ।

5. मामले के रजिस्ट्रेशन के पश्चात् तथा विचारण न्यायालय द्वारा अंतिम निष्कर्ष निकाले जाने तक अभियुक्त के बारे में निर्दोष होने की उपधारणा की गई । ऐसा केवल तब हुआ जब उसके विरुद्ध सभी संदेह के परे दोषिता साबित हुई है । उसे उन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया है जिनके लिए उसे आरोपित किया गया था । जमानत मंजूर किए जाने की शक्ति का भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में अंतर्विष्ट संवैधानिक प्रत्याभूति की पृष्ठभूमि में विचार किया जाना चाहिए जो किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता की प्रत्याभूति अधिकार से संबंधित है । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने यह सुनिश्चित किया है कि अभियुक्त न्यायालय के समक्ष विचारण के दौरान उपलब्ध रहेगा । इस प्रयोजन की अभियुक्त को न्यायिक अभिरक्षा में प्रतिप्रेषित करने से उसकी पूर्ति हो सकती है या उसे प्रतिभूतियों की अभिरक्षा में देने से हो सकती है ।

6. यद्यपि, विद्वान् मजिस्ट्रेट ने आक्षेपित आदेश में उन सिद्धांतों का उल्लेख किया जिन पर जमानत मंजूर की जा सकती है या नामंजूर की जा सकती है परंतु उस आदेश में समुचित समाधान के बारे में अभिलिखित नहीं किया गया है । तथापि, न्यायालय ने उस समय जमानत आवेदन में हस्तक्षेप नहीं किया है क्योंकि अभिलेख पर ऐसा कुछ भी प्रकट नहीं हुआ कि अभियुक्त ने जमानत मंजूर किए जाने की छूट का किसी प्रकार दुरुपयोग किए जाने का कोई प्रयास किया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173-क के अधीन रिपोर्ट सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष अभियुक्त के विरुद्ध रिपोर्ट फाइल की गई है ।

7. इसलिए, यह याचिका इस कारण से कायम रखे जाने योग्य नहीं है

और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है । तथापि, इस याचिका को खारिज किए जाने से विचारण न्यायालय के समक्ष जमानत के रद्दकरण चाहने के लिए आवेदन फाइल करने से व्यथित व्यक्ति को रोका नहीं जा सकेगा, इस मामले में, यह निष्कर्ष निकाला गया कि अभियुक्त ने किसी भी रीति में चाहे कोई भी हो मंजूर की गई जमानत पर छूट का दुरुपयोग किया है ।

याचिका खारिज की गई ।

आर्य

(2012) 2 दा. नि. प. 55 **दिल्ली**

हरीश चावला

बनाम

राज्य

तारीख 2 मई, 2011

न्यायमूर्ति (सुश्री) मुक्ता गुप्ता

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 307 – हत्या का प्रयत्न – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के परिशीलन से यह स्पष्ट होता है कि अभियुक्त ने अग्न्यायुध से हत्या करने के आशय से पीड़ित व्यक्ति के जांघ पर एक बार और पुनः दोबारा गोली चलाई और सह अपराधी से भी गोली चलाने के लिए कहा, अत: अभियुक्त को उक्त धारा के अधीन हत्या कारित करने के प्रयत्न के अपराध से दोषी ठहराना उचित है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी ने शिकायतकर्ता से किसी राशि की मांग की थी जिसका संदाय शिकायतकर्ता द्वारा नहीं किया गया । इससे क्रोधित होकर अपीलार्थी एक अन्य व्यक्ति, जो शिकायतकर्ता को पहले से जानता था, को साथ लेकर उसकी दुकान पर पहुंचा और राशि का संदाय न करने का कारण पूछा । जब शिकायतकर्ता ने राशि का संदाय करने में असमर्थता व्यक्त की तो अपीलार्थी ने देशी पिस्तौल निकाल लिया और उसकी दाहिनी जांघ पर गोली चला दी जो उसकी जांघ की खाल को बाईं ओर से वेधित करती हुई निकल गई । शिकायतकर्ता ने गोली की क्षतियों से बचने का प्रयत्न किया । अपीलार्थी

के साथ आए हुए व्यक्ति ने भी शिकायतकर्ता पर गोली चलाई । इसी दौरान शिकायतकर्ता का भाई और अन्य व्यक्ति घटनास्थल पर एकत्रित हो गए । लोगों को आता देख अपीलार्थी और उसके साथ आया हुआ व्यक्ति (सह अभियुक्त) भाग खड़े हुए । शिकायतकर्ता के कथन के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई और दोनों अभियुक्तों को गिरफ्तार कर लिया गया । अभियोजन साक्षियों, अभियुक्तों और प्रतिरक्षा साक्षियों के कथन अभिलिखित किए जाने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट कर दिया तथा सह अभियुक्त को दोषमुक्त कर दिया जिसके विरुद्ध वर्तमान अपील फाइल की गई । याची ने वर्तमान अपील के माध्यम से आक्षेपित आदेश को गुणागुण पर चुनौती नहीं दी और उसने अपने पक्षकथन को दंडादेश की प्रमात्रा तक ही सीमित रखा । अपील का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के परिशीलन से और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रकाश में स्पष्टत: भारतीय दंड संहिता की धारा 307 की परिधि के अंतर्गत आता है । अपराध में प्रयोग किया गया आयुध एक अग्न्यायुध है जो कि खतरनाक आयुध होता है । अपीलार्थी का आशय इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि अपीलार्थी ने अभि. सा. 1 की जांघ पर एक बार गोली चलाने के पश्चात् उसके ऊपर पुनः गोली चलाई थी और अपने सह अपराधी से भी उसके ऊपर गोली चलाने के लिए कहा था और यह मात्र संयोग था कि दोनों गोलियां शिकायतकर्ता को नहीं लगीं क्योंकि वह भागकर घर के अंदर चला गया था । जहां तक दंडादेश का संबंध है, धारा 307 दोनों स्थितियों पर विचार करती है । प्रथमत: यह कि जो कोई किसी कार्य को ऐसे आशय या ज्ञान से और ऐसी परिस्थितियों में करेगा कि यदि वह उस कार्य द्वारा मृत्यु कारित कर देता तो वह हत्या का दोषी होता या दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा और द्वितीयत: यदि ऐसे कार्य द्वारा किसी व्यक्ति को उपहति कारित हो जाए तो वह अपराधी या तो आजीवन कारावास से या ऐसे दंड से जैसा प्रथम भाग में वर्णित है अर्थात् 10 वर्ष दंडनीय होगा । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा पारित दंडादेश के आदेश के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि वे इन अपराध की घोरता को कम करने वाली परिस्थितियों के आधार पर अपीलार्थी की आयु कम है और उसकी एक विधवा माता भी है जिसकी देखभाल उसी को

करनी है और इसलिए अपीलार्थी को अधिकतम दंड प्रदान किया जाना उसके जीवन के लिए अत्यधिक कठोर और निराश करने वाला होगा । तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में त्रुटि कारित की है कि मामले के तथ्यों के आधार पर ऐसा दंड प्रदान किया जाना चाहिए जो आजीवन कारावास का हो । जैसाकि ऊपर अभिनिर्धारित किया गया है, अपीलार्थी द्वारा मृतक को क्षति पहले तब पहुंचाई गई थी जब अपीलार्थी का हत्या कारित करने का कोई आशय नहीं था और जब अपीलार्थी का आशय हत्या कारित करने का हो गया और उसने दो गोलियां चलाईं, तो मृतक को कोई क्षति कारित नहीं हुई थी । अत: वर्तमान मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी को जो अधिकतम दंडादेश प्रदान किया जा सकता है, दस वर्ष का कारावास और जुर्माना है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने ठीक अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी द्वारा कारित अपराध एक गंभीर अपराध था जिसके अंतर्गत वह अवैध तरीके से धन की मांग कर रहा था और जब मृतक ने उसके द्वारा मांगे गए धन का संदाय करने से इनकार किया तो उसने गोलियां चला दीं किंतु अपराध की घोरता को कम करने वाली परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उसको अधिकतम दंडादेश प्रदान नहीं किया जाना चाहिए । (पैरा 9, 10 और 11)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	(2009) 3 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 1450 = 2009 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 2479 : **पप्पू** उर्फ **हरी ओम** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	3
[2009]	(2009) 15 एस. सी. सी. 366 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. (सप्ली.) 1457 : **बल्कार सिंह** बनाम **उत्तराखंड राज्य** ;	3
[1983]	1983 क्रिमिनल ला जर्नल 331 : **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **बलराम पाटिल** ;	7
[1965]	ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 843 : **सरजू प्रसाद** बनाम **बिहार राज्य** ।	7

दांडिक (अपीली) अधिकारिता : 2000 की दांडिक अपील सं. 662.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री के. बी. एंडले (वरिष्ठ अधिवक्ता) और एम. एल. यादव

दिल्ली राज्य की ओर से श्री मनोज ओहरी (अपर लोक अभियोजक)

न्यायमूर्ति (सुश्री) मुक्ता गुप्ता – यह अपील तारीख 25 जुलाई, 2000 और तारीख 29 जुलाई, 2000 द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया है और दस वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश भोगने और 5,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने के लिए निदेशित किया गया है । यह निदेश भी दिया गया है कि अपीलार्थी जुर्माने के संदाय में चूक की दशा में एक वर्ष की अवधि का अतिरिक्त कारावास भोगेगा ।

2. मामले के तथ्य, जिनको ध्यान में रखते हुए अभियोजन को आरोप पत्र प्रस्तुत करना पड़ा, यह है कि शिकायतकर्ता विनोद कुमार गुप्ता तारीख 19 जून, 1998 को पूर्वाह्न लगभग 6.30 बजे अपनी दुकान स्थित 281/80, पांडव मार्ग, विश्वास नगर, शाहदरा में उपस्थित था, तभी अपीलार्थी हरीश चावला नरेन्द्र नामक व्यक्ति, जो उसको (शिकायतकर्ता को) पहले से जानता था, के साथ आया और पूछा कि उसने उसको राशि क्यों नहीं भेजा । शिकायतकर्ता द्वारा यह प्रश्न पूछे जाने पर कि वह राशि का संदाय क्यों करे, हरीश चावला ने एक देशी पिस्तौल निकाल लिया और उसकी दाहिनी जांघ पर गोली चला दी जो उसकी जांघ की खाल को बाईं ओर से वेधित करती हुई निकल गई । शिकायतकर्ता ने गोली की क्षतियों से बचने का प्रयत्न किया, नरेन्द्र ने भी उसके ऊपर पीछे से गोली चलाई । इसी दौरान, उसका भाई आ गया और अन्य व्यक्ति भी (घटनास्थल पर) एकत्रित होना आरंभ हो गए । अतः, लोगों को आता देख दोनों अभियुक्त भाग खड़े हुए । क्षतिग्रस्त (शिकायतकर्ता) के कथन, प्रदर्श अभि. सा. 1/क के कथन के आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श अभि. सा. 6/क रजिस्ट्रीकृत की गई और दोनों अभियुक्तों को गिरफ्तार कर लिया गया । अभियोजन साक्षियों, अभियुक्तों और प्रतिरक्षा साक्षियों के कथन अभिलिखित किए जाने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए

दोषसिद्ध कर दिया और दंडादिष्ट कर दिया जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने सह अभियुक्त नरेन्द्र को उसके विरुद्ध विरचित आरोपों से दोषमुक्त कर दिया ।

3. याची के विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने इस अपील को गुणागुण पर चुनौती नहीं दी है और उन्होंने अपनी दलीलों को दंडादेश की प्रमात्रा तक ही सीमित रखा है । उन्होंने अभिकथन किया कि अपीलार्थी को दस वर्ष की अवधि के कारावास का दंडादेश प्रदान किया गया था जिसमें से उसने सात वर्ष से अधिक की अवधि के कठोर कारावास का दंडादेश पहले ही भोग लिया है । उन्होंने अनुरोध किया कि अपीलार्थी के दंडादेश को उसके द्वारा पहले ही भोगे गए दंडादेश को ध्यान में रखते हुए किंचित परिवर्तन कर दिया जाए । उन्होंने **पप्पू** उर्फ **हरी ओम** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] और **बल्कार सिंह** बनाम **उत्तराखण्ड राज्य**[2] वाले मामलों का अवलंब लिया । उन्होंने दलील दी कि अभिकथित तथ्य कोई ऐसा कार्य कारित किए जाने के किसी आशय की परिधि के अंतर्गत नहीं आते जिससे मृत्यु कारित होने की संभावना हो किंतु किसी ऐसी क्षति को कारित किए जाने के आशय की परिधि के अंतर्गत आते हैं जिससे मृत्यु कारित होने की संभावना हो । माननीय उच्चतम न्यायालय ने ऊपर उद्धृत विनिश्चयों में उस विभेद पर विचार किया जो सामान्य परिस्थितियों में किसी व्यक्ति या व्यक्तियों की मृत्यु की अधिसंभाव्यता के बाबत अपराधियों के ज्ञान के मध्य विद्यमान होता है और जो किसी विशिष्ट व्यक्ति या व्यक्तियों के मध्य विभेदित किया जाता है जो उसके या उनके आसन्न खतरनाक कार्य के कारण कारित होते हैं और जिनके कारण कोई व्यावहारिक निश्चितता घटित हो जाती है । (माननीय उच्चतम न्यायालय ने) यह अभिनिर्धारित किया कि जबकि अपराधी की जानकारी को अधिसंभाव्यता की उच्चतम श्रेणी की जानकारी माना जाना चाहिए, उसका कार्य भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध होगा जिसको अपराधी द्वारा बिना किसी क्षमा के मृत्यु या इसी प्रकार की अन्य क्षति, जैसाकि ऊपर कहा गया है, कारित किया गया है ।

4. इसके विपरीत, विद्वान् सहायक अभियोजन अधिकारी ने दलील दी

---

[1] (2009) 3 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 1450 = 2009 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 2479.

[2] (2009) 15 एस. सी. सी. 366 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. (सप्ली.) 1457.

कि अपीलार्थी को उसके द्वारा चाहा गया अनुतोष प्रदान किया जाना चाहिए । अभिलेख पर यह दर्शित किए जाने के लिए पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध है कि अपीलार्थी का आशय हत्या करने और ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने का था जो सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है और भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध गठित करने के कार्य के लिए यह पर्याप्त है कि उसके निष्पादन में किसी प्रत्यक्ष कार्य के साथ युग्मित आशय हो और इसलिए प्रस्तुत अपील में कोई गुणागुण नहीं है और यह खारिज किए जाने योग्य है ।

5. मैंने पक्षों के विद्वान् काउंसेल को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया । वर्तमान मामले के तथ्य दर्शित करते हैं कि तारीख 19 जून, 1998 को पूर्वाह्न लगभग 6.30 से 6.40 बजे के मध्य अपीलार्थी एक अन्य सहयोगी, जिसको वह नरेंद्रर के नाम से पुकार रहा था, शिकायतकर्ता अभि. सा. 1 की दुकान पर गया और पूछा कि उसने (शिकायतकर्ता ने) उसको (अपीलार्थी को) राशि क्यों नहीं भेजी । अभि. सा. 1 द्वारा यह अभिकथित किए जाने पर कि वह राशि को बाद में भेज देगा, अपीलार्थी ने उसकी दाहिनी जांघ पर देशी पिस्तौल से गोली चला दी जो उसकी जांघ में दाहिनी ओर से घुसी और उसकी बाईं जांघ की खाल की ओर बढ़ी । तत्पश्चात् अपीलार्थी ने अपने सहापराधी नरेंद्रर को गोली चलाने के लिए निदेशित किया जिसने अभि. सा. 1 पर गोली चला भी दी । जब अभि. सा. 1 अपने घर में भाग कर घुस रह था, तो अपीलार्थी ने उसके ऊपर तीसरी गोली चला दी । इससे यह दर्शित होता है कि अपीलार्थी का स्पष्ट आशय अभि. सा. 1 की हत्या कारित करने का था । चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र प्रदर्श अभि. सा. 17/क में अभिलिखित है कि जांघ अभि. सा. 1/शिकायतकर्ता की जांघ के बीच के क्षेत्र में गोली द्वारा क्षति कारित की गई थी, यद्यपि क्षति अभिकथित रूप से साधारण प्रकृति की है ।

6. भारतीय दंड संहिता की धारा 307 को उद्धृत किया जाना सुसंगत होगा :–

> "307. **हत्या का प्रयत्न** – जो कोई किसी कार्य को ऐसे आशय या ज्ञान से और ऐसी परिस्थितियों में करेगा कि यदि वह उस कार्य द्वारा मृत्यु कारित कर देता तो वह हत्या का दोषी होता, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा और

यदि ऐसे कार्य द्वारा किसी व्यक्ति को उपहति कारित हो जाए, तो वह अपराधी या तो आजीवन कारावास से या ऐसे दंड से दंडनीय होगा जैसा एतस्मिनपूर्व वर्णित है ।

आजीवन सिद्धदोष द्वारा प्रयत्न – जबकि इस धारा में वर्णित अपराध करने वाला कोई व्यक्ति आजीवन कारावास के दंडादेश के अधीन हो, तब यदि उपहति कारित हुई हो तो वह मृत्यु से दंडित किया जा सकेगा ।"

7. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **सरजू प्रसाद** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में पैरा 6 में यह मत व्यक्त किया है कि मात्र यह तथ्य के, कि अभियुक्त द्वारा वास्तव में कारित की गई क्षति के कारण आहत का कोई महत्वपूर्ण अंग नहीं कटा था, मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 307 की परिधि से बाहर नहीं हो जाता । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **महाराष्ट्र राज्य** बनाम **बलराम पाटिल**[2] वाले मामले में यह मताभिव्यक्ति की है : –

"9. इस धारा के अधीन किसी दोषसिद्धि को न्यायानुमत ठहराए जाने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि शारीरिक क्षति ऐसी प्रकृति की ही होनी चाहिए जिसके कारण मृत्यु कारित होने की संभाव्यता हो, यद्यपि वास्तविक रूप से कारित क्षति की प्रकृति बहुधा किसी ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने में सहायता प्रदान कर सकती है जिससे अभियुक्त के आशय का पता लगाया जा सके, ऐसे आशय को अन्य परिस्थितियों से भी स्पष्ट किया जा सकता है और कुछ मामलों में तो वास्तविकता में कारित घावों को निर्दिष्ट किए बिना भी अभिनिश्चित किया जा सकता है । यह धारा अभियुक्त के कार्य और उसके परिणाम के मध्य, यदि कोई हो, भेद करती है । जहां तक उस व्यक्ति का संबंध है जिस पर आक्रमण किया गया है, ऐसे कार्य को किसी परिणाम द्वारा नहीं किया जा सकता किंतु फिर भी ऐसे भी मामले हो सकते हैं जिनमें अपराधी इस धारा के अधीन दायी होगा । यह आवश्यक नहीं है कि हमले के आहत को कारित वास्तविक क्षति सामान्य परिस्थितियों में क्षतिग्रस्त व्यक्ति की मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त होनी चाहिए । न्यायालय को जिस बात पर विचार करना है वह यह है कि क्या कार्य आशय या ज्ञान के साथ और इस धारा में उल्लिखित परिस्थितियों के अधीन परिणाम को ध्यान में लाए बिना

---

[1] ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 843.

[2] 1983 क्रिमिनल ला जर्नल 331.

किया गया था । अपराधी होने के लिए प्रयत्न के उपन्तिम कार्य होने की आवश्यकता नहीं है । यदि कुछ प्रकट रूप से किए गए कार्य के साथ उसके निष्पादन से जुड़ा हुआ कोई आशय विद्यमान है तो विधि की दृष्टि में यह पर्याप्त होगा ।

10. हमारे विचार में उच्च न्यायालय ने मात्र इस कारणवश कि आहत को पहुंचाई गई क्षतियां साधारण चोट की प्रकृति की थीं । भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन आरोप के अभियुक्त को दोषमुक्त करके सही नहीं किया ।"

8. विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल द्वारा **पप्पू** उर्फ **हरि ओम** (उपरोक्त) और **बल्कार सिंह** (उपरोक्त) वाले मामलों में दिए गए विनिश्चयों का अवलंब लिया जाना भ्रमपूर्ण है । **बल्कार सिंह** (उपरोक्त) वाला मामला पुरानी दुश्मनी का था और अपीलार्थी चाहता था कि अभियुक्त उसके साथ शराब पिए । अपीलार्थी ने मृतक द्वारा इनकार किए जाने पर पहले हवा में गोली चलाई और तत्पश्चात् ट्रैक्टर पर ताबड़तोड़ गोलियां चलाई जिसके परिणामस्वरूप मृतक की मृत्यु हो गई । **पप्पू** (उपरोक्त) वाले मामले में उस मामले के अपीलार्थी ने मृतक और उसके सहयोगियों के साथ उनके साथ ताश न खेलने देने के कारणवश झगड़ा किया था जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी ने मृतक के दाहिने कंधे पर बंदूक से गोली चला दी थी । इसके विपरीत, इस मामले में अपीलार्थी एक अन्य व्यक्ति के साथ क्षतिग्रस्त व्यक्ति की दुकान पर आया और पूछा उसने उसका धन उसके पास क्यों नहीं भेजा । अभि. सा. 1 द्वारा यह बताए जाने पर कि धन वापसी बाद में करेगा, अपीलार्थी ने उसकी जांघ पर गोली चला दी । यह गोली निश्चित रूप से हत्या करने के आशय के साथ चलाई गई नहीं कही जा सकती । तथापि, बाद में उसने अपने सह-अपराधी से गोली चलाने के लिए कहा जिसने गोली चला दी और तत्पश्चात् अपीलार्थी ने एक और गोली भी चलाई किंतु वह गोली अभि. सा. 1 को नहीं लगी । यद्यपि आरंभिक रूप से अपीलार्थी का सामान्य आशय अभि. सा. 1 की हत्या कारित करने का प्रतीत नहीं होता है, किंतु मात्र उसको धमकाने का प्रतीत होता है कि वह धन वापसी कर दे किंतु बाद में सह-अभियुक्त द्वारा गोली चलाए जाने और अपीलार्थी द्वारा स्वयं गोली चलाए जाने के कार्य अभि. सा. 1 की हत्या कारित करने के आशय के साथ किए गए अभिनिर्धारित नहीं किए जा सकते । प्रकट रूप से किए गए कार्यों के घटनाओं से आशय का स्पष्टत: पता चलता है ।

9. अतः, वर्तमान मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के परिशीलन से और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रकाश में स्पष्टत: भारतीय दंड संहिता की धारा 307 की परिधि के अंतर्गत आता है । अपराध में प्रयोग किया गया आयुध एक आग्नेयास्त्र है जो कि खतरनाक आयुध होता है । अपीलार्थी का आशय इस तथ्य से स्पष्ट हो जाता है कि अपीलार्थी ने अभि. सा. 1 की जांघ पर एक बार गोली चलाने के पश्चात् उसके ऊपर पुनः गोली चलाई थी और अपने सहापराधी से भी उसके ऊपर गोली चलाने के लिए कहा था और यह मात्र संयोग था कि दोनों गोलियां शिकायतकर्ता को नहीं लगीं क्योंकि वह भागकर घर के अंदर चला गया था ।

10. जहां तक दंडादेश का संबंध है, धारा 307 दोनों स्थितियों पर विचार करती है । प्रथमत: यह कि जो कोई किसी कार्य को ऐसे आशय या ज्ञान से और ऐसी परिस्थितियों में करेगा कि यदि वह उस कार्य द्वारा मृत्यु कारित कर देता तो वह हत्या का दोषी होता या दोनों में से किसी भांति के कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुर्माने से भी दंडनीय होगा और द्वितीयतः यदि ऐसे कार्य द्वारा किसी व्यक्ति को उपहति कारित हो जाए तो वह अपराधी या तो आजीवन कारावास से या ऐसे दंड से जैसा प्रथम भाग में वर्णित है अर्थात् 10 वर्ष दंडनीय होगा ।

11. विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा पारित दंडादेश के आदेश के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि वे इन अपराध की घोरता को कम करने वाली परिस्थितियों के आधार पर अपीलार्थी की आयु कम है और उसकी एक विधवा माता भी है जिसकी देखभाल उसी को करनी है और इसलिए अपीलार्थी को अधिकतम दंड प्रदान किया जाना उसके जीवन के लिए अत्यधिक कठोर और निराश करने वाला होगा । तथापि, विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में त्रुटि कारित की है कि मामले के तथ्यों के आधार पर ऐसा दंड प्रदान किया जाना चाहिए जो आजीवन कारावास का हो । जैसाकि ऊपर अभिनिर्धारित किया गया है, अपीलार्थी द्वारा मृतक को क्षति पहले तब पहुंचाई गई थी जब अपीलार्थी का हत्या कारित करने का कोई आशय नहीं था और जब अपीलार्थी का आशय हत्या कारित करने का हो गया और उसने दो गोलियां चलाईं, तो मृतक को कोई क्षति कारित नहीं हुई थी । अतः वर्तमान मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अपीलार्थी को जो अधिकतम दंडादेश प्रदान किया जा सकता है, दस वर्ष का कारावास और जुर्माना है । विद्वान् विचारण

न्यायालय ने ठीक अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी द्वारा कारित अपराध एक गंभीर अपराध था जिसके अंतर्गत वह अवैध तरीके से धन की मांग कर रहा था और जब मृतक ने उसके द्वारा मांगे गए धन का संदाय करने से इनकार किया तो उसने गोलियां चला दीं किंतु अपराध की घोरता को कम करने वाली परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उसे अधिकतम दंडादेश प्रदान नहीं किया जाना चहिए ।

12. अतः, भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि को बनाए रखते हुए दंडादेश पर पारित आदेश को इस सीमा तक उपांतरित किया जाता है कि अपीलार्थी 8 वर्ष की अवधि का कठोर कारावास और 30,000/- रुपए के जुर्माने, जिसमें से 25,000/- रुपए यदि वसूल कर लिए गए प्रतिकर के रूप में परिवादी को दे दिए जाएंगे, भोगेगा और जुर्माने के संदाय में चूक होने पर एक वर्ष का अतिरिक्त साधारण कारावास भी भोगेगा । अपील का तद्नुसार निपटारा किया जाता है । अपीलार्थी अभिरक्षा में है । वह शेष दंडादेश भोगेगा ।

अपील का निपटारा किया गया ।

शु.

(2012) 2 दा. नि. प. 64 **मुम्बई**

चन्द्रकांत विठाल पवार

बनाम

महाराष्ट्र राज्य और अन्य

तारीख 22 अगस्त, 2011

न्यायमूर्ति जे. एच. भाटिया

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 376(2)(क) और धारा 511 – बलात्संग करने का प्रयत्न – मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा साक्षियों के साक्ष्य से यह तो साबित होता है कि स्थानीय पुलिस थाने के हेड कांस्टेबल, अभियोक्त्री जिसकी आयु लगभग 14½ वर्ष थी, को उसके साथ मैथुन करने के लिए एकान्त स्थान में ले गया था, किंतु चिकित्सीय साक्ष्य के आधार पर गुप्तांग में प्रवेशन के बारे में ठोस संदेह था, अतः अभियुक्त को बलात्संग करने के प्रयत्न के अपराध के लिए दोषी ठहराना उचित होगा ।

इस अपील में मूल अभियुक्त ने अपर सेशन न्यायाधीश, मुम्बई द्वारा 2006 के सेशन मामला सं. 32 में तारीख 13 जुलाई, 2006 को पारित निर्णय और आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा अभियुक्त/अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 363, 366, 376(2)(क) तथा धारा 323 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया था और उसे निम्नलिखित रूप में दंडादेश दिया गया था दंड संहिता की धारा 363 के अधीन 1 वर्ष का कठोर कारावास और 500/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर 15 दिन का अतिरिक्त दंडादेश दिया गया । दंड संहिता की धारा 366 के अधीन 3 वर्ष का कठोर कारावास और 2,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर 30 दिनों का अतिरिक्त दंडादेश दिया गया । दंड संहिता की धारा 376(2) के अधीन 15 वर्ष का कठोर कारावास और 50,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का अतिरिक्त दंडादेश दिया गया । दंड संहिता की धारा 323 के अधीन एक मास का कठोर कारावास तथा 200/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने की रकम के संदाय में व्यतिक्रम करने पर 8 दिन का दंडादेश दिया गया । अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि अभियोक्त्री जो इस अपराध में पीड़िता है, वह लगभग 15 वर्ष की आयु की लड़की है । वह रात्रि में जिला होटल के नजदीक जंक्शन पर अपनी बहिन पूनम के साथ भीख मांगा करती थी । अभियुक्त हेड कांस्टेबल था जो शहर पुलिस थाने पर तैनात था और उक्त जंक्शन लीला होटल के नजदीक था जो उस पुलिस स्टेशन के स्थानीय सीमा के अंतर्गत है । तारीख 17 अक्तूबर, 2005 को लगभग 9.00 बजे अपराह्न अभियुक्त ने सबसे पहले अभियोक्त्री से कुछ पूछताछ की और चला गया था । लगभग 11.00 बजे अपराह्न वह आटोरिक्शा पर वहां पर पहुंचा और उसने उसे उसकी कलाई से पकड़ लिया और आटोरिक्शा में खींच लिया । उसकी बहिन द्वारा उसको छोड़ने के लिए अनुरोध किए जाने के बावजूद भी उसने यह कहा कि वह उसे अगली बत्ती पर छोड़ देगा । वह अभियोक्त्री को आटोरिक्शा में नाले पर ले गया और वे दोनों वहां पर उतरे और अभियुक्त और अभियोक्त्री ने सड़क से गुजरते हुए एक छोटी सी दीवार फांदी । तब वह उसे झाड़ी के पास ले गया जो मंदिर की दीवार के नजदीक थी और उसने उसे नीचे लिटा दिया और अभियोक्त्री के कपड़े उतार दिए । उसने अपनी पैंट और जांघिया उतार ली और उसके साथ बलात्संग किया । जब अभियोक्त्री और अभियुक्त वापस लौट रहे थे तब सत्यन नायर जो

इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट, शहर, अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट टर्मिनल-II में कार्य करता था, को कुछ संदेह महसूस हुआ और उसने अपनी बाइक रोकी और अभियोक्त्री से इस बारे में पूछा कि मामला क्या है । उसने घटना के बारे में बताया, इसलिए सत्यन नायर ने अभियुक्त का पहचान पत्र लिया और उसे अपनी बाइक पर बैठाकर पुलिस थाने ले गया । कुमार उक्रीडे लड़की को पुलिस थाने पर ले गया । अभियोक्त्री ने पुलिस थाने पर संपूर्ण घटना का वृत्तांत सुनाया और उसके आधार पर अपराध के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी तथा अभियुक्त और अभियोक्त्री को चिकित्सा परीक्षा के लिए पुलिस अस्पताल, नागपाडा भेज दिया गया था । डाक्टर शिवाजी डोंड ने उसी रात्रि को उन दोनों की परीक्षा की थी । अन्वेषण के दौरान घटनास्थल का पंचनामा तैयार किया गया था । अभियोक्त्री और अभियुक्त के कपड़े अभिगृहीत किए गए थे और उनके रक्त के नमूने और अभियोक्त्री की भग से स्वाब लेकर रसायन विश्लेषक के पास भेजा गया । लड़की की आयु के बारे में साक्ष्य भी एकत्र किया गया । अन्वेषण के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किया गया था और मामले को उसी सम्यक् अनुक्रम में विचारण के लिए सेशन न्यायालय के सुपुर्द कर दिया गया था । अभियुक्त ने आरोपों से दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया । अभियोजन पक्ष की ओर से कुल मिलाकर 13 साक्षियों की परीक्षा कराई गई थी । दस्तावेजों की बड़ी संख्या अभिलेख पर रखी गई थी । विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को सुनने के पश्चात् अभियुक्त को दोषसिद्ध करके दंडादिष्ट किया जैसाकि ऊपर कथन किया गया है । अभियुक्त ने विद्वान् विचारण न्यायालय के आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की । उच्च न्यायालय द्वारा अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियोक्त्री तथा उसकी बहिन पूनम, सत्यन नायर और कुमार उक्रीडे के मौखिक साक्ष्य तथा घटनास्थल का पंचनामा और चिकित्सा साक्ष्य और रसायन विश्लेषक की रिपोर्ट तथा विशिष्ट डी.एन.ए. रिपोर्ट पर विचार करने पर यह सिद्ध हुआ है कि अभियोक्त्री का उससे बलपूर्वक मैथुन किए जाने के आशय से उसका व्यपहरण किया गया था । मैं इन साक्षियों के साक्ष्य पर अविश्वास किए जाने के लिए कोई तात्विक सामग्री नहीं पाता हूं । यद्यपि अभियोक्त्री विद्यालय में कक्षा 6 की छात्रा थी क्योंकि वह विद्यालय में हाजिर नहीं हुई थी और इसलिए, उसे निकाल दिया गया था । इसलिए, उसे शिक्षित नहीं माना जा सकता है । उसकी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह अभिलिखित किया गया है कि अभियुक्त ने "संभोग" किया था उसने यह स्वीकार किया है कि वह "संभोग" शब्द के

अर्थ को नहीं समझती है । उसने न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में यह अभिसाक्ष्य दिया है कि अभियुक्त ने अभियोक्त्री के पेशाब करने वाली जगह में अपने अंग को रखा था और उसने वास्तविक शिश्न प्रवेश के बारे में नहीं बताया । उसका एक युवा लड़की होने पर नैसर्गिक रूप से उसे कुछ स्वच्छन्दता दी जा सकती है । डा. डोंड के साक्ष्य से यह दर्शित हुआ है कि उसकी योनिच्छद में औसत चीरे हुए थे और उन्होंने उन्हें भरा हुआ पाया था । उसने प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि चीरों के भरने की अवधि लगभग 5 से 7 दिन है । इससे यह अभिप्रेत होता है कि घटना से कम से कम पांच दिन पूर्व उसके योनिच्छद में औसत फटाव हुआ था और न कि इस घटना में । इस आयु में ऐसे फटाव अपरिहार्य रूप से मैथुन करने के कारण नहीं हो सकते हैं । चिकित्सा साक्ष्य से यह भी दर्शित है कि योनिच्छद में आसानी से केवल एक अंगुली जा सकती थी किंतु उसमें दो अंगुली नहीं जा सकी इसलिए इसे पूर्ण प्रवेशन नहीं माना जा सकता । इस मत को ध्यान में रखते हुए यह प्रकट हुआ है कि योनिच्छद के फटाव के बावजूद वह घटना से पूर्व किसी मैथुन क्रियाकलाप में आलिप्त नहीं रही होगी । दंड संहिता की धारा 375 के स्पष्टीकरण में यह उपबंध किया गया है कि बलात्संग के अपराध के लिए यह आवश्यक है कि मैथुन के लिए प्रवेशन का होना पर्याप्त हो । अब सुस्थिर विधि यह है कि बलात्संग के अपराध को गठित करने के लिए आंशिक प्रवेशन भी पर्याप्त है । चिकित्सा साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए मामले में पूर्व प्रवेशन की बात अस्वीकार की जाती है । अब यह प्रश्न पैदा होता है कि क्या आंशिक प्रवेशन भी हुआ था । चिकित्सा साक्ष्य से यह दर्शित है कि योनिच्छद का छिद्र कोमल नहीं था और उसके गुप्तांग भाग पर कोई अन्य क्षति नहीं पाई गई थी, यद्यपि उसकी पीठ पर उपरोक्त निर्दिष्ट क्षतियां पहुंची थीं जो घटना के समय पर खुरदरी सतह पर उसके लेटने पर घर्षण के कारण कारित हो सकती हैं । डा. डोंड ने प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि उसकी जानकारी में अभियोक्त्री के योनिच्छद की परीक्षा करने पर कोई नवीनतम मैथुन क्रियाकलाप की जानकारी नहीं हुई है । न केवल योनि में वीर्य का अभाव से बल्कि अभियोक्त्री के गुप्तांग भाग में प्रवेशन होने के बारे में प्रबल संदेह उत्पन्न होता है । इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह प्रकट हुआ है कि अभियुक्त इसलिए लड़की को घटनास्थल पर ले गया ताकि वह उससे मैथुन कर सके जिस कारण उसने उसके कपड़े उतार दिए और उसे जमीन पर लिटा दिया था तथा उसके कपड़े हटाने का प्रयोजन उसके साथ मैथुन किया जाना था । तथापि, इस संभावना की अनदेखी नहीं की जा

सकती कि उसके द्वारा प्रवेशन किए जाने के पूर्व उसके वीर्य का स्खलन पहले ही हो सकता है और इसलिए, वीर्य उसकी जांघिया पर पड़ा हुआ पाया गया था किंतु यह न तो उसकी योनि या योनि की बाहरी सतह पर पाया गया । अभियुक्त लगभग 47 वर्ष की आयु का था । यह लड़की 14½ वर्ष की आयु की थी । यदि उसने बलपूर्वक प्रवेशन किया होता तो तब अभियोक्त्री के कोमल होने के कारण उस पर किसी क्षति की संभावना होती किंतु इस बात का भी अभाव है । लड़की की पीठ पर ऊपरी क्षतियां आई हुई हैं और इसी तरह की क्षतियां अभियुक्त के टखनों पर आई हुई हैं जो कठोर और खुरदरी सतह के कारण संभव हो सकती हैं किंतु इससे स्वतः प्रवेशन किया जाना सिद्ध नहीं हो सकता है । दंड संहिता की धारा 363, 366 और 323 के अधीन आरोपों के लिए दोषसिद्धि और दंडादेश के संबंध में ऊपर उल्लिखित तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, मामले में किसी तरह का हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं है, अभियुक्त दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के अधीन आरोपों से दोषमुक्त होने का हकदार है बल्कि उसे दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के साथ पठित धारा 511 के अधीन दंडनीय बलात्संग का अपराध कारित करने के प्रयत्न के लिए दोषसिद्ध किया जाना उचित है क्योंकि अभियुक्त ने पुलिस थाने की स्थानीय सीमाओं के अंतर्गत उक्त अपराध किया है जहां उसे हेड कांस्टेबल के पद पर नियुक्त किया गया था । यदि कोई पुलिस अधिकारी दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के अधीन बलात्संग के अपराध का दोषी है तो उसे 10 वर्ष से कम की अवधि न हो, के लिए कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया जाना चाहिए किंतु इसमें आजीवन कारावास के साथ जुर्माने का भी दंड दिया जा सकता है । दंड संहिता की धारा 511 में यह उपबंध किया गया है कि जो कोई इस दंड संहिता द्वारा आजीवन कारावास से या कारावास से दंडनीय अपराध करने का, या ऐसा अपराध कारित किए जाने का प्रयत्न करेगा जहां कि ऐसे प्रयत्न के दंड के लिए कोई अभिव्यक्त उपबंध इस संहिता द्वारा नहीं किया गया है, वहां वह उस अपराध के लिए उपबंधित किसी भांति के कारावास से उस अवधि के लिए, जो, यथास्थिति आजीवन कारावास से आधे तक की या उस अपराध के लिए उपबंधित दीर्घतम अवधि के आधे तक की हो सकेगी या ऐसे जुर्माने से, जो उस अपराध के लिए उपबंधित है, या दोनों से दंडित किया जाएगा । (पैरा 20, 22, 23, 25, 26, 27, 29 और 31)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2006 की दांडिक अपील सं. 780.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री श्याम मेहता

प्रत्यर्थियों की ओर से सुश्री एस. वी. सोनवाने

न्यायमूर्ति जे. एच. भाटिया – इस अपील में मूल अभियुक्त ने अपर सेशन न्यायाधीश, मुम्बई द्वारा 2006 के सेशन मामला सं. 32 में तारीख 13 जुलाई, 2006 को पारित किए गए निर्णय और आदेश को चुनौती दी है जिसके द्वारा अभियुक्त/अपीलार्थी को दंड संहिता की धारा 363, 366, 376(2)(क) तथा धारा 323 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया गया था और उसे निम्नलिखित रूप में दंडादेश दिया गया था :–

> "(i) दंड संहिता की धारा 363 के अधीन 1 वर्ष का कठोर कारावास और 500/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर 15 दिन का अतिरिक्त दंडादेश दिया गया ।
>
> (ii) दंड संहिता की धारा 366 के अधीन 3 वर्ष का कठोर कारावास और 2,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर 30 दिनों का अतिरिक्त दंडादेश दिया गया ।
>
> (iii) दंड संहिता की धारा 376(2) के अधीन 15 वर्ष का कठोर कारावास और 50,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का अतिरिक्त दंडादेश दिया गया ।
>
> (iv) दंड संहिता की धारा 323 के अधीन एक मास का कठोर कारावास तथा 200/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने की रकम के संदाय का व्यतिक्रम करने पर 8 दिन का दंडादेश दिया गया ।"

2. संक्षेप में अभियोजन पक्षकथन इस प्रकार है कि अभियोक्त्री (अभि. सा. 7) जो इस अपराध में पीड़िता है, वह लगभग 15 वर्ष की आयु की लड़की है । वह रात्रि में जिला होटल के नजदीक जंक्शन पर अपनी बहिन पूनम के साथ भीख मांगा करती थी । अभियुक्त हेड कांस्टेबल था जो शहर पुलिस थाने पर तैनात था और उक्त जंक्शन लीला होटल के नजदीक था जो उस पुलिस स्टेशन के स्थानीय सीमा के अंतर्गत है । तारीख 17 अक्तूबर, 2005 को लगभग 9.00 बजे अपराह्न अभियुक्त ने सबसे पहले अभियोक्त्री से कुछ पूछताछ की और चला गया था । लगभग 11.00 बजे

अपराह्न वह आटोरिक्शा पर वहां पर पहुंचा और उसने उसे उसकी कलाई से पकड़ लिया और आटोरिक्शा में खींच लिया । उसकी बहिन द्वारा उसको छोड़ने के लिए अनुरोध किए जाने के बावजूद भी उसने यह कहा कि वह उसे अगली बत्ती पर छोड़ देगा । वह अभियोक्त्री को आटोरिक्शा में नाले पर ले गया और वे दोनों वहां पर उतरे और अभियुक्त और अभियोक्त्री ने सड़क से गुजरते हुए एक छोटी सी दीवार फांदी । तब वह उसे झाड़ी के पास ले गया जो मंदिर की दीवार के नजदीक थी और उसने उसे नीचे लिटा दिया और अभियोक्त्री के कपड़े उतार दिए । उसने अपनी पैंट और जांघिया उतार लिया और उसके साथ बलात्संग किया । जब अभियोक्त्री और अभियुक्त वापस लौट रहे थे तब सत्यन नायर (अभि. सा. 6) जो इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट, शहर, अंतरराष्ट्रीय एयरपोर्ट टर्मिनल-II में कार्य करता था, को कुछ संदेह महसूस हुआ और उसने अपनी बाइक रोकी और अभियोक्त्री से इस बारे में पूछा कि मामला क्या है । उसने घटना के बारे में बताया, इसलिए सत्यन नायर (अभि. सा. 6) ने अभियुक्त का पहचान पत्र लिया और उसे अपनी बाइक पर बैठाकर पुलिस थाने ले गया । कुमार उक्रीडे (अभि. सा. 11) लड़की को पुलिस थाने पर ले गया । अभियोक्त्री ने पुलिस थाने पर संपूर्ण घटना का वृत्तांत सुनाया और उसके आधार पर अपराध के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई थी तथा अभियुक्त और अभियोक्त्री को चिकित्सा परीक्षा के लिए पुलिस अस्पताल, नागपाडा भेज दिया गया था । डाक्टर शिवाजी डोंड ने उसी रात्रि को उन दोनों की परीक्षा की थी ।

3. अन्वेषण के दौरान घटनास्थल का पंचनामा तैयार किया गया था । अभियोक्त्री और अभियुक्त के कपड़े अभिगृहीत किए गए थे और उनके रक्त के नमूने और अभियोक्त्री के भग से स्वाब लेकर रसायन विश्लेषक के पास भेजा गया । लड़की की आयु के बारे में साक्ष्य भी एकत्र किया गया ।

4. अन्वेषण के पश्चात् आरोप पत्र फाइल किया गया था और मामले को उसी सम्यक् अनुक्रम में विचारण के लिए सेशन न्यायालय के सुपुर्द कर दिया गया था । अभियुक्त ने आरोपों से दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया । अभियोजन पक्ष की ओर से कुल मिलाकर 13 साक्षियों की परीक्षा कराई गई थी । दस्तावेजों की बड़ी संख्या अभिलेख पर रखी गई थी । विचारण न्यायालय ने पक्षकारों को सुनने के पश्चात् अभियुक्त को दोषसिद्ध करके दंडादिष्ट किया जैसाकि ऊपर कथन किया गया है ।

5. अभियुक्त अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल तथा विद्वान् सहायक

लोक अभियोजक को सुना गया । अभिलेख तथा विचारण न्यायालय की कार्यवाहियों का परिशीलन किया गया । अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी कि यह दर्शित करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि अभियुक्त ने बलपूर्वक बलात्संग किया था । उसने यह दर्शित किया कि लड़की सहमति पक्षकार रही होगी । दूसरा उसने यह दलील दी कि अभिलेख पर प्रकट साक्ष्य यह दर्शित करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि लड़की बलात्संग के समय पर 16 वर्ष की आयु से कम थी । तीसरा, उसने यह दलील दी कि अभिलेख पर साक्ष्य यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि वास्तविक शिश्न प्रवेशन हुआ था और बलात्संग किया गया था । उनके अनुसार यदि सम्पूर्ण अभियोजन साक्ष्य को स्वीकार भी कर लिया जाए तो यह बलात्संग किए जाने के प्रयत्न का मामला करेगा ।

6. दूसरी ओर, विद्वान् सहायक लोक अभियोजक ने चिकित्सा साक्ष्य तथा अभियोक्त्री के साक्ष्य का अवलंब लिया परंतु यह दलील दी कि यह प्रयत्न किए जाने का मामला नहीं है बल्कि बलात्संग का स्पष्ट मामला है और लड़की 16 वर्ष की आयु से कम है । उसकी सहमति असंगत है और उसने यह दलील दी कि अभियुक्त जो उस क्षेत्र में हेड कांस्टेबल के पद पर तैनात था, उसने अपने प्राधिकार का दुरुपयोग किया है तथा इसलिए, लड़की उससे कोई प्रतिरोध नहीं कर सकी ।

7. अभिकथित बलात्संग के साक्ष्य पर विचार करने से पूर्व यह लाभदायक होगा कि अभियोक्त्री की आयु के बारे में साक्ष्य पर विचार किया जाए । अभियोक्त्री (अभि. सा. 7) ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह साक्ष्य को अभिलिखित करते समय 15 वर्ष की आयु थी और यह साक्ष्य मई, 2006 में अभिलिखित किया गया था और घटना तारीख 17 अक्तूबर, 2005 को घटी थी । पूनम (अभि. सा. 9) उसकी बड़ी बहिन है । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसकी आयु अभिलिखित करते समय लगभग 17 वर्ष थी और उसके अनुसार अभियोक्त्री उससे दो वर्ष छोटी थी ।

8. डा. शिवाजी डोंड (अभि. सा. 8) के साक्ष्य से यह दर्शित हुआ है कि एक्सरे द्वारा ओस्सीफिकेशन, कोहनी के चारों ओर हड्डियों का अस्थिशीर संबंधी यूनियन, कमर, प्रगण्डिका और घुटने गले हुए नहीं थे । वर्णित इतिवृत के अनुसार उसे दो वर्ष पूर्व से मासिक धर्म हो रहा था । उनके अनुसार अस्थियों के साथ अस्थिशीर संबंधी यूनियन के गलने की भिन्न-भिन्न अवधियां होती हैं । कमर की संधि का लगभग 17 वर्ष पर गलन होता है । घुटने की संधि लगभग 15½ वर्ष पर गलन होता है । कंधे

की संधि का लगभग 17 से 18 वर्ष पर गलन होता है चूंकि कोहनी संधि का भी गलन नहीं हुआ था । उसने यह राय व्यक्त की है कि लड़की की आयु 13 से 14 वर्ष थी ।

9. श्रीमती हेमा देसाई (अभि. सा. 1) डाक्टर एस. आर. के. मार्ग, म्यूनिसिपल अपर प्राइमरी गुजराती स्कूल में वर्ष 1997 से प्रधानाचार्य के पद पर तैनात थी । उसने अभियोक्त्री के विद्यालय में प्रवेश के बारे में अभिलेख प्रस्तुत किया और यह अभिसाक्ष्य दिया कि विद्यालय रजिस्टर के अनुसार अभियोक्त्री का 28 जून, 2001 को उक्त विद्यालय में भर्ती किया गया था और जब वह छठवीं कक्षा की छात्र थी तब उसने 22 नवंबर, 2005 को विद्यालय छोड़ दिया था । इस अभिलेख के अनुसार उसकी जन्म तिथि 4 मई, 1991 थी । अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी कि उसके नाम से कई छात्र हो सकते हैं केवल उस आधार पर कोई लड़की अभियोक्त्री के नाम की हो सकती है जिसने विद्यालय में प्रवेश लिया हो और उसकी जन्म तिथि 4 मई, 1991 हो सकती है, यह उपधारणा नहीं की जा सकती है कि अभियोक्त्री वही लड़की है, प्रतिरक्षा पक्ष के काउंसेल की दलील को इस साक्ष्य द्वारा उलट दिया गया है । अभिलेख का परिशीलन करने के पश्चात् मैंने यह निष्कर्ष निकाला है कि प्रतिपरीक्षा के समय पर पूरा रजिस्टर निरीक्षण के लिए उपलब्ध था । इस न्यायालय के समक्ष विद्वान् काउंसेल यह नहीं कह सकता है कि इस नाम से कोई दूसरी छात्रा थी, क्योंकि पिता का नाम तथा उपनाम और माता का नाम रजिस्टर में अंकित है । क्या वह उसी उपनाम के किसी अन्य छात्रा के नाम के बारे में बता सका है जिसका वही उपनाम हो, केवल इस उपनाम से इस दलील को स्वीकार करने में कठिनाई महसूस होती है कि एक छात्र की अपेक्षा अधिक छात्र ऐसे हो सकते हैं जिनका प्रथम नाम और पिता का नाम, माता का नाम तथा उपनाम हो । इसलिए, मैं विद्यालय अभिलेख के साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं पाता हूं । विद्यालय अभिलेख के अनुसार अभियोक्त्री की जन्म तिथि 4 मई, 1991 है । यह घटना अक्तूबर, 2005 में घटित हुई थी, इससे यह अभिप्रेत है कि अभियोक्त्री की घटना के समय पर लगभग 14½ वर्ष आयु थी । चिकित्सा साक्ष्य से भी उसकी सम्पुष्टि होती है क्योंकि वह 16 वर्ष आयु से कम बताई गई है । इसलिए, मैथुन के प्रयोजन के लिए उसकी सहमति असंगत है ।

10. अभियोक्त्री के साक्ष्य से यह दर्शित हुआ है कि वह लीला होटल

के सामने जंक्शन पर भीख मांगने के लिए जाया करती थी तथा उसकी बहिन पूनम (अभि. सा. 9) भी भीख मांगने के लिए जाया करती थी । उसके अनुसार तारीख 17 अक्तूबर, 2005 को लगभग 9.00 बजे अपराह्न अभियुक्त उसके पास आया और उसने उससे कुछ पूछताछ की और चला गया । लगभग 11.00 बजे अपराह्न अभियुक्त पुनः आटोरिक्शा में उनके पास पहुंचा और उसने उसकी कलाई पकड़ी और उसे खींचकर रिक्शा में बैठा लिया । उसकी बहिन पूनम (अभि. सा. 9) ने अभियुक्त से उसे छोड़ने का अनुरोध किया किंतु अभियुक्त ने उससे यह कहा कि वह अगली बत्ती पर उसे छोड़ देगा । पूनम (अभि. सा. 9) के अनुसार जब उसने ऐसा अनुरोध किया तब अभियुक्त ने उसे जुर्माने के आरोप में फंसाने की धमकी दी । यह कहते हुए वह लड़की को होटल हयात पुलिस चौकी की दिशा की ओर रिक्शा पर ले गया । कुछ दूरी तक पूनम (अभि. सा. 9) ने उनका पीछा किया किंतु वह उन्हें पकड़ने में सफल नहीं हो सकी । तब वह अपने घर चली गई और उसने अपनी माता को इस घटना की सूचना दी और तब वे शहर पुलिस स्टेशन गए परंतु न तो लड़की और न अभियुक्त वहां पर थे । ढूंढने के बावजूद भी वह उनको नहीं ढूंढ पाई । वे पुनः उक्त पुलिस थाने पर गए । उस समय अभियोक्त्री वहां पर मौजूद थी और उसके कथन पुलिस द्वारा अभिलिखित किया गया । अभियोक्त्री का लीला होटल जंक्शन पर आटोरिक्शा में ले जाने के बारे में दिया गया साक्ष्य की पूनम (अभि. सा. 9) के अभिसाक्ष्य से सम्पुष्टि होती है ।

11. अभियोक्त्री (अभि. सा. 7) के साक्ष्य से यह दर्शित हुआ है कि एक छोटी सी दीवार को फांद कर जाने के पश्चात् अभियुक्त उसे झाड़ियों पर ले गया था जहां कुछ व्यक्ति सो रहे थे और वह उसे सांई बाबा मंदिर की दीवार के नजदीक ले गया । उस स्थान पर उसने उससे कपड़े उतार लेने के लिए कहा और उसने अपनी पैंट और जांघिया भी उतार ली थी । उसने अपनी सलवार उतार दी और उसे उसने लिटा दिया, तत्पश्चात् अभियुक्त ने उसके गुप्तांग भाग पर अपना पुरुष अंग रख दिया । उसके अनुसार इस तरह उसकी पीठ पर दर्द हुआ था । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि सिक्के जो उसे भीख में मिले थे, सलवार में बांधे हुए थे, वे घटनास्थल पर बिखर गए थे । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया कि घटना के समय पर उसने अपनी सलवार नीचे उतार ली थी न कि सभी कपड़े । घटना के पश्चात् अभियुक्त दीवार के नजदीक उसे ले गया और उससे कहा कि वह उसे उसकी बहिन के पास उतार देगा ।

12. सत्यन नायर (अभि. सा. 6) के साक्ष्य के अनुसार वह इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट, शहर इंटरनेशनल एयरपोर्ट, टर्मिनल-II में कार्य करता था । तारीख 17 अक्तूबर, 2005 को लगभग 11.15 बजे अपराह्न वह अपनी बाइक पर टर्मिनल की ओर जा रहा था । जब वह सिग्नल की ओर मुड़ा तो उसे एक लड़की के साथ वर्दी में पुलिस का आदमी दिखाई दिया । उसको संदेह हुआ और इसलिए, उसने बाइक से यू-टर्न लिया और देखा कि अभियुक्त के साथ अभियोक्त्री थी । जब उसने लड़की को विश्वास में लिया तब उस लड़की ने उसे घटने के बारे में बताया इसके पश्चात् सत्यन नायर (अभि. सा. 6) ने अभियुक्त से अपनी बाइक पर बैठने के लिए कहा, अभियुक्त से पहचान पत्र लेने के पश्चात् बाइक पर साथ चलने के लिए कहा और वह अभियुक्त को पुलिस थाने ले गया वहां उसने पुलिस वाले को पेश किया । इस तथ्य में कोई विवाद नहीं है ।

13. कुमार उक्रीडे (अभि. सा. 11) ने इस विषय पर सत्यन नायर (अभि. सा. 6) के साक्ष्य का समर्थन किया है । उसके अनुसार, उसने स्वयं तथा एक अन्य व्यक्ति ने अभियुक्त को एक लड़की को ले जाते हुए देखा जिसे उसने उसकी भुजाओं से पकड़ रखा था । वे उसे पुलिस थाने ले गए । इस साक्षी के साक्ष्य से यह दर्शित हुआ है कि अभियुक्त ने कुछ पैसे देकर मामले में समझौता करने की कोशिश की परंतु वह सफल नहीं हो सका ।

14. बाद में अभियोक्त्री को पुलिस थाने ले जाया गया और इस लड़की के कथन सहायक पुलिस निरीक्षक मोहन वाघमरे (अभि. सा. 10) द्वारा अभिलिखित किया गया था । यह कथन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट (प्रदर्श-26) के रूप में माना गया था जिसमें सभी तथ्य प्रकट किए गए हैं । अभियुक्त तथा अभियोक्त्री के कपड़े तत्काल अभिगृहीत किए गए थे और उन्हें पंचनामा (प्रदर्श-23) के माध्यम से अभिगृहीत किया गया । उन दोनों को चिकित्सा परीक्षा के लिए भेजा गया था । घटनास्थल पंचनामा (प्रदर्श-21) भी तैयार किया गया था जिससे यह प्रकट हुआ कि घटनास्थल पर कुछ सिक्के बिखरे पड़े हुए थे और उन्हें अभिगृहीत किया गया था ।

15. डा. शिवाजी डोंड (अभि. सा. 8) के साक्ष्य से यह प्रकट हुआ है कि तारीख 18 अक्तूबर, 2005 को लगभग 3.30 बजे पूर्वाह्न अभियोक्त्री को उसके द्वारा चिकित्सा परीक्षा के लिए पुलिस अस्पताल, नागपाड़ा लाया गया था । उसके अनुसार अभियोक्त्री ने आटोरिक्शा में पुलिस व्यक्ति के साथ जाने के बारे में कहानी बताई थी और तब उसके कपड़े उतार कर

उससे बलात्संग किया गया था । उसके द्वारा उसकी कहानी को अभिलिखित किया गया । उसकी शारीरिक परीक्षा करने पर उसने उसके शरीर पर निम्नलिखित दो क्षतियां पाई थीं :–

> "(i) पीठ के निचले भाग पर खुरची हुई खरोंच जो दाहिने नितम्ब के 4 से. मी. उर्ध्वाधर 3 से. मी. क्षैतिज पर । रक्त टपकते हुए नहीं देखा गया था केवल पृष्ठीय अधिचर्म परत छिले हुए थे ।
>
> (ii) ओक्सीजिल रिजन के साथ पृष्ठीय अधिचर्म परत छिला हुआ था जो 4 से. मी. x 2.5 से. मी. क्षति के आकार का था ।"

उसके अनुसार ये क्षतियां कठोर और खुरदरी सतह पर घर्षण के कारण हो सकती हैं । क्षतियों की आयु छह घंटे के अंतर्गत की थी ।

16. अभियोक्त्री के गुप्तांग भागों की परीक्षा करने पर उन्होंने यह पाया कि योनिच्छद की परिधि 6, 9 और 1 बजे की स्थिति पर फटी हुई थी और उस पर औसत चीरे थे और भर गए थे । हाइमीनियल ओरिफिस में एक अंगुली आसानी से प्रवेश कर सकती थी और इसमें कोमलता नहीं थी । कोई अन्य क्षति जानकारी में नहीं आई क्योंकि दो अंगुलियां फटे हुए योनिच्छद में नहीं घुस सकती थीं इसलिए, पूर्ण शिश्न प्रवेश नहीं हो सका था । उन्होंने योनिक धब्बा, पोस्टरियर भग स्वाब और सर्विकल धब्बे एकत्रित किए गए थे । उन्होंने लड़की के उस क्षेत्र के रक्त का नमूना भी एकत्रित किया था ।

17. डा. डोंड (अभि. सा. 8) के साक्ष्य के अनुसार उन्होंने उसी रात्रि 4.00 बजे पूर्वाह्न अभियुक्त की भी परीक्षा की थी और उसके शरीर पर निम्नलिखित क्षतियां पाई थीं :–

> "(1) टिनियल गण्डक के दाहिने घुटने के संधि पर खुरचा हुआ खरोंच जो बाहरी आकार में 1 से. मी. x 1 से. मी., निचली ओर अधिचर्म के ढेर एकत्र हैं ।
>
> (2) टिनियल गण्डक में दाहिने घुटने के संधि पर खुरची हुई खरोंच जो सतह पर 5 से. मी. x 5 से. मी. है और अधिचर्म पार्श्व में ढेर रूप में एकत्र ।"

18. डाक्टर के अनुसार, क्षतियों की आयु छह घंटे के अंतर्गत थी और क्षतियां कठोर और खुरदरा सतह पर घर्षण के परिणामस्वरूप हो सकती हैं । डा. डोंड ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि जांच करने पर अभियुक्त

ऐसा कोई स्पष्टीकरण नहीं दे सका कि ये क्षतियां कैसे और कब कारित हुई थीं । साक्ष्य से यह भी दर्शित हुआ है कि अभियुक्त के शिश्न पर सरसरी निगाह डालने पर उसका स्वाब तथा उसके उस क्षेत्र के रक्त के नमूने एकत्रित किए गए थे । उन्होंने सभी नमूनों की रिपोर्ट रसायन विश्लेषक को भेजी थी ।

19. रसायन विश्लेषक की रिपोर्ट प्रदर्श-42 के अनुसार एक वीर्य का धब्बा अभियुक्त के जांघिया के पिछली ओर पाया गया था और एक वीर्य का धब्बा जो लगभग 2 से. मी. व्यास का था, कुर्ते के सामने की ओर पाया गया था और दो वीर्य के अलग-अलग धब्बे जो लगभग 1 से. मी. व्यास के थे अभियोक्त्री के सलवार के मध्य भाग पर पाए गए थे । डी. एन. ए. रिपोर्ट प्रदर्श-42क के अनुसार कुर्ते पर वीर्य के धब्बे और पीड़िता की सलवार पर वीर्य के धब्बे औक (यथामुद्रित), पर वीर्य के धब्बे तथा अभियुक्त की जांघिया पर वीर्य के धब्बे जो यथावत अभियुक्त के उस स्थान के रक्त से मेल खाते हैं और इन कपड़ों पर वीर्य के धब्बे और उस स्थान का रक्त एक जैविक रूप से हैं । इस प्रकार यह दर्शित हुआ है कि अभियुक्त का वीर्य न केवल उसकी जांघिया पर पाया गया था बल्कि अभियुक्त के कपड़ों पर भी पाया गया था और इन कपड़ों को घटना के शीघ्र पश्चात् अभिगृहीत किया गया था । इस बात पर विचार करते हुए चिकित्सा अधिकारी डा. डोंड ने यह राय व्यक्त की है कि अभियुक्त अभियोक्त्री के साथ मैथुन क्रियाकलाप में शामिल था ।

20. अभियोक्त्री तथा उसकी बहिन पूनम (अभि. सा. 9), सत्यन नायर (अभि. सा. 6) और कुमार उक्रीडे (अभि. सा. 11) के मौखिक साक्ष्य तथा घटनास्थल का पंचनामा और चिकित्सा साक्ष्य और रसायन विश्लेषक की रिपोर्ट तथा विशिष्ट डी. एन. ए. रिपोर्ट पर विचार करने पर यह सिद्ध हुआ है कि अभियोक्त्री का उससे बलपूर्वक मैथुन किए जाने के आशय से उसका व्यपहरण किया गया था । मैं इन साक्षियों के साक्ष्य पर अविश्वास किए जाने के लिए कोई तात्विक सामग्री नहीं पाता हूं ।

21. विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभियुक्त बलात्संग के अपराध का दोषी है । अभियुक्त के विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी है कि यदि चिकित्सा साक्ष्य का रसायन विश्लेषक की रिपोर्ट के साथ सावधानीपूर्वक परिशीलन किया जाए तब अभियोजन पक्ष यह सिद्ध नहीं कर सकता है कि बलात्संग का अपराध कारित किया गया था, यद्यपि बलात्संग किए जाने का प्रयत्न किया गया

है । इस दलील का मूल्यांकन करने पर चिकित्सा साक्ष्य का बारीकी से संवीक्षा की जानी आवश्यक होगी ।

22. यद्यपि अभियोक्त्री विद्यालय में कक्षा 6 की छात्रा थी क्योंकि वह विद्यालय में हाजिर नहीं हुई थी और इसलिए, उसे निकाल दिया गया था । इसलिए, उसे शिक्षित नहीं माना जा सकता है । उसकी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह अभिलिखित किया गया है कि अभियुक्त ने "संभोग" किया था उसने यह स्वीकार किया है कि वह "संभोग" शब्द के अर्थ को नहीं समझती है । उसने न्यायालय के समक्ष अपने साक्ष्य में यह अभिसाक्ष्य दिया है कि अभियुक्त ने अभियोक्त्री के पेशाब करने वाली जगह में अपने अंग को रखा था और उसने वास्तविक शिश्न प्रवेश के बारे में नहीं बताया । उसका एक युवा लड़की होने पर नैसर्गिक रूप से उसे कुछ स्वच्छन्दता की जा सकती । डा. डोंड (अभि. सा. 8) के साक्ष्य से यह दर्शित हुआ है कि उसकी योनिच्छद में औसत चीरे हुए थे और उन्होंने उन्हें भरा हुआ पाया था । उसने प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि चीरों के भरने की अवधि लगभग 5 से 7 दिन है । इससे यह अभिप्रेत होता है कि घटना से कम से कम पांच दिन पूर्व उसके योनिच्छद में औसत फटाव हुआ था और न कि इस घटना में । इस आयु में ऐसे फटाव अपरिहार्य रूप से मैथुन करने के कारण नहीं हो सकते हैं । चिकित्सा साक्ष्य से यह भी दर्शित है कि योनिच्छद में आसानी से केवल एक अंगुली जा सकती थी किंतु उसमें दो अंगुली नहीं जा सकी इसलिए इसे पूर्ण प्रवेशन नहीं माना जा सकता । इस मत को ध्यान में रखते हुए यह प्रकट हुआ है कि योनिच्छद के फटाव के बावजूद वह घटना से पूर्व किसी मैथुन क्रियाकलाप में आलिप्त नहीं रही होगी ।

23. दंड संहिता की धारा 375 के स्पष्टीकरण में यह उपबंध किया गया है कि बलात्संग के अपराध के लिए यह आवश्यक है कि मैथुन के लिए प्रवेशन का होना पर्याप्त हो । अब सुस्थिर विधि यह है कि बलात्संग के अपराध को गठित करने के लिए आंशिक प्रवेशन भी पर्याप्त है । चिकित्सा साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए मामले में पूर्व प्रवेशन की बात अस्वीकार की जाती है । अब यह प्रश्न पैदा होता है कि क्या आंशिक प्रवेशन भी हुआ था । चिकित्सा साक्ष्य से यह दर्शित है कि योनिच्छद का छिद्र कोमल नहीं था और उसके गुप्तांग भाग पर कोई अन्य क्षति नहीं पाई गई थी, यद्यपि उसकी पीठ पर उपरोक्त निर्दिष्ट क्षतियां पहुंची थीं जो घटना के समय पर खुरदरी सतह पर उसके लेटने पर घर्षण के कारण कारित हो सकती हैं । डा. डोंड ने प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि

उसकी जानकारी में अभियोक्त्री के योनिच्छद की परीक्षा करने पर कोई नवीनतम मैथुन क्रियाकलाप की जानकारी नहीं हुई है ।

24. रसायन विश्लेषक रिपोर्ट प्रदर्श-29 और प्रदर्श-30 (अभियोक्त्री के भग स्वाब और योनि धब्बों की स्लाइड) से यह प्रकट हुआ है कि किसी भी तरह के वीर्य का पता नहीं चला । जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है कि रसायन विश्लेषक की रिपोर्ट प्रदर्श-42 और डी. एन. ए. परीक्षा रिपोर्ट में अभियुक्त का वीर्य उसकी जांघिया तथा कुर्ते पर तथा अभियोक्त्री की सलवार पर पाया गया था । इससे यह दर्शित हुआ है कि वीर्य का स्खलन हुआ था । यदि प्रवेशन के पश्चात् वीर्य का स्खलन हुआ था तो यह आंशिक प्रवेशन होगा और उसके गुप्तांग भाग के आस-पास क्षेत्र में शिश्न रखा गया होगा । योनिक धब्बे में वीर्य का पता चलना चाहिए या कम से कम योनि के बाहरी भाग पर होना चाहिए ।

25. न केवल योनि में वीर्य का अभाव से बल्कि अभियोक्त्री के गुप्तांग भाग में प्रवेशन होने के बारे में प्रबल संदेह उत्पन्न होता है ।

26. इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह प्रकट हुआ है कि अभियुक्त इसलिए लड़की को घटनास्थल पर ले गया ताकि वह उससे मैथुन कर सके जिस कारण उसने उसके कपड़े उतार दिए और उसे जमीन पर लिटा दिया था तथा उसके कपड़े हटाने का प्रयोजन उसके साथ मैथुन किया जाना था । तथापि, इस संभावना की अनदेखी नहीं की जा सकती कि उसके द्वारा प्रवेशन किए जाने के पूर्व उसके वीर्य का स्खलन पहले हो सकता है और इसलिए, वीर्य उसकी जांघिया पर पड़ा हुआ पाया गया था किंतु यह न तो उसकी योनि या योनि की बाहरी सतह पर पाया गया ।

27. अभियुक्त लगभग 47 वर्ष की आयु का था । यह लड़की 14½ वर्ष की आयु की थी । यदि उसने बलपूर्वक प्रवेशन किया होता तो तब अभियोक्त्री के कोमल होने के कारण उस पर किसी क्षति की संभावना होती किंतु इस बात का भी अभाव है । लड़की की पीठ पर ऊपरी क्षतियां आई हुई हैं और इसी तरह की क्षतियां अभियुक्त के टखनों पर आई हुई हैं जो कठोर और खुरदरी सतह के कारण संभव हो सकती हैं किंतु इससे स्वतः प्रवेशन किया जाना सिद्ध नहीं हो सकता है ।

28. इस सामग्री को विचार में लेकर यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि अभियोजन पक्ष अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे

साबित करने में विफल हुआ है कि अभियुक्त ने वास्तव में बलात्संग किया था, यद्यपि, यह प्रबल साक्ष्य है कि उसने अभियोक्त्री से बलात्संग करने का प्रयास किया था ।

29. दंड संहिता की धारा 363, 366 और 323 के अधीन आरोपों के लिए दोषसिद्धि और दंडादेश के संबंध में ऊपर उल्लिखित तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, मामले में किसी तरह का हस्तक्षेप करना अपेक्षित नहीं है, अभियुक्त दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के अधीन आरोपों से दोषमुक्त होने का हकदार है बल्कि उसे दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के साथ पठित धारा 511 के अधीन दंडनीय बलात्संग का अपराध कारित करने के प्रयत्न के लिए दोषसिद्ध किया जाना उचित है क्योंकि अभियुक्त ने पुलिस थाने की स्थानीय सीमाओं के अंतर्गत उक्त अपराध किया है जहां उसे हेड कांस्टेबल के पद पर नियुक्त किया गया था ।

30. यदि कोई पुलिस अधिकारी दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के अधीन बलात्संग के अपराध का दोषी है तो उसे 10 वर्ष से कम की अवधि न हो, के लिए कठोर कारावास से दंडादिष्ट किया जाना चाहिए किंतु इसमें आजीवन कारावास के साथ जुर्माने का भी दंड दिया जा सकता है ।

31. दंड संहिता की धारा 511 में यह उपबंध किया गया है कि जो कोई इस दंड संहिता द्वारा आजीवन कारावास से या कारावास से दंडनीय अपराध करने का, या ऐसा अपराध कारित किए जाने का प्रयत्न करेगा जहां कि ऐसे प्रयत्न के दंड के लिए कोई अभिव्यक्त उपबंध इस संहिता द्वारा नहीं किया गया है, वहां वह उस अपराध के लिए उपबंधित किसी भांति के कारावास से उस अवधि के लिए, जो, यथास्थिति आजीवन कारावास से आधे तक की या उस अपराध के लिए उपबंधित दीर्घतम अवधि के आधे तक की हो सकेगी या ऐसे जुर्माने से, जो उस अपराध के लिए उपबंधित है, या दोनों से दंडित किया जाएगा ।

32. जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के अधीन बलात्संग के अपराध के लिए कारावास का न्यूनतम दंड 10 वर्ष का कठोर कारावास है । इसलिए, न्यूनतम दंड जिसे बलात्संग किए जाने के प्रयत्न के लिए अधिनिर्णीत किया जा सकता है, पांच वर्ष का कठोर कारावास होगा ।

33. तथापि, दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के अधीन बलात्संग के

अपराध के लिए अधिकतम दंड आजीवन कारावास है । इसलिए, बलात्संग किए जाने के प्रयास के लिए अधिकतम दंड आजीवन कारावास आधा हो सकता है ।

34. दंड संहिता की धारा 57 में यह उपबंध किया गया है कि आजीवन कारावास के दंड के शब्दों की संगणना करते हुए उन्हें 20 वर्ष के समतुल्य कारावास से गणना की जाएगी । इस बात को ध्यान में रखते हुए बलात्संग किए जाने के प्रयास के अपराध के लिए दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के साथ पठित धारा 511 के अधीन दंडनीय अपराध हेतु अधिकतम दंडादेश 10 वर्ष का कठोर कारावास होगा ।

35. अभियुक्त 18 अक्तूबर, 2005 से अभिरक्षा में है और उसे 13 जुलाई, 2006 को सिद्धदोष किया गया था । विचारण न्यायालय ने सभी विषयों पर कारावास के सारभूत दंडादेश साथ-साथ चलने का निदेश किया है । दंड संहिता की धारा 363 के अधीन अपराध के लिए कारावास का दंड 1 वर्ष के कठोर कारावास के रूप में अधिनिर्णीत किया गया है जबकि दंड संहिता की धारा 366 के अधीन अपराध के लिए 3 वर्ष का कारावास अधिनिर्णीत किया गया था और बलात्संग के अपराध के लिए कारावास का अधिकतम दंड 15 वर्ष अधिनिर्णीत किया गया था ।

36. अभियुक्त वास्तव में 5 वर्ष 10 मास से अधिक अवधि का कारावास भोग चुका है । उसको कम करने के पश्चात् कारागार नियमों के अनुसार उसके लिए दंड अधिनिर्णीत किया जा सकता है, उन बातों को गणना में लेकर भोगे जाने के लिए कारावास का वास्तविक दंडादेश, अत्यधिक हो सकता है यद्यपि 10 वर्ष से कम है । इस बात को ध्यान में रखते हुए मेरी यह राय है कि कारावास का दंडादेश जो अभियुक्त भोग चुका है, न्याय की उद्देश्य की पूर्ति के लिए पर्याप्त होगा ।

37. इसलिए, अपील भागतः मंजूर की जाती है । दंड संहिता की धारा 363, 366 और 323 के अधीन अपराधों के लिए अपीलार्थी-अभियुक्त की दोषसिद्धि और दंडादेश कायम रखा जाता है ।

38. इसलिए, दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त किया जाता है और अभियुक्त को उक्त आरोप से दोषमुक्त किया जाता है किंतु उसे दंड संहिता की धारा 376(2)(क) के साथ पठित धारा 511 के अधीन बलात्संग किए जाने के प्रयत्न के दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है

और उसे कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया जाता है जैसाकि तारीख 18 अक्तूबर, 2005 से इस तिथि तक भोगा गया है जिसमें 10,000/- रुपए का जुर्माना भी है । जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर वह 3 मास का कारावास भी भोगेगा ।

39. यदि जुर्माने की रकम वसूल की गई है तो उस रकम को प्रतिकर के रूप में अभियोक्त्री (अभि. सा. 7) को संदाय किया जाएगा ।

अपील भागतः मंजूर की गई ।

आर्य

(2012) 2 दा. नि. प. 81 **राजस्थान**

दिनेश और एक अन्य

बनाम

राजस्थान राज्य

तारीख 26 जुलाई, 2011

न्यायमूर्ति रघुवेन्द्र एस. राठौड़ और न्यायमूर्ति एस. एस. कोठारी

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 300, अपवाद 1 – गंभीर और अचानक प्रकोपन – जहां मृत्यु प्रकोपन के अत्यधिक आवेग के अधीन आत्मसंयम की शक्ति से वंचित हो जाने के परिणामस्वरूप कारित की गई हो और यह प्रकोपन गंभीर और अचानक हो वहां अभियुक्त द्वारा कारित मृत्यु हत्या नहीं बल्कि आपराधिक मानव वध है ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 3 – प्रत्यक्षदर्शी साक्षी – यदि अभियोजन यह साबित करने में सफल रहता है कि अभियोजन ने केवल उन साक्षियों को पेश किया जो अपराध किए जाने के समय उपस्थित थे और उनकी उपस्थिति स्वाभाविक थी तो अभियोजन द्वारा पेश प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों को पक्षपाती और हितबद्ध साक्षी नहीं कहा जा सकता ।

मामले के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार है कि गेंदाराम का पुत्र मोहन लाल ने यह अभिकथन करते हुए तारीख 28 अप्रैल, 2002 को रामशरण

लाल, थाना भारसाधक अधिकारी, पुलिस थाना बोनली के समक्ष लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 प्रस्तुत की कि वह अपने कुटुंब के सदस्यों के साथ अपने मकान में सो रहा था । गोपाल के पुत्र दिनेश और महेश लगभग 11.00 बजे अपराह्न रात्रि में अध्यापक हेमराज के निवास से आए थे और उन्होंने दरवाजा खटखटाना शुरू कर दिया, शोरगुल सुनकर हेमराज और उसका भाई शंकर जाग उठे और जब हेमराज ने दरवाजा खोला तब उन्होंने उसे बाहर खींच लिया जहां महेश ने उसे पकड़ लिया था और दिनेश ने हेमराज के उदर और छाती पर चाकू से प्रहार किए और जब पृथ्वी राज अपने मकान से बाहर आया तो उसे महेश द्वारा भी पकड़ा गया था और दिनेश ने उसके उदर पर चाकू से प्रहार करने की कोशिश की किंतु पृथ्वी राज किसी तरह बच गया जिसके परिणामस्वरूप उसके बाएं प्रबाहु पर चाकू से प्रहार किया गया । इस पर अन्य गांववासी भी घटनास्थल पर पहुंचे और अभियुक्त व्यक्ति अपने-अपने मकानों की ओर भाग गए और बाद में गोपाल अन्य गांववासियों के साथ घटनास्थल पर पहुंचा और उक्त रिपोर्ट को प्राप्त करने पर दंड संहिता की धारा 302, 307 और 34 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60/02 अपराध के लिए रजिस्ट्रीकृत की गई तथा अन्वेषण कार्य प्रारंभ किया गया । अन्वेषण के दौरान पुलिस ने अपीलार्थियों को गिरफ्तार किया और उसने लाठी और चाकू की बरामदगी के संबंध में साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन उनके कथन अभिलिखित किए गए । पुलिस ने मृतक हेमराज की क्षति और शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी-5 भी प्राप्त की और पृथ्वी राज की क्षति रिपोर्ट प्रदर्श पी-4 संबंधित चिकित्सा अधिकारियों से तैयार कराई गई । पुलिस ने प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों और अन्य साक्षियों के कथनों को भी अभिलिखित किया । घटनास्थल का नक्शा तैयार किया गया तथा सादी मिट्टी, अभियुक्त दिनेश से बरामद की गई चाकू तथा मृतक के कपड़े रासायनिक परीक्षा के लिए भेजे गए । अन्वेषण समाप्त करके दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन रिपोर्ट न्यायिक मजिस्ट्रेट, बोनली के न्यायालय में प्रस्तुत की गई थी जिन्होंने सेशन न्यायालय, सवाई माधोपुर के समक्ष विचारण के लिए अपीलार्थियों को सुपुर्द किया था । विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सवाई माधोपुर द्वारा मामले को विचारण के लिए विद्वान् विशेष न्यायाधीश अनुसूचित जातियां/अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम मामला सवाई माधोपुर पर अंतरित कर दिया गया । अपीलार्थियों के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए थे और उन्होंने दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया । अभियोजन पक्ष ने 20

साक्षी तथा दस्तावेज प्रदर्श पी-1 से पी-33 पेश किए । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपीलार्थियों के कथन अभिलिखित किए गए थे । उन्होंने प्रतिरक्षा में कोई साक्षी पेश नहीं किया था किंतु दस्तावेज घ-1 से घ-14 पर प्रदर्श डाले थे । पक्षकारों को सुनने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को दोषसिद्ध कर दिया जैसाकि ऊपर ब्यौरे दिए गए हैं । अपीलार्थियों द्वारा दोषसिद्धि के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील फाइल की । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रकोपन के सिद्धांत की प्रयोज्यता तथ्य पर आधारित है कि जिससे अचानक और अस्थायी रूप से आत्मसंयम गंवा बैठना प्रकट होता हो । इसकी परख के लिए युक्तियुक्त व्यक्ति द्वारा किए गए कार्यों की परिस्थितियों को देखा जाना चाहिए जिससे गंभीर और अचानक प्रकोपन मिला । गंभीर और अचानक प्रकोपन की मात्रा क्या हो सकती है जैसाकि धारा 300 के अपवाद सं. 1 के स्पष्टीकरण में उपबंधित किया गया है, यह तथ्य का प्रश्न है । प्रकोपन ऐसा होना चाहिए जो न केवल अचानक हो बल्कि ऐसा प्रकोपन गंभीर होना चाहिए जिसका इस तथ्य से न्यायनिर्णय किया जाना चाहिए कि क्या अपराधी आत्मसंयम की शक्ति से वंचित हो सकता था या नहीं । प्रत्येक छोटे से प्रकोपन को गंभीर नहीं कहा जा सकता, साधारणतया कि ऐसा प्रकोपन उत्पन्न हुए परिणाम को गंभीर रूप देना अभियुक्त के हाथों में है । हमने विधि के पूर्वोक्त सिद्धांतों के प्रकाश में अपीलार्थियों की ओर से अवलंब लिए गए मामलों की परीक्षा की है । गुरदीप सिंह वाले मामले में अपने कुटुंब की किसी महिला से अवैध संबंध होने के बारे में संदेह के कारण बदला लेने के लिए हमले का आशय रहा है । अरविंद कुमार वाले मामले में घटना उत्तेजना से घटी थी । टखाजी, हिराजी वाले मामले में दो समुदायों के बीच अचानक लड़ाई-झगड़ा होने के कारण घटना घटी थी । कृष्णा तिवारी वाले मामले में बिना पूर्व-चिंतन के अचानक घटना घटी थी इसलिए, अपीलार्थियों की अवलंबित नज़ीरों से उन्हें कोई मदद नहीं मिलती । यदि हम इस मामले में पूर्वोक्त सिद्धांतों को लागू करते हैं तब यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि हेमराज मंदिर में मौजूद था जहां पर पहली घटना घटी थी जिसमें कमलेश की हत्या की गई थी । इसलिए, हेमराज की कार्यवाहियों से अपीलार्थियों का प्रकोपित होने का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता है । अपीलार्थी मृतक हेमराज के मकान पर मंदिर से पहुंचे थे । दोनों घटनाओं के बीच समय अंतराल लगभग 45 मिनट है । यह भी उल्लेखनीय है कि के. एम. नानावटि बनाम महाराष्ट्र राज्य वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह

अभिनिर्धारित किया कि ''गंभीर और अचानक'' प्रकोपन की कसौटी यह है कि कोई युक्तियुक्त व्यक्ति अभियुक्त की भांति उसी समाज के उसी प्रवर्ग से संबंधित है जिस स्थिति में अभियुक्त है, ऐसी स्थिति में ऐसा व्यक्ति प्रकोपित हो जाता है जिससे कि वह आत्मसंयम खो बैठता । जुनून की उत्तेजना से उत्पन्न होने वाले घातक झटके के प्रभाव का पता लगाया जाना चाहिए और ऐसा जुनून जो समय बीत जाने के पश्चात् भी कम नहीं हुआ हो या पूर्व-चिंतन और उसकी संगणना की कोई गुंजाइश न रह गई हो । ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि मृतक हेमराज ने अपीलार्थियों को किसी तरह प्रकोपित किया हो जब वे उसके मकान पर पहुंचे । (पैरा 14, 15 और 16)

अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को साबित करने के लिए कोई स्वतंत्र साक्षी पेश नहीं किया है । जो साक्षी प्रस्तुत किए गए हैं या तो मृतक के नातेदार हैं या उसके पड़ोसी हैं और इस प्रकार, उनके कथनों का किसी प्रकार अवलंब नहीं लिया जा सकता है तथा अभियोजन पक्ष अपने पक्षकथन को साबित करने में बुरी तरह विफल हुआ है । विद्वान् लोक अभियोजक ने उपरोक्त दलील का विरोध किया है और यह निवेदन किया है कि अभियोजन पक्ष ने केवल उन साक्षियों को पेश किया जो अपराध कारित किए जाने के समय पर मौजूद थे और उनकी उपस्थिति नैसर्गिक है और उस पर संदेह नहीं किया जा सकता है । जहां तक विधिक स्थिति का संबंध है यह उल्लेख करना पर्याप्त होगा कि दलीप सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह विधि अधिकथित की गई है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया जो इस प्रकार है । साधारणतया किसी साक्षी पर स्वतंत्र होने के रूप में विचार किया जाएगा जब तक कि उसके बारे में किसी स्रोत से यह पता न चल जाए कि संभवतया ऐसे साक्षी को दागी न समझ लिया जाए और सामान्यता इससे यह अभिप्रेत है जब तक कि साक्षी के पास ऐसा कारण न हो अभियुक्त के विरुद्ध शत्रुता की वजह से वह उसे मिथ्या रूप से फंसाने की इच्छा रखता हो । साधारणतया निकट की नातेदारी की वजह से वास्तविक अपराधी को छुपाना होगा और निर्दोष व्यक्ति को मिथ्या रूप से फंसाया गया हो । यह बात सही है कि जब आदमी अत्यधिक तीव्र भावनाओं में रहता है जो वैयक्तिक शत्रुता के कारण होता है जब भावनाएं हावी हो जाती हैं और दुश्मनी के व्यक्तिगत कारण होते हैं तो यह सही है कि ऐसा निर्दोष व्यक्ति

जिसके विरुद्ध कोई साक्षी दोषी व्यक्ति के साथ मलीमालिन्य रखता है, को फंसाने की प्रकृति रखता है किंतु ऐसी किसी आलोचना का आधार होना चाहिए और आधार से काफी दूर संबंध का तथ्य प्रायः सच्चाई की निश्चित गारंटी है । तथापि, हम कोई अतिव्याप्ति सामान्यीकरण बनाने का प्रयत्न नहीं कर रहे हैं । प्रत्येक मामले का उसके स्वयं के तथ्यों पर न्यायनिर्णयन किया जाना चाहिए । न्यायालय की मताभिव्यक्तियों में केवल इस बात पर संघर्ष है कि जो कुछ प्रायः देखने में आता है कि प्रज्ञा के साधारण नियम के रूप में हमारे समक्ष मामले आए । ऐसा कोई साधारण नियम नहीं है । प्रत्येक मामले को सीमित दायरे में होना चाहिए और अपने स्वयं के तथ्यों से शासित होना चाहिए । विधिक स्थिति तथा तथ्यात्मक स्थिति को ध्यान में रखते हुए अभियोजन पक्ष द्वारा जो प्रत्यक्षदर्शी साक्षी पेश किए गए हैं उन्हें भागतः हितबद्ध साक्षी नहीं माना जा सकता है । अतः, न्यायालय पूर्वोक्त आक्षेप को अस्वीकार करता है । (पैरा 29, 31 और 33)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2007]	(2007) 1 क्राइम 226 : **अंतार सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**;	22
[2007]	(2007) 1 क्राइम 395 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1129 : **मुरारी ठाकुर और एक अन्य** बनाम **बिहार राज्य**;	22
[2007]	(2007) 2 क्राइम 217 (एस. सी.) = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1299 : **कलेगुरा पद्माराव और एक अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**;	32
[2007]	ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1893 : **विक्रम और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**;	27
[2003]	(2003) 1 डब्ल्यू. एल. सी. (एस. सी.) क्रिमिनल 280 : **सुरेश सीताराम सुर्वे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**;	19
[2003]	ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 3975 : **थामन कुमार** बनाम **संघीय राज्य क्षेत्र, चंडीगढ़ राज्य**;	27

[2001]	ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2328 : **तखाजी हीराजी** बनाम **ठाकुर कुबेरसिंह चमन सिंह और अन्य**;	6
[2001]	जे. टी. 2001 (3) एस. सी. 331 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2410 : **कृष्णा तिवारी और एक अन्य** बनाम **बिहार राज्य**;	6
[1999]	ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 3830 : **रामाशीश यादव और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**;	19
[1997]	(1997) 2 डब्ल्यू. एल. सी. (राजस्थान) 265 : **केसर लाल और अन्य** बनाम **राजस्थान राज्य**;	26
[1996]	1996 क्रिमिनल ला जर्नल 3616 : **हरजी** बनाम **राजस्थान राज्य**;	21
[1994]	(1994) 2 एस. सी. सी. 220 : **तपेन्द्र सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**;	26
[1994]	(1994) 2 एस. सी. सी. 698 : **सोमा भाई** बनाम **गुजरात राज्य**;	26
[1988]	(1988) एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 132 : **अरविंद कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**;	6
[1987]	ए. आई. आर. 1987 एस. सी. 1151 : **गुरदीप सिंह और एक अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**;	6
[1979]	ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 135 : **धन्नजय चटर्जी** उर्फ **धन्ना** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**;	26
[1976]	ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2488 : **राम सिंह बाबाजी जडेजा** बनाम **गुजरात राज्य**;	26
[1974]	(1974) 3 एस. सी. सी. 698 = ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 276 : **दुलीचंद और अन्य** बनाम **राजस्थान राज्य**;	32
[1962]	ए. आई. आर. 1962 एस. सी. 605 : **के. एम. नानावटि** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**;	16

[1953] ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 364 :
दलीप सिंह और अन्य बनाम **पंजाब राज्य** । 31

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2003 की दांडिक अपील सं. 245.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से सर्वश्री बीरी सिंह सिंसिंवर, ज्येष्ठ अधिवक्ता और राजेश चौधरी

राज्य की ओर से लोक अभियोजक श्री जावेद चौधरी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एस. एस. कोठारी ने दिया ।

न्या. कोठारी – 2002 के सेशन मामला सं. 39 (36/02), राज्य बनाम दिनेश और एक अन्य वाले मामले में विद्वान् विशेष न्यायाधीश अनुसूचित जातियां/अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) मामले सवाई माधोपुर द्वारा तारीख 21 जनवरी, 2003 को निर्णय पारित किया गया जिसके द्वारा अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करके दंडादिष्ट किया गया जिसे इस अपील में चुनौती दी गई है :–

अपीलार्थी सं. 1 दिनेश

1. दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए – आजीवन कारावास और 10,000/- रुपए का जुर्माना । जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर 3 मास का भी कारावास ।

2. दंड संहिता की धारा 324 के अधीन अपराध के लिए – 1 वर्ष का कठोर कारावास और 3,000/- रुपए का जुर्माना । जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर 15 दिन का कठोर कारावास ।

अपीलार्थी सं. 2 महेश

1. दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए – आजीवन कारावास और 10,000/- रुपए का जुर्माना । जुर्माने के संदाय का व्यतिक्रम करने पर 3 मास का भी कारावास ।

2. दंड संहिता की धारा 324/34 के अधीन अपराध के लिए – एक वर्ष का कठोर कारावास और 1000/- रुपए जुर्माना । जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर 15 दिनों का भी कारावास ।

2. मामले के संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि गेंदाराम का पुत्र मोहन

लाल ने यह अभिकथन करते हुए तारीख 28 अप्रैल, 2002 को रामशरण लाल, थाना भारसाधक अधिकारी, पुलिस थाना बोनली के समक्ष लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 प्रस्तुत की कि वह अपने कुटुंब के सदस्यों के साथ अपने मकान में सो रहा था । गोपाल के पुत्र दिनेश और महेश लगभग 11.00 बजे अपराह्न रात्रि में अध्यापक हेमराज के निवास से आए थे और उन्होंने दरवाजा खटखटाना शुरू कर दिया, शोरगुल सुनकर हेमराज और उसका भाई शंकर जाग उठे और जब हेमराज ने दरवाजा खोला तब उन्होंने उसे बाहर खींच लिया जहां महेश ने उसे पकड़ लिया था और दिनेश ने हेमराज के उदर और छाती पर चाकू से प्रहार किए और जब पृथ्वी राज अपने मकान से बाहर आया तो उसे महेश द्वारा भी पकड़ा गया था और दिनेश ने उसके उदर पर चाकू से प्रहार करने की कोशिश की किंतु पृथ्वी राज किसी तरह बच गया जिसके परिणामस्वरूप उसके बाएं प्रबाहु पर चाकू से प्रहार किया गया । इस पर अन्य गांववासी भी घटनास्थल पर पहुंचे और अभियुक्त व्यक्ति अपने-अपने मकानों की ओर भाग गए और बाद में गोपाल अन्य गांववासियों के साथ घटनास्थल पर पहुंचा और उक्त रिपोर्ट को प्राप्त करने पर दंड संहिता की धारा 302, 307 और 34 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60/02 अपराध के लिए रजिस्ट्रीकृत की गई तथा अन्वेषण कार्य प्रारंभ किया गया । अन्वेषण के दौरान पुलिस ने अपीलार्थियों को गिरफ्तार किया और उसने लाठी और चाकू की बरामदगी के संबंध में साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन उनके कथन अभिलिखित किए गए । पुलिस ने मृतक हेमराज की क्षति और शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी-5 भी प्राप्त की और पृथ्वी राज की क्षति रिपोर्ट प्रदर्श पी-4 संबंधित चिकित्सा अधिकारियों से तैयार कराई गई । पुलिस ने प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों और अन्य साक्षियों के कथनों को भी अभिलिखित किया । घटनास्थल का नक्शा तैयार किया गया तथा सादी मिट्टी, अभियुक्त दिनेश से बरामद की गई चाकू तथा मृतक के कपड़े रासायनिक परीक्षा के लिए भेजे गए । अन्वेषण समाप्त करके दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन रिपोर्ट न्यायिक मजिस्ट्रेट, बोनली के न्यायालय में प्रस्तुत की गई थी जिन्होंने सेशन न्यायालय, सवाई माधोपुर के समक्ष विचारण के लिए अपीलार्थियों को सुपुर्द किया था । विद्वान् सेशन न्यायाधीश, सवाई माधोपुर द्वारा मामले को विचारण के लिए विद्वान् विशेष न्यायाधीश अनुसूचित जातियां/अनुसूचित जनजातियां (अत्याचार निवारण) अधिनियम मामला सवाई माधोपुर पर अंतरित कर दिया गया । अपीलार्थियों के विरुद्ध आरोप विरचित किए गए थे और उन्होंने दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया । अभियोजन पक्ष ने 20

साक्षी तथा दस्तावेज प्रदर्श पी-1 से पी-33 पेश किए । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपीलार्थियों के कथन अभिलिखित किए गए थे । उन्होंने प्रतिरक्षा में कोई साक्षी पेश नहीं किया था किंतु दस्तावेज घ-1 से घ-14 पर प्रदर्श डाले थे । पक्षकारों को सुनने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपीलार्थियों को दोषसिद्ध कर दिया जैसाकि ऊपर ब्यौरे दिए गए हैं ।

3. हमने अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता तथा लोक अभियोजक को सावधानीपूर्वक विस्तृत रूप से सुना और मामले के अभिलेख का पूरी तरह परिशीलन किया ।

4. अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभियोजन साक्षियों के कथनों में कई विभेद हैं; साक्षियों ने अपने-अपने कथनों में सुधार किए हैं; अपीलार्थी महेश को किसी व्यक्ति द्वारा कोई क्षति कारित नहीं की गई तथा चाकू और लाठी की बरामदगी साक्षियों ने बरामदगी का समर्थन नहीं किया है और घटनास्थल पर कोई रक्त-रंजित मिट्टी नहीं पाई गई है, इसलिए अपीलार्थी दोषमुक्त होने का हकदार है । विद्वान् लोक अभियोजक ने उपरोक्त दलीलों का विरोध किया ।

5. हमने सावधानीपूर्वक उपरोक्त दलीलों पर विचार किया । हमने प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अर्थात् मोहन लाल (अभि. सा. 5), कमला (अभि. सा. 6), रवीन्द्र (अभि. सा. 7), शंकर (अभि. सा. 8), पृथ्वी राज (अभि. सा. 9) तथा रामदयाल (अभि. सा. 14) के कथनों का परिशीलन किया किंतु हमने यह निष्कर्ष निकाला कि उनके कथनों में ऐसे कोई तात्विक विभेद नहीं हैं जिससे कि उन्हें अविश्वसनीय ठहराया जाए । उपरोक्त साक्षियों के कथनों की बारीकी से संवीक्षा करने पर यह दर्शित हुआ है कि उन्होंने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित अपने कथनों में किसी ने भी वृत्तांत में सुधार नहीं किया है जहां तक बरामदगी के साक्षी पुरुषोत्तम (अभि. सा. 16) और प्रह्लाद (अभि. सा. 17) के कथनों की दलीलों का संबंध है, उनके बारे में यह उल्लेख करना पर्याप्त है कि यद्यपि उन्हें पक्षद्रोही घोषित किया गया है तो भी उन्होंने अभिग्रहण ज्ञापन प्रदर्श पी-19 और पी-20 पर अपने हस्ताक्षर होना स्वीकार किया है । अन्वेषक अधिकारी रामशरण लाल (अभि. सा. 12) ने उपरोक्त बरामदगी ज्ञापनों को साबित किया है जिन्हें उसके द्वारा भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के अधीन पुलिस को दी गई सूचना प्रदर्श पी-31 और पी-32 के अनुसार तैयार किया गया था । बरामदगी ज्ञापन प्रदर्श पी-19 और पी-

20 का न्यायालयिक प्रयोगशाला रिपोर्ट प्रदर्श पी-33 के साथ परिशीलन करने पर यह साबित हुआ है कि अभियुक्त दिनेश से बरामद किए गए चाकू पर, और घटनास्थल से ली गई मिट्टी तथा मृतक हेमराज के कपड़ों पर मानव रक्त पाया गया था । विचारण न्यायालय ने विस्तार से अभियोजन के साक्ष्य पर विचार किया जैसाकि उनके निर्णय में स्पष्ट है और हम उनके द्वारा किए गए निर्धारण से किसी कारण भी असहमत नहीं होते हैं ।

6. अनुकल्पतः अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि क्योंकि अपीलार्थियों के भाई कमलेश की हत्या राम खिलाड़ी द्वारा की गई थी, वे हेमराज के मकान पर उसे ढूंढने के लिए गए थे । उनका हेमराज की हत्या करने या उसे क्षति कारित करने का कोई आशय नहीं था, किंतु अचानक प्रकोपन के कारण वे अपना संयम खो चुके थे । इसलिए उनका कार्य केवल आपराधिक मानव वध की कोटि में आएगा और उनका मामला दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद सं. 1 के अंतर्गत आएगा । उन्होंने पुरजोर यह दलील दी कि विचारण न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करके अवैध कार्य किया है । उन्होंने **गुरदीप सिंह और एक अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[1]; **अरविंद कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2]; **तखाजी हीराजी** बनाम **ठाकुर कुबेरसिंह चमन सिंह और अन्य**[3] और **कृष्णा तिवारी और एक अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[4] वाले मामलों का अवलंब लिया है ।

7. विद्वान् लोक अभियोजक ने यह दलील दी है कि अभियोजन पक्ष ने यह सिद्ध करने के लिए अकाट्य साक्ष्य दिया है कि अपीलार्थियों ने हेमराज की हत्या की है ।

8. हमने सावधानीपूर्वक पूर्वोक्त दलीलों पर विचार किया है । उपरोक्त दलील की सही रूप से मूल्यांकन करने के लिए यह आवश्यक है कि मामले में पेश किए गए साक्ष्य की परीक्षा कराएं । अभियोजन का पक्षकथन जैसाकि लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 में प्रकट है यह है कि अपीलार्थियों ने हेमराज का दरवाजा खटखटाया और जब उसने दरवाजा खोला तब उन्होंने उसे बाहर खींच लिया । अपीलार्थी महेश ने उसे पकड़ लिया और तब

---

[1] ए. आई. आर. 1987 एस. सी. 1151.

[2] (1988) एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 132.

[3] ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2328.

[4] जे. टी. 2001 (3) एस. सी. 331 = ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2410.

अपीलार्थी दिनेश ने उसके उदर और छाती पर चाकू से प्रहार किया । मोहन लाल (अभि. सा. 5) घटना का प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है । उसके अनुसार महेश और दिनेश ने हेमराज के मकान का दरवाजा खटखटाया था और जब हेमराज ने दरवाजा खोला तब महेश ने उसे पकड़ लिया था । दिनेश ने उसके उदर और छाती पर चाकू से प्रहार किया । उसने यह भी कथन किया है कि पृथ्वी राज वहां पर पहुंचा और उसने बीच-बचाव करने की कोशिश की किंतु उसके बाएं हाथ में चाकू से क्षति कारित हुई थी । उसने अन्य व्यक्तियों का नाम भी लिया है जो वहां पर मौजूद थे और जिन्होंने घटना देखी थी । मृतक की पत्नी श्रीमती कमला (अभि. सा. 6) ने यह भी कथन किया है कि उसके पति के उदर और छाती में चाकू से क्षतियां कारित हुई थीं । मृतक का अप्राप्तवय पुत्र रवीन्द्र (अभि. सा. 7) ने यह कथन किया है कि अपीलार्थियों द्वारा उसके पिता की छाती और उदर में चाकू से क्षतियां कारित की गई थीं । शंकर (अभि. सा. 8) ने उपरोक्त वृत्तांत का भी समर्थन किया है । पृथ्वी राज (अभि. सा. 9) ने यह कथन किया है कि जब उसने हेमराज को बचाने की कोशिश की, तब दिनेश ने उसके उदर पर चाकू से प्रहार करने की कोशिश की किंतु उसने अपने को बचाने की कोशिश की और इस प्रकार उसके बाईं कोहनी पर चाकू से क्षति कारित हुई थी । सभी पूर्वोक्त साक्षियों से अपीलार्थियों की ओर से प्रतिपरीक्षा की गई थी किंतु उनके कथनों में बिखराव नहीं आ सका । अभियोजन के पूर्वोक्त प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य की चिकित्सा साक्ष्य द्वारा समर्थन किया गया है । डा. रामफूल मीना (अभि. सा. 4) ने पृथ्वी राज की क्षति रिपोर्ट प्रदर्श पी-4 और हेमराज की शवपरीक्षण रिपोर्ट प्रदर्श पी-5 को साबित किया है । प्रदर्श पी-5 का परिशीलन करने से यह दर्शित हुआ है कि हेमराज को निम्नलिखित क्षतियां कारित हुई थीं :–

> "घाव और क्षतियां – (1) दाहिने चूचुक जिसमें ई आकार में लालिमा थी के नीचे वक्ष के सम्पूर्ण मोटाई पर ई आकार पर 10 से. मी. x 5 से. मी. का छिन्न घाव । यकृत के एंट्रा सुप्रियर लोबे दाहिनी ओर चारों तरफ पेरीटोनल गुहिका और डायाफ्राम का भंग भी सम्मिलित है । यकृत पर 3 x ½ x 2½ से. मी. गहरा छिन्न घाव, यकृत और फेफड़ों के नीचे दाहिने पार्श्व और पेरीटोनल गुहिका में गहरा लाल रक्त अत्यधिक रूप से एकत्रित था ।
>
> (2) एबीडी की मोटाई, आंट की भित्ती तथा एबीडी के बाईं ओर निचले भाग पर 2 x 1 x 2/3 छिन्न घाव ।"

9. डा. रामफूल मीना (अभि. सा. 4) ने हेमराज की मृत्यु के बारे में निम्नलिखित राय व्यक्त की है :–

> "शवपरीक्षण परीक्षा करने के पश्चात् हमारी यह राय है कि यकृत से अत्यधिक रक्त निकलने की वजह से बेहोशी के कारण मृत्यु हुई थी ।"

10. उसके कथन का परिशीलन करने से यह दर्शित हुआ है कि हेमराज के यकृत से अत्यधिक रक्त निकला था । पूर्वोक्त साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उक्त क्षति प्रकृति के साधारण अनुक्रम में मृत्यु कारित किए जाने के लिए पर्याप्त है ।

11. पूर्वोक्त साक्ष्य के अतिरिक्त मामले की परिस्थितियों और अन्य तथ्यों से अपीलार्थियों के आशय के बारे में स्पष्ट संकेत मिलता है । स्वीकृततः, मंदिर के नजदीक घटी घटना जिसमें अपीलार्थियों का भाई अर्थात् कमलेश की राम खिलाड़ी द्वारा हत्या किया जाना कहा गया है, इस घटना के लगभग 45 मिनट बाद वर्तमान घटना घटी । अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की दलील के अनुसार कि अपीलार्थियों को उक्त घटना से अचानक प्रकोपन मिला और वे राम खिलाड़ी को ढूंढने के लिए हेमराज के मकान पर पहुंचे । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि हेमराज घटनास्थल पर मौजूद था जहां कमलेश की पीट कर हत्या की गई थी । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए भी कोई साक्ष्य नहीं है कि राम खिलाड़ी हेमराज के मकान में छुपा हुआ था जब अपीलार्थी वहां पहुंचे । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए भी कुछ नहीं है कि जब अपीलार्थियों ने हेमराज का दरवाजा खटखटाया तब उसने दरवाजा खोला, अपीलार्थियों ने उससे राम खिलाड़ी के अते-पते के बारे में पूछा था । वस्तुतः, साक्षियों के कथनों में यह बात प्रकट हुई है कि हेमराज अपने कुटुंब के सदस्य के साथ अपने घर में टेलीविजन देख रहा था । इस प्रकार, अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की दलील यह है कि अपीलार्थी राम खिलाड़ी को ढूंढने के लिए हेमराज के मकान पर पहुंचे थे जिन्होंने उनके भाई की हत्या की थी, इस बात में कोई सार नहीं है ।

12. दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद सं. 1 जो निम्न प्रकार है :–

> "आपराधिक मानव वध कब हत्या नहीं है – आपराधिक मानव वध हत्या नहीं है, यदि अपराधी उस समय जबकि वह गंभीर और अचानक प्रकोपन से आत्मसंयम की शक्ति से वंचित हो, उस व्यक्ति

की, जिसने कि वह प्रकोपन दिया था, मृत्यु कारित करें या किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु भूल या दुर्घटनावश कारित करें ।

ऊपर का अपवाद निम्नलिखित परंतुकों के अध्यधीन है –

पहला – यह कि वह प्रकोपन किसी व्यक्ति का वध करने या अपहानि करने के लिए अपराधी द्वारा प्रतिहेतु के रूप में ईप्सित न हों या स्वेच्छया प्रकोपित न हों ।

दूसरा – यह कि वह प्रकोपन किसी ऐसी बात द्वारा न दिया गया हो जो कि विधि के पालन में या लोक सेवक द्वारा ऐसे लोक सेवक की शक्तियों के विधिपूर्ण प्रयोग में, की गई हो ।

तीसरा – यह कि वह प्रकोपन किसी ऐसी बात द्वारा न दिया गया हो, जो प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के विधिक प्रयोग में की गई हो ।

स्पष्टीकरण – क्या प्रकोपन इतना गंभीर और अचानक था या नहीं कि अपराध को हत्या की कोटि में जाने से बचा दे, यह तथ्य का प्रश्न है ।

दृष्टांत – दंड संहिता की धारा 300 के (क) में यह उपबंध किया गया है "**य** द्वारा दिए गए प्रकोपन के कारण प्रदीप्त आदेश के असर में **म** का, जो **य** का शिशु है, **क** साशय वध करता है । यह हत्या है, क्योंकि प्रकोपन उस शिशु द्वारा नहीं दिया गया था और उस शिशु की मृत्यु उस प्रकोपन से किए गए कार्य को करने में दुर्घटना या दुर्भाग्य से नहीं हुई है ।"

13. दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद सं. 1 का फायदा लेने के लिए; यह साबित होना चाहिए; (क) कि अभियुक्त द्वारा ऐसे कार्यों या शब्दों से मृतक को आहत किया गया हो जो प्रकोपन से कारित की गई हो; (ख) कि प्रकोपन ऐसा होना चाहिए जिससे कि कोई युक्तियुक्त व्यक्ति अपने आत्मसंयम की अपनी शक्ति को गंवा बैठता हो और जो वास्तव में अभियुक्त द्वारा आत्मसंयम को खोकर अचानक और अस्थाई रूप से की गई होनी चाहिए । दंड संहिता की धारा 300 में अंतर्विष्ट अपराध के अंतर्गत अपराध की क्रूरता को कम करता हो यदि भावनाओं में आकर ऐसा अपराध किया जाता है जो अपराधी से अपने कार्य करने के नियंत्रण को अस्थाई रूप से छीन लेता है । प्रकोपन एक बाहरी प्रोत्साहन है जो

वस्तुपरक रूप से क्रोध हो सकता है किंतु इससे आत्मसंयम खो जाता है, यह विषयपरक तत्व है और इसका चारों ओर की परिस्थितियों से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह रीति जिसमें अभियुक्त ने किन परिस्थितियों के अंदर प्रतिक्रिया प्रकट की और अभियुक्त ने अपने विवेक के अनुसार अपने मस्तिष्क में किस प्रकार का चित्रण किया जिस पर न्यायालय द्वारा उसकी मनोवैज्ञानिक स्थिति को देखते हुए काल्पनिक रूप से सुसंगत वस्तुपरक तथ्यों का निष्कर्ष निकालकर सत्यापन करना चाहिए जिस मनोवैज्ञानिक स्थिति में अभियुक्त स्वयं पाया गया था ।

14. इसके अतिरिक्त, ऐसा कार्य उस व्यक्ति द्वारा अचानक गंभीर प्रकोपन पाने पर आत्मसंयम से वंचित होकर किया गया होना चाहिए । ऐसा कार्य तत्काल प्रकोपन से किया गया होना चाहिए । प्रकोपन के सिद्धांत की प्रयोज्यता तथ्य पर आधारित है कि जिससे अचानक और अस्थायी रूप से आत्मसंयम गंवा बैठना प्रकट होता हो । इसकी परख के लिए युक्तियुक्त व्यक्ति द्वारा किए गए कार्यों की परिस्थितियों को देखा जाना चाहिए जिससे गंभीर और अचानक प्रकोपन मिला । गंभीर और अचानक प्रकोपन की मात्रा क्या हो सकती है जैसाकि धारा 300 के अपवाद सं. 1 के स्पष्टीकरण में उपबंधित किया गया है, यह तथ्य का प्रश्न है । प्रकोपन ऐसा होना चाहिए जो न केवल अचानक हो बल्कि ऐसा प्रकोपन गंभीर होना चाहिए जिसका इस तथ्य से न्यायनिर्णय किया जाना चाहिए कि क्या अपराधी आत्मसंयम की शक्ति से वंचित हो सकता था या नहीं । प्रत्येक छोटे से प्रकोपन को गंभीर नहीं कहा जा सकता, साधारणतया कि ऐसा प्रकोपन से उत्पन्न हुए परिणाम को गंभीर रूप देना अभियुक्त के हाथों में है ।

15. हमने विधि के पूर्वोक्त सिद्धांतों के प्रकाश में अपीलार्थियों की ओर से अवलंब लिए गए मामलों की परीक्षा की है । **गुरदीप सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में अपने कुटुंब की किसी महिला से अवैध संबंध होने के बारे में संदेह के कारण बदला लेने के लिए हमले का आशय रहा है । **अरविंद कुमार** (उपरोक्त) वाले मामले में घटना उत्तेजना से घटी थी । **टखाजी, हिराजी** (उपरोक्त) वाले मामले में दो समुदायों के बीच अचानक लड़ाई-झगड़ा होने के कारण घटना घटी थी । **कृष्णा तिवारी** (उपरोक्त) वाले मामले में बिना पूर्व-चिंतन के अचानक घटना घटी थी इसलिए, अपीलार्थियों की अवलंबित नज़ीरों से उन्हें कोई मदद नहीं मिलती ।

16. यदि हम इस मामले में पूर्वोक्त सिद्धांतों को लागू करते हैं तब

यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि हेमराज मंदिर में मौजूद था जहां पर पहली घटना घटी थी जिसमें कमलेश की हत्या की गई थी । इसलिए, हेमराज की कार्यवाहियों से अपीलार्थियों का प्रकोपित होने का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता है । अपीलार्थी मृतक हेमराज के मकान पर मंदिर से पहुंचे थे । दोनों घटनाओं के बीच समय अंतराल लगभग 45 मिनट है । यह भी उल्लेखनीय है कि **के. एम. नानावटि** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि "गंभीर और अचानक" प्रकोपन की कसौटी यह है कि कोई युक्तियुक्त व्यक्ति अभियुक्त की भांति उसी समाज के उसी प्रवर्ग से संबंधित है जिस स्थिति में अभियुक्त है, ऐसी स्थिति में ऐसा व्यक्ति प्रकोपित हो जाता है जिससे कि वह आत्मसंयम खो बैठता । जुनून की उत्तेजना से उत्पन्न होने वाले घातक झटके के प्रभाव का पता लगाया जाना चाहिए और ऐसा जुनून जो समय बीत जाने के पश्चात् भी कम नहीं हुआ हो या पूर्व-चिंतन और उसकी संगणना की कोई गुंजाइश न रह गई हो । ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है कि मृतक हेमराज ने अपीलार्थियों को किसी तरह प्रकोपित किया हो जब वे उसके मकान पर पहुंचे । मृतक के उदर में क्षति की प्रकृति निम्नानुसार है :–

> "पेरीटोनल गुहिका और डायाफ्राम के भंग सहित यकृत के अंट्रा सुप्रियर लोबे के दाहिनी ओर का भी भंग हुआ है । यकृत में 3 x ½ x 2½ से. मी. गहरा घाव हुआ था ।"

17. ऐसी क्षति केवल मृत्युकारित करने के लिए पूर्व-चिंतन के पश्चात् कारित की जानी हो सकती है और इसे दुर्घटनावश नहीं कहा जा सकता है ।

18. विद्वान् विचारण न्यायालय ने निर्णय के पैरा 24 में मामले के इस पहलू पर भी चर्चा की है और यह अभिनिर्धारित किया है कि यह स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि अपीलार्थियों की कार्यवाही अचानक प्रकोपन के कारण की गई थी । हम उक्त निष्कर्ष से सहमत हैं और हम विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल की दलील को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि यह मामला दंड संहिता की धारा के अपवाद के अधीन अचानक और गंभीर प्रकोपन का बनता है ।

19. अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि

---

[1] ए. आई आर. 1962 एस. सी. 605.

अपीलार्थी महेश के विरुद्ध कोई प्रत्यक्ष कार्य किया जाना अभिकथित है और उसने किसी व्यक्ति को कोई क्षति नहीं पहुंचाई । इन परिस्थितियों में विद्वान् विचारण न्यायालय ने दंड संहिता की धारा 34 की सहायता से उसे दोषसिद्ध करके अवैध कार्य किया है । उन्होंने यह दलील दी कि उसके विरुद्ध कोई अपराध नहीं बनता है और इसलिए, वह दोषमुक्त होने का हकदार है । उन्होंने अपनी दलील के समर्थन में **रामाशीश यादव और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[1] और **सुरेश सीताराम सुर्वे** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] वाले मामलों का अवलंब लिया ।

20. लोक अभियोजक ने उपरोक्त दलील का विरोध किया और यह निवेदन किया कि अपीलार्थी महेश ने सक्रिय होकर तथा सामान्य आशय में भाग लेकर अपराध में भागीदारी की थी ।

21. हमने उपरोक्त की दलीलों पर विचार किया । दंड संहिता की धारा 34 में अभियुक्त व्यक्तियों का सामान्य आशय अपेक्षित हैं जिसे अभियोजन पक्ष द्वारा साबित किया जाना चाहिए । परिस्थितियों और आचरण से पूर्व नियोजित षड्यंत्र का निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । अभियुक्तों के पूर्व षड्यंत्र के बारे में मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से न्यायनिर्णय किया जाना चाहिए जिसके बारे में प्रत्यक्ष साक्ष्य पर निष्कर्ष निकालना कठिन है । पक्षकारों के केवल कार्य से आशय प्रकट होगा ऐसा तथ्यात्मक पहलू के बारे में मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । **हरजी** बनाम **राजस्थान राज्य**[3] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जब अभियुक्त व्यक्ति कुछ कृषि भूमि खरीदी थी परंतु परिवादी पक्षकारों द्वारा जमीन पर कृषि संबंधी कार्य करने से रोक दिया गया था क्योंकि वे खेत के खातेदार अभिधारी से अंतरिती, अभियुक्त द्वारा विरोध किए जाने पर, शिकायतकर्ता जो कुछ सदस्य थे, ने भागने की कोशिश की और उनमें से कुछ ऐसा करने में सफल हुए किंतु अभियुक्तों ने शिकायतकर्ता दल के दो सदस्यों को बाद में भी लगातार पीटा था जो असहाय रूप से गिर पड़े थे, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उनका आहतों की हत्या करने का निश्चित रूप से सामान्य आशय था ।

---

[1] ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 3830.

[2] (2003) 1 डब्ल्यू. एल. सी. (एस. सी.) क्रिमिनल 280.

[3] 1996 क्रिमिनल ला जर्नल 3616.

22. जब हम विधि के पूर्वोक्त सिद्धांतों के प्रकाश में वर्तमान मामले की परीक्षा करते हैं तो यह उल्लेखनीय है कि सामान्य आशय को अपराधी के आचरण से साबित किया जा सकता है जो कार्रवाई के दौरान प्रकट हुई है । **सुरेश सीताराम सुर्वे** (उपरोक्त) वाला मामला वर्तमान मामले में किसी प्रकार लागू नहीं होता है । **अंतार सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि क्या वर्णित स्थिति में अभियुक्त व्यक्तियों ने हत्या करने के लिए सामान्य आशय में भागीदारी की थी, इस संबंध में मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के बारे में न्यायनिर्णय किया जाना चाहिए । पूर्वोक्त मामले में सभी अभियुक्त व्यक्ति अपराधों के लिए दायी ठहराए गए थे क्योंकि वे आहत के मकान के अंदर गए थे । वर्तमान मामले में, दोनों अपीलार्थी मंदिर से एक साथ मृतक हेमराज के मकान पर पहुंचे और उन्होंने उसके मकान का दरवाजा खटखटाया । जब हेमराज ने दरवाजा खोला तब अपीलार्थियों ने अपराध किया । **मुरारी ठाकुर और एक अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[2] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जब दोनों अपीलार्थियों ने मृतक को पकड़ लिया था और तीसरे अभियुक्त ने मृतक की गर्दन काट डाली तब दंड संहिता की धारा 34 की सहायता से अपीलार्थियों को दोषसिद्ध किए जाने में कोई अवैधानिकता नहीं है । वर्तमान मामला पूर्णतया पूर्वोक्त निर्णयों के अंतर्गत आता है । इसलिए, हम अपीलार्थी महेश की ओर से दी गई दलील का अनुमोदन नहीं करते हैं ।

23. अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि मोहन लाल द्वारा प्रस्तुत की गई लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रूप में विचार नहीं किया जा सकता है और यह साक्ष्य में ग्राह्य नहीं है क्योंकि यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के उपबंधों के प्रतिकूल है । यह दलील दी गई कि मोहन लाल द्वारा मामले के अन्वेषण के पश्चात् प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी जहां पर पहले ही पुलिस थाना बोनली में प्राप्त किए गए दूरभाष संदेश के आधार पर कार्यवाही प्रारंभ हुई थी । विद्वान् लोक अभियोजक ने उपरोक्त दलीलों का विरोध किया है और यह निवेदन किया है कि वास्तव में लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 मामले की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट है, इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के उपबंधों के प्रतिकूल नहीं माना जाता है । उन्होंने आगे यह दलील दी कि

---

[1] (2007) 1 क्राइम 226.

[2] (2007) 1 क्राइम 395 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1129.

विद्वान् विचारण न्यायालय ने आक्षेपों पर विचार करके उन्हें खारिज कर दिया जो सही है ।

24. हमने उपरोक्त दलीलों पर उत्सुकता से विचार किया है और विचारण न्यायालय द्वारा की गई चर्चा का परिशीलन किया है । विधिक स्थिति के बारे में विचार करने से पूर्व हमारे लिए यह लाभदायक होगा कि इस प्रश्न पर साक्ष्य पर विचार किया जाए । रामशरण लाल (अभि. सा. 12) ने यह कथन किया है कि वह पुलिस थाना बोनली में थाना भारसाधक अधिकारी के पद पर तैनात था और तारीख 27 और 28 अप्रैल, 2002 की रात्रि में दूरभाष से एक संदेश प्राप्त हुआ था कि ग्राम कोडिया में झगड़ा हुआ था जिसमें दो व्यक्तियों की मृत्यु हुई है । उक्त सूचना को प्राप्त करके वह पुलिस बल के साथ ग्राम कोडिया की ओर अग्रसर हुआ जहां मोहन लाल बैरवा ने घटनास्थल पर लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 पेश की । उसने पृष्ठांकन ङ से च अभिलिखित किया और छ से ज पर हस्ताक्षर करवाए और इसे बिशनलाल कांस्टेबल की मार्फत मामले का रजिस्ट्रेशन करवाने के लिए पुलिस थाना बोनली भेज दिया गया था जिस पर दंड संहिता की धारा 302, 307 और 34 के अधीन अपराधों के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60/02 रजिस्ट्रीकृत की गई थी । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि उसे उस व्यक्ति के नाम का पता नहीं चल पाया जिसने दूरभाष से सूचना दी थी । दूरभाष संदेश के आधार पर उसने देवी प्रसाद द्वारा 12.10 बजे पूर्वाह्न साधारण डायरी में अभिलिखित की गई रिपोर्ट प्राप्त की जो रिपोर्ट सं. 831 है । उसने यह भी कथन किया कि सूचना के अनुसार दो घटनाएं हुई थीं । एक मंदिर के पीछे और दूसरी हेमराज के मकान पर । उसने आगे प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि किसी भी व्यक्ति ने अभियुक्त व्यक्तियों के नामों के बारे में उसे नहीं बताया और साधारण तौर पर यह कहा कि बैरवा और धोलियों के बीच झगड़ा हुआ था । अब्दुल सलाम (अभि. सा. 15) ने यह कथन किया कि उसने लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 ड्राफ्ट करके प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60/02 रजिस्ट्रीकृत की थी । अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान उसने यह स्वीकार किया है कि मामले को रजिस्ट्रेशन करने के पूर्व दूरभाष सूचना पुलिस थाने पर प्राप्त की गई थी किंतु उसे इस बात का पता नहीं है कि किसने उक्त सूचना दी थी । उपरोक्त साक्ष्य से यह निष्कर्ष निकलता है कि दूरभाष संदेश पुलिस थाने पर घटनाओं के बारे में प्राप्त की गई थी जो ग्राम कोडिया पर घटित हुई थी और जहां पर झगड़े के

परिणामस्वरूप दो व्यक्ति की मृत्यु हुई थी । उक्त सूचना को प्राप्त करने पर रामशरण लाल थाना भारसाधक अधिकारी (अभि. सा. 12) पुलिस बल के साथ ग्राम की ओर अग्रसर हुआ जहां मोहन लाल ने लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 उसे दी थी ।

25. हमने विचारण न्यायालय के निर्णय का परिशीलन किया जिस पर मामले के इस पहलू पर चर्चा की गई जिस बारे में निर्णय के पैरा 22 और 23 में विस्तृत रिपोर्ट दी गई है और यह निष्कर्ष निकाला गया कि लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के उपबंधों के प्रतिकूल नहीं है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162(1) में जो कुछ उपबंध किया गया है निम्नलिखित है :–

> "(1) किसी व्यक्ति द्वारा किसी पुलिस अधिकारी से इस अध्याय के अधीन अन्वेषण के दौरान किया गया कोई कथन, यदि लेखबद्ध किया जाता है तो कथन करने वाले व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित नहीं किया जाएगा, और न ऐसा कोई कथन या उसका कोई अभिलेख चाहे वह पुलिस, डायरी में हो या न हो, और न ऐसे कथन या अभिलेख का कोई भाग ऐसे किसी अपराध की, जो ऐसा कथन किए जाने के समय अन्वेषणाधीन था, किसी जांच या विचारण में, इसमें इसके पश्चात् यथाउपबंधित के सिवाय, किसी भी प्रयोजन के लिए उपयोग में लाया जाएगा ।"

(बल दिया गया)

26. ऐसी तथ्यात्मक स्थिति पर इस न्यायालय द्वारा **केसर लाल और अन्य** बनाम **राजस्थान राज्य**[1] वाले मामले में विचार किया गया था और **तपेन्द्र सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[2]; **सोमा भाई** बनाम **गुजरात राज्य**[3]; **धन्नजय चटर्जी** उर्फ **धन्ना** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[4] और **राम सिंह बाबाजी जडेजा** बनाम **गुजरात राज्य**[5] वाले मामलों में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों पर विचार करने के पश्चात् यह अभिनिर्धारित किया गया कि दूरभाष संदेश, इस संज्ञेय अपराध के बारे में सूचना देना है यह प्रायः

---

[1] (1997) 2 डब्ल्यू. एल. सी. (राजस्थान) 265.
[2] (1994) 2 एस. सी. सी. 220.
[3] (1994) 2 एस. सी. सी. 698.
[4] ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 135.
[5] ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 2488.

संविवाद का मामला है कि क्या इससे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का गठन होता है या नहीं । इस मामले में उच्चतम न्यायालय का मत संगत है कि यदि दूरभाष संदेश गुप्त प्रकृति का है और ऐसा दूरभाष संदेश का प्रयोजन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में दर्ज नहीं किया गया है किंतु पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी से यह अनुरोध किया गया है कि वह घटनास्थल पर पहुंचे या जहां शव पड़ा हुआ है, तो इसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रूप में नहीं माना जा सकता है ।

27. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **थामन कुमार** बनाम **संघीय राज्य क्षेत्र, चंडीगढ़ राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब कांस्टेबल द्वारा रात्रि में गश्त लगाने वाले को घटना के बारे में दूरभाष संदेश दिया गया था जिसमें यह उल्लेख किया गया है कि तीन व्यक्तियों ने मृतक पर हमला किया और उक्त सूचना को घटना के प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रूप में नहीं माना जा सकता है किंतु घटनास्थल पर पुलिस व्यक्ति के प्रस्थान किए जाने के बारे में मात्र पुष्टि की गई । **विक्रम और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[2] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि जब अभियोजन साक्षी के बारे में दूरभाष से थाने के भारसाधक अधिकारी को सूचना दिया जाना अभिकथित है और हेड कांस्टेबल ने यह कथन किया है कि उसने इस बात को लिखा था किंतु वह और अन्वेषक अधिकारी ने यह नहीं कहा है कि यह विस्तृत रिपोर्ट है । एक अन्य प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जिसे विस्तृत रूप से अभिलिखित किया गया था, बाद में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के रूप में उसे माने जाने के संबंध में किसी अपवाद के रूप में नहीं किया जा सकता है ।

28. उक्त नज़ीरें वर्तमान वाले मामले में पूरी तरह लागू होती हैं क्योंकि 27 और 28 अप्रैल, 2002 को रात्रि के दौरान पुलिस थाना बोनली पर सूचना दूरभाष से प्राप्त की गई थी और यह बात गुप्त और अस्पष्ट है । जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है कि थाना भारसाधक अधिकारी बोनली, पुलिस बल के साथ उक्त सूचना मिलने पर ग्राम कोडिया गए थे जहां मोहन लाल ने लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 पेश की । यहां पर यह उल्लेख करना भी महत्वपूर्ण है कि रामशरण लाल (अभि. सा. 12) ने अपीलार्थियों की ओर से अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह कथन किया है कि उसने

---

[1] ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 3975.

[2] ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1893.

12.45 बजे पूर्वाह्न गोपाल से रिपोर्ट प्राप्त की जिसे बाद में मोहन लाल द्वारा पेश किया गया था । उसके द्वारा 1.45 बजे पूर्वाह्न प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 59/02 प्राप्त की गई थी जबकि दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60/02 पूर्वाह्न में 2.30 बजे प्राप्त की गई थी । उसने यह भी कथन किया है कि अगले दिन उसने 7.30 बजे पूर्वाह्न प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 59/02 पर अन्वेषण पूरा किया था और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60/02 के आधार पर अन्वेषण तारीख 28 अप्रैल, 2002 को 7.30 बजे पूर्वाह्न प्रारंभ किया गया था, पूर्वोक्त तथ्यों से स्पष्ट रूप से यह प्रकट होता है कि लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 रामशरण लाल थाना भारसाधक अधिकारी (अभि. सा. 12) को तारीख 28 अप्रैल, 2002 को 1.30 बजे पूर्वाह्न पेश की गई थी, इससे पूर्व उसने तारीख 28 अप्रैल, 2002 को 7.30 बजे पूर्वाह्न प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60/02 के आधार पर अन्वेषण आरंभ किया गया था । इसलिए संक्षिप्त रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 सूचना के आधार पर दर्ज किए गए मामले के अन्वेषण को प्रारंभ करने के पूर्व प्रस्तुत की गई थी, इसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के उपबंधों द्वारा प्रतिकूल नहीं ठहराया गया है, इसलिए, पूर्वोक्त आक्षेप में कोई सार नहीं पाया गया है ।

29. अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को साबित करने के लिए कोई स्वतंत्र साक्षी पेश नहीं किया है । जो साक्षी प्रस्तुत किए गए हैं या तो मृतक के नातेदार हैं या उसके पड़ोसी हैं और इस प्रकार, उनके कथनों का किसी प्रकार अवलंब नहीं लिया जा सकता है तथा अभियोजन पक्ष अपने पक्षकथन को साबित करने में बुरी तरह विफल हुआ है । विद्वान् लोक अभियोजक ने उपरोक्त दलील का विरोध किया है और यह निवेदन किया है कि अभियोजन पक्ष ने केवल उन साक्षियों को पेश किया जो अपराध कारित किए जाने के समय पर मौजूद थे और उनकी उपस्थिति नैसर्गिक है और उस पर संदेह नहीं किया जा सकता है ।

30. हमने उपरोक्त दलीलों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है और यह निष्कर्ष निकाला है कि मोहन लाल (अभि. सा. 5), रवीन्द्र (अभि. सा. 7), शंकर (अभि. सा. 8), पृथ्वी राज (अभि. सा. 9), हंसराज (अभि. सा. 10) और रामदयाल (अभि. सा. 14) ने अभियोजन पक्षकथन के समर्थन में साक्ष्य दिया है । उपरोक्त सभी साक्षियों ने घटना के बारे में विस्तृत ब्यौरा दिया है । उनकी अपीलार्थियों की ओर से व्यापक प्रतिपरीक्षा की गई किंतु

उनके कथन इधर-उधर नहीं हो सके । विचारण न्यायालय ने व्यापक रूप से उनके कथनों पर चर्चा की है । घटनास्थल का नक्शा प्रदर्श पी-7 का परिशीलन करने पर यह दर्शित हुआ है कि मोहन लाल (अभि. सा. 5), शंकर लाल (अभि. सा. 8) और हंसराज (अभि. सा. 10) के मकान घटना के स्थान के नजदीक हैं और उनकी मौजूदगी अपने मकान पर रात्रि में 11.00 बजे अपराह्न थी, इस पर किसी भी तरह संदेह नहीं किया जा सकता है और तद्नुसार अपराध किए जाने के दौरान घटना के स्थान पर उनकी मौजूदगी नैसर्गिक है । हमने उपरोक्त साक्षियों के कथनों का परिशीलन भी किया और यह महसूस किया कि वे हितबद्ध साक्षी नहीं हो सकते हैं । इसके अतिरिक्त, पूर्वोक्त साक्षियों के कथनों का चिकित्सा साक्ष्य तथा कमला (अभि. सा. 6) और रामेश्वर प्रसाद (अभि. सा. 19) द्वारा समर्थन किया गया है ।

31. जहां तक विधिक स्थिति का संबंध है यह उल्लेख करना पर्याप्त होगा कि **दलीप सिंह और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा यह विधि अधिकथित की गई है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया जो निम्नलिखित है :–

> "साधारणतया किसी साक्षी पर स्वतंत्र होने के रूप में विचार किया जाएगा जब तक कि उसके बारे में किसी स्रोत से यह पता न चल जाए कि संभवतया ऐसे साक्षी को दागी न समझ लिया जाए और सामान्यतया इससे यह अभिप्रेत है जब तक कि साक्षी के पास ऐसा कारण न हो अभियुक्त के विरुद्ध शत्रुता की वजह से वह उसे मिथ्या रूप से फंसाने की इच्छा रखता हो । साधारणतया निकट की नातेदारी की वजह से वास्तविक अपराधी को छुपाना होगा और निर्दोष व्यक्ति को मिथ्या रूप से फंसाया गया हो । यह बात सही है कि जब आदमी अत्यधिक तीव्र भावनाओं में रहता है जो वैयक्तिक शत्रुता के कारण होता है जब भावनाएं हावी हो जाती हैं और दुश्मनी के व्यक्तिगत कारण होते हैं तो यह सही है कि ऐसा निर्दोष व्यक्ति जिसके विरुद्ध कोई साक्षी दोषी व्यक्ति के साथ मलीमालिन्य रखता है, को फंसाने की प्रकृति रखता है किंतु ऐसी किसी आलोचना का आधार होना चाहिए और आधार से काफी दूर संबंध का तथ्य प्रायः सच्चाई की निश्चित गारंटी है । तथापि, हम कोई अतिव्याप्ति सामान्यीकरण बनाने

---

[1] ए. आई. आर. 1953 एस. सी. 364.

का प्रयत्न नहीं कर रहे हैं । प्रत्येक मामले का उसके स्वयं के तथ्यों पर न्यायनिर्णयन किया जाना चाहिए । हमारी मताभिव्यक्तियों में केवल इस बात पर संघर्ष है कि जो कुछ प्रायः देखने में आता है कि प्रज्ञा के साधारण नियम के रूप में हमारे समक्ष मामले आए । ऐसा कोई साधारण नियम नहीं है । प्रत्येक मामले को सीमित दायरे में होना चाहिए और अपने स्वयं के तथ्यों से शासित होना चाहिए ।"

32. पश्चात्वर्ती निर्णयों **दुलीचंद और अन्य** बनाम **राजस्थान राज्य**[1] तथा **कलेगुरा पद्माराव और एक अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[2] वाले मामलों में उच्चतम न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त मत का अनुसरण किया गया है ।

33. उपरोक्त विधिक स्थिति तथा तथ्यात्मक स्थिति को ध्यान में रखते हुए अभियोजन पक्ष द्वारा जो प्रत्यक्षदर्शी साक्षी पेश किए गए हैं उन्हें भागतः हितबद्ध साक्षी नहीं माना जा सकता है । अतः, हम पूर्वोक्त आक्षेप को अस्वीकार करते हैं ।

34. अपीलार्थियों की ओर से जो आक्षेप किया गया है यह है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट विलंब के पश्चात् दर्ज की गई थी और इसकी प्रति काफी समय के बाद संबंधित मजिस्ट्रेट को भेजी गई थी तथा इस प्रकार इसका साक्ष्यिक मूल्य शून्य है । विद्वान् लोक अभियोजक ने उक्त दलील का विरोध किया है । हमने उपरोक्त प्रश्न पर विचार करके यह निष्कर्ष निकाला है कि अभियोजन पक्षकथन के अनुसार घटना तारीख 27 अप्रैल, 2002 को 11.00 बजे अपराह्न घटी थी । लिखित रिपोर्ट प्रदर्श पी-6 का परिशीलन करने से यह दर्शित हुआ है कि इसे मोहन लाल (अभि. सा. 5) द्वारा थाना भारसाधक अधिकारी रामशरण लाल (अभि. सा. 12) को तारीख 28 अप्रैल, 2002 को 1.30 बजे पूर्वाह्न पेश की गई थी । अभिलेख पर यह प्रकट हुआ है कि पुलिस थाना बोनली ग्राम कोडिया से 9 किलोमीटर की दूरी पर है । पहले मोहन लाल (अभि. सा. 5) प्रातः पुलिस थाना बोनली पर जा सका, थाना भारसाधक अधिकारी बोनली ग्राम कोडिया पहुंच चुके थे तथा पूर्वोक्त रिपोर्ट पहले ही पूर्ववर्ती अवसर पर प्रस्तुत की गई थी । इस प्रकार, उसे दर्ज करने में कोई विलंब नहीं हुआ है । प्रदर्श पी-6 का परिशीलन करने से यह दर्शित हुआ है कि इसे पेश करने के पश्चात् थाना भारसाधक अधिकारी बोनली द्वारा इस मामले को रजिस्ट्रीकरण के

---

[1] (1974) 3 एस. सी. सी. 698 = ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 276.

[2] (2007) 2 क्राइम 217 (एस. सी.) = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1299.

लिए पुलिस थाने पर भेजा गया था और जिसके आधार पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 60/02 तारीख 28 अप्रैल, 2002 को 2.00 बजे पूर्वाह्न रजिस्ट्रीकृत की गई थी । रिपोर्ट की प्रति तारीख 29 अप्रैल, 2002 को 10.00 बजे पूर्वाह्न न्यायिक मजिस्ट्रेट बोनली के न्यायालय से प्राप्त की गई थी । उसमें यह उल्लेख किया गया था कि तारीख 28 अप्रैल, 2002 को रविवार था इसलिए, छुट्टी का दिन था । इस प्रकार, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी-16 की प्रति बिना किसी विलंब के न्यायालय में पेश की गई थी और इसलिए, अपीलार्थियों की ओर से किया गया आक्षेप का कोई आधार नहीं है ।

35. अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा कोई दूसरी दलील नहीं दी गई थी ।

36. पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए इस अपील में कोई गुणागुण नहीं है और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है । विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थियों के लिए अधिनिर्णीत की गई दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखा जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

आर्य

(2012) 2 दा. नि. प. 104 **हिमाचल प्रदेश**

हिमाचल प्रदेश राज्य

बनाम

सुरेश कुमार और अन्य

तारीख 27 फरवरी, 2012

न्यायमूर्ति सुरिन्दर सिंह

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 451, 147 और 323 – गंभीर क्षति – जहां अभियोजन यह साबित नहीं कर सका कि दोनों पक्षों की लड़ाई में आक्रामक कौन था और एक ही घटना की बाबत प्रति मामलों का विचारण एक ही न्यायालय द्वारा किया जाना था किंतु इस मामले में पृथक्-पृथक् मामले भिन्न-भिन्न न्यायालयों द्वारा विचारित किए

गए वहां अभियुक्तों को संदेह का फायदा प्रदान कर दोषमुक्त करना उचित है ।

मामले के तथ्यों के बारे में संक्षेप में यह कथन किया गया है कि तारीख 16 जून, 1996 को लगभग 5.00 बजे अपराह्न जब शिकायतकर्ता जमन दास अपनी पत्नी निर्मला देवी के साथ अपनी दुकान में था तब प्रत्यर्थी मिट्टी की टिपर लाए थे और शिकायतकर्ता की दुकान के सामने रास्ते पर उसे फैंक दिया जिसपर उसने आपत्ति की । जब प्रत्यर्थी दूसरी बार टिपर लाए तब शिकायतकर्ता द्वारा पुनः आक्षेप किया गया । प्रत्यर्थियों के बारे में क्रोधित हो जाने का अभिकथन किया गया और वे डंडे लेकर आए, उन्होंने शिकायतकर्ता और उसकी पत्नी को पीटा और जिसके परिणामस्वरूप उन दोनों के शरीर पर क्षतियां कारित हुईं । कंचना देवी और अमरनाथ द्वारा अभिकथित घटना देखे जाने का कथन किया गया है जिन्हें प्रत्यर्थियों द्वारा भी धमकाया गया था । प्रत्यर्थियों द्वारा दुकान में रखी गई वस्तुओं को नुकसान पहुंचाया गया था । शिकायतकर्ता पक्षकार को साक्षी संतराम और हेमराज द्वारा बचाया जाना अभिकथित है परंतु मामले के विचारण के दौरान उनकी परीक्षा नहीं की गई थी । मामले की रिपोर्ट दंड संहिता की धारा 451, 147, 148, 323, 325, 506 के साथ पठित धारा 149 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क के माध्यम से पुलिस थाने में दर्ज कराई गई थी । पुलिस ने आहत व्यक्तियों की चिकित्सीय परीक्षा करवाई थी । उन्होंने घटनास्थल के फोटोग्राफ भी लिए और घटनास्थल का नक्शा तैयार किया । शिकायतकर्ता की पत्नी निर्मला देवी के बारे में गंभीर क्षतियां कारित होने का कथन किया गया है । पुलिस ने अन्वेषण कार्य पूरा किया और न्यायालय में चालान प्रस्तुत किया और जिस पर उनकी दोषमुक्ति की गई थी । मामले को सुना गया और अभिलेख का परिशीलन किया गया । राज्य द्वारा दोषमुक्ति के आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील की गई । उच्च न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा उसी घटना के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल किए गए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में पारित किए गए निर्णय की अभिप्रमाणित प्रति अभिलेख पर रखी गई थी जिस पर अंततः, विचारण किया गया था और अभियुक्त व्यक्तियों को दोषमुक्त कर दिया गया था । इसमें कुछ प्रत्यर्थियों को क्षतियां भी कायम हुई थीं । इस प्रकार, इस मामले में यह निष्कर्ष निकालना कठिन था कि आक्रामक कौन था । अभिलेख पर पूर्वोक्त

तथ्यों और अन्वेषक अधिकारी द्वारा स्वीकार किए गए विशिष्ट सामग्री की आलोचनात्मक परीक्षा करने पर अभियोजन पक्ष इस बारे में यह सिद्ध नहीं कर सका है कि आक्रामक कौन था और आगे जब उसी घटना के संबंध में प्रति मामले फाइल किए गए तब उसी न्यायालय द्वारा सही निष्कर्ष निकालने के लिए इन मामलों का एकसाथ विचारण किया जाना चाहिए था किंतु वर्तमान मामले को अन्य मामलों से अलग रखा गया जो भिन्न-भिन्न न्यायालयों में फाइल किए गए और उनके द्वारा उनका स्वतंत्र रूप से विनिश्चय कराया गया । अतः, इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थियों को संदेह का लाभ देकर दोषमुक्त करके ठीक ही किया है । इसलिए, मामले में हस्तक्षेप करना उचित नहीं है । अतः अपील में कोई सार नहीं है । तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है ।
(पैरा 6 और 7)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2005 की दांडिक अपील सं. 351.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 378 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री पी. एम. नेगी, उप-महाधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री जे. आर. पोसवाल, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति सुरिन्दर सिंह – मामले को सुना गया और अभिलेख का परिशीलन किया गया ।

2. राज्य द्वारा यह वर्तमान अपील 2004/97 का मामला सं. 809/1 में विचारण न्यायालय की ओर से प्रत्यर्थियों को दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध फाइल की गई है जिसका विनिश्चय 30 मई, 2005 को किया गया था ।

3. मामले के तथ्यों के बारे में संक्षेप में यह कथन किया गया है कि तारीख 16 जून, 1996 को लगभग 5.00 बजे अपराह्न जब शिकायतकर्ता जमन दास (अभि. सा. 1) अपनी पत्नी निर्मला देवी (अभि. सा. 6) के साथ अपनी दुकान में था तब प्रत्यर्थी मिट्टी के टिपर लाए थे और शिकायतकर्ता की दुकान के सामने रास्ते पर उसे फैंक दिया जिसपर उसने आपत्ति की । जब प्रत्यर्थी दूसरी बार टिपर लाए तब शिकायतकर्ता द्वारा पुनः आक्षेप किया गया । प्रत्यर्थियों के बारे में क्रोधित हो जाने का अभिकथन किया गया और वे डंडे लेकर आए, उन्होंने शिकायतकर्ता और उसकी पत्नी को पीटा और जिसके परिणामस्वरूप उन दोनों के शरीर पर क्षतियां कारित हुईं । कंचना देवी (अभि. सा. 9) और अमरनाथ (अभि. सा. 12) द्वारा अभिकथित घटना देखे जाने का कथन किया गया है जिन्हें प्रत्यर्थियों द्वारा भी धमकाया गया

था । प्रत्यर्थियों द्वारा दुकान में रखी गई वस्तुओं को नुकसान पहुंचाया गया था । शिकायतकर्ता पक्षकार को साक्षी संतराम और हेमराज द्वारा बचाया जाना अभिकथित है परंतु मामले के विचारण के दौरान उनकी परीक्षा नहीं की गई थी ।

4. मामले की रिपोर्ट दंड संहिता की धारा 451, 147, 148, 323, 325, 506 के साथ पठित धारा 149 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क के माध्यम से पुलिस थाने में दर्ज कराई गई थी । पुलिस ने आहत व्यक्तियों की चिकित्सीय परीक्षा करवाई थी । उन्होंने घटनास्थल के फोटोग्राफ भी लिए और घटनास्थल का नक्शा तैयार किया । शिकायतकर्ता की पत्नी निर्मला देवी के बारे में गंभीर क्षतियां कारित होने का कथन किया गया है । पुलिस ने अन्वेषण कार्य पूरा किया और न्यायालय में चालान प्रस्तुत किया और जिस पर उनकी दोषमुक्ति की गई थी ।

5. अन्वेषक अधिकारी पाउनु राम ने संगत रूप से यह स्वीकार किया है कि शिकायतकर्ता की दुकान के सामने रास्ते के बारे में पक्षकारों के बीच विवाद था । प्रत्यर्थियों के अनुसार उन्होंने उपखंड मजिस्ट्रेट से आदेश की ईप्सा की थी कि रख-रखाव के कार्य में कोई हस्तक्षेप न किया जाए । उसने यह भी स्वीकार किया कि प्रत्यर्थी ने रास्ते पर पत्थर नीचे उतारे थे और विद्यमान रास्ते पर मरम्मत का कार्य करने के लिए मिट्टी भी गिराई थी । उसने यह भी स्वीकार किया है कि शिकायतकर्ता जमन दास की चिकित्सीय परीक्षा भी की गई थी । अन्वेषक अधिकारी ने सुसंगत रूप से यह भी कथन किया है कि शिकायतकर्ता आक्रामक था और इस घटना के संबंध में प्रति मामला भी किया गया था ।

6. प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने विद्वान् मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा उसी घटना के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा फाइल किए गए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के संबंध में पारित किए गए निर्णय की अभिप्रमाणित प्रति अभिलेख पर रखी गई थी जिस पर अंततः, विचारण किया गया था और अभियुक्त व्यक्तियों को दोषमुक्त कर दिया गया था । इसमें कुछ प्रत्यर्थियों को क्षतियां भी कायम हुई थीं । इस प्रकार, इस मामले में यह निष्कर्ष निकालना कठिन था कि आक्रामक कौन था ।

7. अभिलेख पर पूर्वोक्त तथ्यों और अन्वेषक अधिकारी द्वारा स्वीकार किए गए विशिष्ट सामग्री की आलोचनात्मक परीक्षा करने पर अभियोजन पक्ष इस बारे में यह सिद्ध नहीं कर सका है कि आक्रामक कौन था और

आगे जब उसी घटना के संबंध में प्रति मामले फाइल किए गए तब उसी न्यायालय द्वारा सही निष्कर्ष निकालने के लिए इन मामलों का एकसाथ विचारण किया जाना चाहिए था किंतु वर्तमान मामले को अन्य मामलों से अलग रखा गया जो भिन्न-भिन्न न्यायालयों में फाइल किए गए और उनके द्वारा उनका स्वतंत्र रूप से विनिश्चय कराया गया । अतः, इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थियों को संदेह का लाभ देकर दोषमुक्त करके ठीक ही किया है । इसलिए, मामले में हस्तक्षेप करना उचित नहीं है । अतः अपील में कोई सार नहीं है । तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है ।

8. प्रत्यर्थियों को उनके द्वारा इस मामले की कार्यवाही के दौरान निष्पादित किए गए जमानत बंधपत्रों से भी उन्मोचित किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

आर्य

(2012) 2 दा. नि. प. 108 **हिमाचल प्रदेश**

जसबीर सिंह

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तारीख 16 मार्च, 2012

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 472 [सपठित दंड संहिता, 1860 – धारा 447] – चालू रहने वाला अपराध – आपराधिक अतिचार एक चालू रहने वाला अपराध है, अतः विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा आपराधिक अतिचार के अपराध का संज्ञान लिए जाने में परिसीमा काल बाधित नहीं है क्योंकि नया परिसीमा काल हर क्षण प्रारंभ होता है जिसके दौरान अपराध चालू रहता है ।

तथ्यों के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि याची सं. 1 और 2 भाई हैं तथा याची सं. 3 उनका पिता है । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने

पुलिस द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन पेश की गई रिपोर्ट पर दंड संहिता की धारा 447 के साथ पठित धारा 34 के अधीन अपराध किए जाने के लिए आवेदकों के विरुद्ध संज्ञान लिया है । विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 24 अगस्त, 2011 को संज्ञान लिया गया था और यह कथन किया गया है कि लेखराज धीमन ने पुलिस को शिकायत प्रस्तुत की है । इस पर पुलिस ने तारीख 2 दिसंबर, 2010 को दंड संहिता की धारा 447 के साथ पठित धारा 34 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की है । यह अभिकथन किया गया कि लेखराज धीमन की शिकायत पर तारीख 25 अगस्त, 2009 और 14 जुलाई, 2010 की शिकायतों के प्रति उल्लेख किया गया है । शिकायतकर्ता की शिकायतों से यह प्रकट हुआ है कि अभिकथित अतिचार की घटना तारीख 18 जनवरी, 2009 से 24 जनवरी, 2009 के बीच की अवधि से संबंधित है । यह कथन किया गया कि अपराध के विचारण के लिए याचियों को उन्हें समन भेजा गया, जिस पर न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 468 के अधीन अधिकथित विनिर्दिष्ट वर्जन को ध्यान में रखते हुए मामले में संज्ञान नहीं लिया जा सका । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने दंड संहिता की धारा 447 के साथ पठित धारा 34 के अधीन अपराध के लिए संज्ञान लेने की अधिकारिता को स्वीकार किया है जब संहिता की धारा 468 के अधीन ऐसा संज्ञान लिया जाना कालवर्जित हो जाता है । यह याचिका विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, न्यायालय सं. 5, शिमला के न्यायालय में लंबित 2011 का मामला सं. 36-2 में विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, न्यायालय सं. 5, शिमला द्वारा तारीख 24 अगस्त, 2011 को अपास्त किए गए आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है । उच्च न्यायालय द्वारा याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि शिकायतकर्ता ने अपनी अंतिम शिकायत में तारीख 25 अगस्त, 2009 और 14 जुलाई, 2010 की शिकायतों का उल्लेख किया है । तारीख 2 दिसंबर, 2010 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 248 में तारीख 25 अगस्त, 2009 और 14 जुलाई, 2010 की शिकायतों का उल्लेख किया गया है । तारीख 25 अगस्त, 2009 की शिकायत की प्रति अभिलेख पर रखी गई है जिसमें यह कथन किया गया है कि याची सं. 3 ने तारीख 23 जनवरी, 2009 को शिकायतकर्ता द्वारा बनाई गई दीवार पर निर्माण कार्य किया था और यह निवेदन किया गया जिसपर यह धारणा की गई न कि स्वीकार किया गया कि तारीख 23 जनवरी, 2009 को दीवार का निर्माण किया गया था

जैसाकि अभिकथन किया गया है, तब तारीख 23 जनवरी, 2009 को अतिचार किया गया था । विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा 2-1/2 वर्ष से अधिक समय के पश्चात् तारीख 24 अगस्त, 2011 को मामले में संज्ञान लिया गया और यह दलील दी गई कि आपराधिक अतिचार के मामले में दंड संहिता की धारा 447 के अधीन दंड का उपबंध जुर्माने के साथ 3 मास किया गया है या जो 500.00 रुपए तक या दोनों हो सकता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 की उपधारा 2 का खंड (ख) में यदि दंडनीय अपराध में एक वर्ष से अधिक का कारावास नहीं है तब न्यायालय के लिए ऐसे मामले में संज्ञान लेने की परिसीमा के लिए एक वर्ष का उपबंध किया गया है । यह दलील दी गई कि विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के पास दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 को ध्यान में रखते हुए तारीख 24 अगस्त, 2011 को दंड संहिता की धारा 447 के अधीन अपराध के संज्ञान लेने की कोई अधिकारिता नहीं थी । दंड संहिता की धारा 447 के अधीन उपबंधित अधिकतम दंड जुर्माने के साथ तीन मास का है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 की उपधारा (2) का खंड (ख) में यदि अपराध एक वर्ष से अधिक अवधि का नहीं हो और उसके लिए आजीवन कारावास का दंडादेश है तो संज्ञान लेने के लिए एक वर्ष का उपबंध किया गया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 472 में यह उपबंध किया गया है कि किसी चालू रहने वाले अपराध की दशा में नया परिसीमा काल उस समय के प्रत्येक क्षण से प्रारंभ होगा जिसके दौरान अपराध चालू रहता है । कोई भी न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान परिसीमा काल के अवसान के पश्चात् कर सकता है यदि मामले के तथ्यों या परिस्थितियों से उसका समाधान हो जाता है कि विलम्ब का उचित रूप से स्पष्टीकरण कर दिया गया है या न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक है । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 472 के अधीन परिसीमा काल की अवधि उस दौरान से प्रारंभ होगी जिस दौरान से अपराध चालू रहता है । याचियों ने याचिका में मामले को योजनाबद्ध तरीके से पेश नहीं किया है कि उन्होंने तारीख 23 जनवरी, 2009 के पश्चात् किसी समय पर अभिकथित दीवार को हटा दिया था । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 472 के अधीन निरंतर अपराध किया गया है, इन परिस्थितियों में तारीख 24 अगस्त, 2011 के आदेश में कोई दोष नहीं पाया जा सकता जिस पर विद्वान् मजिस्ट्रेट ने अपराध का संज्ञान लिया था । याचिका में कोई सार नहीं है । (पैरा 4, 6 और 11)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1991]	(1991) 2 एस. सी. सी. 141 : **गोकक पटेल वोलकार्ट लिमिटेड** बनाम **डुंडैया गुरूशिधय्या हीरामठ और अन्य** ;	5
[1988]	1988 (2) क्रिमिनल ला जर्नल 1452 : **बेगु राम** बनाम **जयपुर उद्योग लिमिटेड** ;	5
[1988]	1988 (2) क्रिमिनल ला जर्नल 1560 : **श्याम सुन्दर शर्मा** बनाम **असम राज्य और अन्य** ;	5
[1980]	17 (1980) डीएलटी 230 : **राम नारायन** बनाम **राज्य** ।	5

प्रकीर्ण (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक एमएमओ सं. 210.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन याचिका ।

याचियों की ओर से श्री सत्यन वैद्य, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री रूमा कौशिक, अपर महाधिवक्ता और श्री जे. एस. राना, सहायक महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह – यह याचिका विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, न्यायालय सं. 5, शिमला के न्यायालय में लंबित 2011 का मामला सं. 36-2 में विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, न्यायालय सं. 5, शिमला द्वारा तारीख 24 अगस्त, 2011 को अपास्त किए गए आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है ।

2. तथ्यों के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि याची सं. 1 और 2 भाई हैं तथा याची सं. 3 उनका पिता है । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट ने पुलिस द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के अधीन पेश की गई रिपोर्ट पर दंड संहिता की धारा 447 के साथ पठित धारा 34 के अधीन अपराध किए जाने के लिए आवेदकों के विरुद्ध संज्ञान लिया है । विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 24 अगस्त, 2011 को संज्ञान लिया गया था और यह कथन किया गया है कि लेखराज धीमन ने पुलिस को शिकायत प्रस्तुत की है । इस पर पुलिस ने तारीख 2 दिसंबर, 2010 को दंड संहिता की

धारा 447 के साथ पठित धारा 34 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की है ।

3. यह अभिकथन किया गया कि लेखराज धीमन की शिकायत पर तारीख 25 अगस्त, 2009 और 14 जुलाई, 2010 की शिकायतों के प्रति उल्लेख किया गया है । शिकायतकर्ता की शिकायतों से यह प्रकट हुआ है कि अभिकथित अतिचार की घटना तारीख 18 जनवरी, 2009 से 24 जनवरी, 2009 के बीच की अवधि से संबंधित है । यह कथन किया गया कि अपराध के विचारण के लिए याचियों को उन्हें समन भेजा गया, जिस पर न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 468 के अधीन अधिकथित विनिर्दिष्ट वर्जन को ध्यान में रखते हुए मामले में संज्ञान नहीं लिया जा सका । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने दंड संहिता की धारा 447 के साथ पठित धारा 34 के अधीन अपराध के लिए संज्ञान लेने की अधिकारिता को स्वीकार किया है जब संहिता की धारा 468 के अधीन ऐसा संज्ञान लिया जाना कालवर्जित हो जाता है ।

4. मामले को सुना गया । याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि शिकायतकर्ता ने अपनी अंतिम शिकायत में तारीख 25 अगस्त, 2009 और 14 जुलाई, 2010 की शिकायतों का उल्लेख किया है । तारीख 2 दिसंबर, 2010 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 248 में तारीख 25 अगस्त, 2009 और 14 जुलाई, 2010 की शिकायतों का उल्लेख किया गया है । तारीख 25 अगस्त, 2009 की शिकायत की प्रति अभिलेख पर रखी गई है जिसमें यह कथन किया गया है कि याची सं. 3 ने तारीख 23 जनवरी, 2009 को शिकायतकर्ता द्वारा बनाई गई दीवार पर निर्माण कार्य किया था और यह निवेदन किया गया जिसपर यह धारणा की गई न कि स्वीकार किया गया कि तारीख 23 जनवरी, 2009 को दीवार का निर्माण किया गया था जैसाकि अभिकथन किया गया है, तब तारीख 23 जनवरी, 2009 को अतिचार किया गया था । विद्वान् मजिस्ट्रेट द्वारा 2½ वर्ष से अधिक समय के पश्चात् तारीख 24 अगस्त, 2011 को मामले में संज्ञान लिया गया और यह दलील दी गई कि आपराधिक अतिचार के मामले में दंड संहिता की धारा 447 के अधीन दंड का उपबंध जुर्माने के साथ 3 मास किया गया है या जो 500.00 रुपए तक या दोनों हो सकता है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 की उपधारा 2 का खंड (ख) में यदि दंडनीय अपराध में एक वर्ष से अधिक का कारावास नहीं है तब न्यायालय के लिए ऐसे मामले में संज्ञान लेने की परिसीमा के लिए एक वर्ष का उपबंध किया

गया है । यह दलील दी गई कि विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट के पास दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 को ध्यान में रखते हुए तारीख 24 अगस्त, 2011 को दंड संहिता की धारा 447 के अधीन अपराध के संज्ञान लेने की कोई अधिकारिता नहीं थी ।

5. याची के विद्वान् काउंसेल ने **राम नारायन** बनाम **राज्य**[1], **श्याम सुन्दर शर्मा** बनाम **असम राज्य और अन्य**[2] वाले मामलों का अवलंब लिया । तारीख 24 अगस्त, 2011 के आदेश को अपास्त किए जाने के लिए और 2011 का मामला सं. 36-2 को अभिखंडित करने के लिए निवेदन किया गया । विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने यह दलील दी कि यह निरंतर अपराध का मामला है । अपनी दलील के समर्थन में उन्होंने **गोकक पटेल वोलकार्ट लिमिटेड** बनाम **डुंडैया गुरूशिधय्या हीरामठ और अन्य**[3] और **बेगु राम** बनाम **जयपुर उद्योग लिमिटेड**[4] वाले मामलों का अवलंब लिया ।

6. दंड संहिता की धारा 447 के अधीन उपबंधित अधिकतम दंड जुर्माने के साथ तीन मास का है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 की उपधारा (2) का खंड (ख) में यदि अपराध एक वर्ष से अधिक अवधि का नहीं हो और उसके लिए आजीवन कारावास का दंडादेश है तो संज्ञान लेने के लिए एक वर्ष का उपबंध किया गया है । दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 472 में यह उपबंध किया गया है कि किसी चालू रहने वाले अपराध की दशा में नया परिसीमा काल उस समय के प्रत्येक क्षण से प्रारंभ होगा जिसके दौरान अपराध चालू रहता है । कोई भी न्यायालय किसी अपराध का संज्ञान परिसीमा काल के अवसान के पश्चात् कर सकता है यदि मामले के तथ्यों या परिस्थितियों से उसका समाधान हो जाता है कि विलम्ब का उचित रूप से स्पष्टीकरण कर दिया गया है या न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक है । इस प्रकार यह स्पष्ट है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 472 के अधीन परिसीमा काल की अवधि उस दौरान से प्रारंभ होगी जिस दौरान से अपराध चालू रहता है ।

7. **राम नारायन** (उपरोक्त) मामले में तारीख 19 अप्रैल, 1975 को शिकायतकर्ता द्वारा रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी कि याची ने मुख्य दरवाजा

---

[1] 17 (1980) डीएलटी 230.

[2] 1988 (2) क्रिमिनल ला जर्नल 1560.

[3] (1991) 2 एस. सी. सी. 141.

[4] 1988 (2) क्रिमिनल ला जर्नल 1452.

तथा भंडारगृह एवं कार्यालय के गेट को तोड़कर खोला था जहां शिकायतकर्ता अपना कारोबार चला रहा था । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने दंड संहिता की धारा 448 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए तारीख 5 अक्तूबर, 1977 को याची के ऊपर अभियोजन चलाने के लिए नोटिस जारी किया । इस मामले को न्यायालय में चुनौती दी गई थी । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि याची ने शिकायतकर्ता के असहाय होने का फायदा लेकर उसकी सम्पत्ति पर अवैध कब्जा किया था । इस तथ्य से यह प्रकट हुआ है कि उसके पास सिविल उपचार उपलब्ध था, इसलिए, दंड संहिता की धारा 448 के अधीन आपराधिक अपराध के लिए याची के ऊपर अभियोजन चलाने को बाहर करने के लिए मुश्किल से आधार बनता है । विचारण न्यायालय द्वारा प्रयोग किया गया विवेक पर मनमाना होने के रूप में विचार नहीं किया जा सकता है ।

8. **श्याम सुंदर शर्मा** (उपरोक्त) वाले मामले में यह निष्कर्ष निकाला गया था कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में यह दर्शित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि अभिकथित घटना के पश्चात् भी निरंतर अतिचार किया गया था । वर्तमान वाले मामले में अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री नहीं है जिससे यह निष्कर्ष अभिलिखित किया जा सके कि अभिकथित निर्मित दीवार को याचियों द्वारा तारीख 23 जनवरी, 2009 को उसी समय हटाया गया था । **श्याम सुंदर शर्मा** (उपरोक्त) के मामले के तथ्य वर्तमान वाले मामले में लागू नहीं होते हैं ।

9. **गोकक पटेल वोलकार्ट लि.** (उपरोक्त) ऐसा मामला है जहां पर मजिस्ट्रेट ने यह अभिनिर्धारित किया कि कम्पनी अधिनियम की धारा 630 (1)(ख) के अधीन कम्पनी के क्वार्टर खाली न करने पर अभिकथित अपराध के लिए प्रत्यर्थियों के विरुद्ध अपीलार्थियों की शिकायत जैसाकि प्रत्यर्थियों के सेवानिवृत्ति के छह मास से भी अधिक समय तक अपेक्षित किया गया है, परिसीमा द्वारा वर्जित किया गया था और इस बात को विचार में नहीं लिया जा सकता है । उच्चतम न्यायालय ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 468 और धारा 472 की ओर ध्यान दिलाते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि निरंतर अपराध किए जाने की उपधारणा वास्तिवक दोषी को छोड़ती नहीं है बल्कि दिन-प्रतिदिन उल्लंघन होना चाहिए । जब ऐसे उपबंध जिनके बारे में अभियोजन को शासित करने वाले परिसीमा के नियमों में अधिकथित किया गया है तब न्यायालयों को ऐसे प्रकृति के मामलों पर संहिता की धारा 473 के उपबंधों को विचार में लेकर

महत्व देना चाहिए जो अभिभावी उपबंध की प्रकृति में हैं और जिसके अनुसार दंड प्रक्रिया संहिता के अध्याय XXXVI के उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी को न्यायालय परिसीमा की अवधि की समाप्ति के पश्चात् भी अपराध का संज्ञान ले सकता है यदि अन्य बातों के साथ-साथ उसका यह समाधान हो जाता है कि न्याय के हित में ऐसा करना आवश्यक है । उच्चतम न्यायालय ने अपीलों को मंजूर करके आक्षेपित आदेश अपास्त कर दिए थे ।

10. **बेगु राम** (उपरोक्त) कम्पनी अधिनियम की धारा 630 के अधीन एक मामला है, बेगुराम मै. जयपुर उद्योग, सवाई माधोपुर में एक कर्मचारी था, वह तारीख 7 अगस्त, 1978 को सेवानिवृत्त हो गया था परंतु उसने जब वह सेवा में था, अपने को कम्पनी का निःशुल्क आबंटित क्वार्टर खाली नहीं किया । याची के विरुद्ध आपराधिक परिवाद, कम्पनी अधिनियम की धारा 630(1)(ख) के अधीन फाइल किया गया था । मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, सवाई माधोपुर ने तारीख 11 सितंबर, 1986 को यह अभिनिर्धारित किया कि याची उक्त अपराध का दोषी है और उसे 200.00 रुपए जुर्माने के लिए दंडित किया गया तथा साथ ही यह निदेश दिया गया कि वह तीन मास के भीतर मै. जयपुर उद्योग लि. को क्वार्टर सौंप दे, याची द्वारा ऐसा न करने की दशा में उसे दो मास का साधारण कारावास भोगने के लिए दंडादिष्ट किया गया था । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि तारीख 1 सितंबर, 1978 को याची के क्वार्टर में अतिचारी के रूप में था । अतिचार निरंतर अपराध है और इसलिए, यह मामला दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 472 के अंतर्गत आता है ।

11. याचियों ने याचिका में मामले को योजनाबद्ध तरीके से पेश नहीं किया है कि उन्होंने तारीख 23 जनवरी, 2009 के पश्चात् किसी समय पर अभिकथित दीवार को हटा दिया था । इस प्रकार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 472 के अधीन निरंतर अपराध किया गया है, इन परिस्थितियों में तारीख 24 अगस्त, 2011 के आदेश में कोई दोष नहीं पाया जा सकता जिसपर विद्वान् मजिस्ट्रेट ने अपराध का संज्ञान लिया था । याचिका में कोई सार नहीं है ।

12. उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए याचिका विफल है । तद्नुसार 2011 की दांडिक प्रकीर्ण याचिका सं. 842 को खारिज किया जाता है जो मुख्य याचिका को निपटाए जाने को ध्यान में रखते हुए असफल हो गई है । पक्षकार अपने काउंसेलों के माध्यम से तारीख

5 अप्रैल, 2012 को विचारण न्यायालय के समक्ष हाजिर होने के लिए निदेशित किए जाते हैं । अभिलेख को तत्काल वापस भेजा जाता है जिससे कि विचारण न्यायालय में नियत की गई तारीख से पूर्व अभिलेख वहां पर पहुंच जाए ।

याचिका खारिज की गई ।

आर्य

(2012) 2 दा. नि. प. 116 **हिमाचल प्रदेश**

प्रदीप कुमार तुली

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तारीख 16 मार्च, 2012

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 482 – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का अभिखंडन – यदि एक ही घटना या उसी संव्यवहार के एक या अधिक भाग से संबंधित दो प्रथम इत्तिला रिपोर्टों में एक जैसे ही अभिकथन हों तो दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित किया जा सकता है ।

तथ्यों के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि उपायुक्त, सोलन द्वारा तारीख 5 अक्तूबर, 2006 के पत्र के माध्यम से पुलिस अधीक्षक, सोलन को एक शिकायत भेजी गई है कि मै. बेता बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड ने खसरा सं. 740/607/2 और खसरा सं. 742/607/2 में सम्मिलित 14 बिस्वा भूमि जो ग्राम कुंजाहल, तहसील नालागढ़ में स्थित है, को क्रय करने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया है । यह पाया गया था कि उक्त बिल्डरों ने पहले ही खसरा सं. 740/607/1, 741/607/1, 742/607/1, 507, 509 और 511 में 31-12 बीघा नाप की भूमि ग्राम कुंजाहल और झरमाजरी, तहसील नालागढ़ में हिमाचल प्रदेश सरकार से तारीख 12 अप्रैल, 2006 को कपटपूर्ण अनुज्ञा के आधार पर पहले ही भूमि का क्रय किया था । पूर्वोक्त भूमि को क्रय करने के लिए उपायुक्त कार्यालय के अभिलेख के अनुसार पूर्वोक्त बिल्डरों को सरकार द्वारा इस संबंध में कोई

ऐसी अनुज्ञा प्रदान नहीं की गई थी । इन परिस्थितियों में दंड संहिता की धारा 420, 467 और 468 के अधीन 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183 पुलिस थाना, बरोतिवाला पर रजिस्ट्रीकृत की गई थी । मै. बेता बिल्डर्स के निदेशक अनिल गर्ग ने यह अभिकथन किया है कि कंपनी ने ग्राम कुंजाहल और झरमाजरी में आवासीय कालोनी के निर्माण हेतु 31-12 नाप की भूमि क्रय करने के लिए करार किया था । कंपनी आर्केटेक्ट, कर्मचारिवृंद, लोगों से संपर्क करने वाले को सेवा देने के लिए भूमि के रजिस्ट्रेशन के लिए निकासी अनुज्ञा चाहने के लिए विधिक औपचारिकताएं पूरी की तथा गणेश अबरोल चार्टर्ड अकाउंटेंट के हाउसिंग कालोनी के निर्माण हेतु तथा मै. एस. एस. कोठारी जो चंडीगढ़ में कंपनी का कार्य चला रहे थे, की भागीदारी में और उन मामलों में आवश्यक अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए कंपनी के लिए औपचारिकताओं को पूरा कराने का आश्वासन दिया था । अनिल गर्ग ने यह भी अभिकथन किया है कि गणेश अबरोल पूर्वोक्त कार्य को कंपनी सचिव प्रदीप तुली के माध्यम से करवा रहा था । परियोजना के निष्पादन में विलंब से बचने के लिए कंपनी ने प्रत्यक्ष रूप से आवेदक से बातचीत की और भूमि को क्रय करने के लिए हिमाचल प्रदेश टेनेंसी और लैंड रिफोर्म एक्ट, 1972 की धारा 118 के अधीन अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए उसे दस्तावेज दिए । कंपनी ने सभी औपचारिकताएं पूरी की थीं । उपायुक्त कार्यालय, सोलन द्वारा तारीख 1 अप्रैल, 2006 के पत्र के माध्यम से यह सूचना दी गई कि धारा 118 के अधीन अनुज्ञा जारी करने के लिए आवश्यक औपचारिकताएं पूरी कर ली गई हैं । यह अभिकथन किया गया है कि आवेदक ने सरकार द्वारा प्रदान की गई अनुज्ञा के बारे में कंपनी को सूचित किया था । कंपनी ने 14 बिस्वा भूमि की अनुज्ञा प्राप्त करने का विनिश्चय किया था । कंपनी ने बाद में 14 बिस्वा भूमि के लिए धारा 118 के अधीन अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए भी आवेदन किया था । बाद में, यह पाया गया था कि आवेदक द्वारा तारीख 12 अप्रैल, 2006 को अधिनियम की धारा 118 के अधीन प्राप्त की गई अनुज्ञा कपटपूर्ण थी, इसलिए, इस पर तारीख 29 सितंबर, 2006 को 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177 दंड संहिता की धारा 420, 465, 467 और 471 के अधीन पुलिस थाना, बरोतिवाला पर रजिस्ट्रीकृत की गई । पुलिस ने अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् न्यायालय, नालागढ़ में तारीख 30 मार्च, 2010 को चालान फाइल किया । उपायुक्त, सोलन ने अधिनियम की धारा 118 के अधीन अभिकथित कपटपूर्ण अनुज्ञा के आधार पर खरीदी गई भूमि को अधिकार में लेने के लिए कार्यवाही प्रारंभ की गई । भारसाधक

अधिकारी, पुलिस थाना बरोतिवाला ने तारीख 8 अगस्त, 2010 को विद्वान् मजिस्ट्रेट के समक्ष तारीख 12 अक्तूबर, 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 की रिपोर्ट को रद्द करने के लिए निवेदन किया । आवेदक ने रद्दकरण रिपोर्ट के बारे में आपत्ति की । उपायुक्त, सोलन ने भी रद्दकरण रिपोर्ट पर आपत्ति की । न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी (II) नालागढ़ ने तारीख 19 अगस्त, 2011 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 की रद्दकरण रिपोर्ट को खारिज कर दिया और मामले को पुलिस को इन निदेशों के साथ वापस कर दिया कि विधि के अनुसरण में मामले में अन्वेषण करें । आवेदक ने तारीख 22 अक्तूबर, 2001 के आवेदन के माध्यम से विद्वान् मजिस्ट्रेट से यह अनुरोध किया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत मामला राज्य बनाम प्रदीप को तब तक के लिए आस्थगित किया जाए जब तक कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 में अन्वेषण किए जाने के परिणाम से कोई अंतिम निष्कर्ष न निकल जाए । विद्वान् मजिस्ट्रेट ने तारीख 19 अगस्त, 2011 के आदेश के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला कि पुलिस ने मामले का उचित रूप से अन्वेषण नहीं किया है और इसलिए इसकी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 में रद्दकरण रिपोर्ट को खारिज कर दिया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से अंतर्वलित घटना जिस पर आवेदक विचारण का सामना कर रहा है एक ही है और इसी तरह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 मै. बेता बिल्डर्स द्वारा राज्य सरकार से प्राप्त की गई अभिकथित कपटपूर्ण अनुज्ञा के बारे में है । यह निवेदन किया गया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 में तारीख 19 अगस्त, 2011 के आदेश को ध्यान में रखते हुए आवेदक का विचारण प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत मामला अप्रासंगिक हो गया है और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत दांडिक मामला अभिखंडित किए जाने योग्य है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 में आवेदक के विरुद्ध अभिकथन इस प्रकार है कि आवेदक ने अधिनियम की धारा 118 के अधीन कपटपूर्ण अनुज्ञा उपगत की है जिस पर आयुक्त, सोलन द्वारा मै. बेता बिल्डर्स के विरुद्ध अधिनियम की धारा 118 के अधीन झूठी अनुज्ञा लेने के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 दर्ज की है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत राज्य बनाम प्रदीप कुमार दांडिक मामले को अभिखंडित करने के लिए अनुरोध किया गया है और यह मामला विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी न्यायालय के नालागढ़ में लंबित है । यह रजिस्ट्रीकृत आवेदन पुलिस थाना बरोतिवाला में तारीख 29 सितंबर, 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177 से उद्भूत मामला विद्वान् न्यायिक

मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी नालागढ़ के न्यायालय में राज्य बनाम प्रदीप कुमार तुली, दांडिक विचारण को अभिखंडित करने के लिए फाइल किया गया है । उच्च न्यायालय द्वारा आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 उपायुक्त सोलन के पत्र के आधार पर दर्ज की गई । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 में यह अभिकथन किया गया कि कंपनी ने ग्राम कुंजाहल, तहसील नालागढ़ पर स्थित खसरा सं. 740/607/2 तथा 742/602/2 में सम्मिलित 14 बिस्वा भूमि क्रय करने के लिए तारीख 30 अगस्त, 2006 को आवेदन फाइल किया था । आवेदन प्राप्त करने पर यह पाया गया कि मै. बेता बिल्डर्स ने ग्राम कुंजाहल, झरमाजरी पर स्थित खसरा सं. 740/607/1, 741/607, 742/607, 507, 509 और 511, 31-12 बीघा नाप की भूमि पहले ही क्रय की, जो तारीख 12 अप्रैल, 2006 के हिमाचल प्रदेश सरकार के पत्र जालसाजी के आधार पर अनुज्ञा ली गई थी । उपायुक्त, सोलन के कार्यालय के अभिलेख के अनुसार सरकार द्वारा मै. बेता बिल्डर्स के पक्ष में उपरोक्त भूमि क्रय करने के लिए ऐसी कोई अनुज्ञा जारी नहीं की गई थी । मामले के रजिस्ट्रेशन के लिए अनुरोध किया गया था और इस पर मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया था । बाबूभाई वाले मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जिसका मामला सी. आर. सं. 1-154/2008 है बावला पुलिस थाने में तारीख 8 जुलाई, 2008 को 5.30 बजे अपराह्न दर्ज की गई थी । एक दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जिसका मामला सी. आर. सं. 1-155/2008 है तारीख 8 जुलाई, 2008 को 10.35 बजे अपराह्न पुलिस थाना बावला पर दर्ज की गई थी । उच्च न्यायालय ने तारीख 22 दिसंबर, 2009 को निर्णय और अंतिम आदेश पारित करके प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जो सी. आर. सं. 1-155/2008 के रूप में दर्ज की गई थी उसे अभिखंडित कर दिया तथा एक दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सी. आर. सं. 1-154/2008 के साथ अगले निदेश जारी होने की संभावना तक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के अन्वेषण को जोड़ दिया गया । उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि पूर्णतया यह संभव है कि एक ही घटना के बारे में पुलिस थाने के भारसाधक पुलिस अधिकारी को सूचना के एक अंश बताए जाने से अधिक उसमें एक संज्ञेय अपराध से अधिक अपराध हो सकते हैं । ऐसे मामले में, उसके द्वारा डायरी में सूचना के अलग-अलग अंशों की प्रविष्टि करना जरूरी नहीं है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में उल्लिखित तथ्यों में अन्वेषण प्रारंभ किए जाने के पश्चात् मौखिक या लिखित में सभी अन्य सूचनाएं दी जानी

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अधीन कथन माने जाएंगे । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि न्यायालय को दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्टों से उद्भूत वर्णित परिस्थितियों और तथ्यों की परीक्षा करनी चाहिए तथा समानता की परीक्षा यह निष्कर्ष निकाले जाने के लिए लागू करनी चाहिए कि क्या दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्ट एक ही घटना से संबंधित या घटनाओं से संबंधित हैं जो एक ही संव्यवहार के दो या अधिक भाग हो सकते हैं । यदि इस बात का सकारात्मक उत्तर मिलता है तब द्वितीय प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित किया जाना चाहिए । तथापि, ऐसी दशा में प्रतिकूल रूप से यह साबित किया गया हो जहां पर द्वितीय प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का वृत्तांत भिन्न है और वे भिन्न-भिन्न घटनाओं/अपराधों के बारे में है तब द्वितीय प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अनुज्ञेय है । उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए आवेदन में संविवाद बहुत सीमित है । आवेदक ने विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, नालागढ़ के समक्ष राज्य बनाम प्रदीप कुमार के मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और दांडिक मामले को अभिखंडित करने का अनुरोध किया है । आवेदक का मामला तारीख 29 सितंबर, 2006 के प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत हुआ है जो तारीख 12 अक्तूबर, 2006 के प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 की तुलना में समय पूर्व है । इन परिस्थितियों में, यदि यह धारणा की गई है कि दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्टों में एक समान अभिकथन किए गए हैं तो भी बाबू भाई वाले मामले को भी ध्यान में रखते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत दांडिक मामले को अभिखंडित नहीं किया जा सकता । इस आवेदन का केवल इस आधार पर निपटारा किया गया है । न्यायालय द्वारा इस प्रश्न पर विचार नहीं किया गया है कि दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्टों में एक समान अभिकथन हैं । इस प्रश्न को स्वतंत्र छोड़ा जाता है । (पैरा 12, 13, 14 और 15)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2010]	(2010) 12 एस. सी. सी. 254 : **बाबूभाई** बनाम **गुजरात राज्य और अन्य** ।	8

प्रकीर्ण (दांडिक) अधिकारिता : 2011 का दांडिक एमएमओ सं. 231.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 482 के अधीन आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री ललित कुमार शर्मा, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री रूमा कौशिक, अपर महाधिवक्ता और श्री जे. एस. राना, सहायक महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह – यह रजिस्ट्रीकृत आवेदन पुलिस थाना बरोतिवाला में तारीख 29 सितंबर, 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177 से उद्भूत मामला विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी नालागढ़ के न्यायालय में राज्य बनाम प्रदीप कुमार तुली, दांडिक विचारण को अभिखंडित करने के लिए फाइल किया गया है ।

2. तथ्यों के बारे में यह अभिकथन किया गया है कि उपायुक्त, सोलन द्वारा तारीख 5 अक्तूबर, 2006 के पत्र के माध्यम से पुलिस अधीक्षक, सोलन को एक शिकायत भेजी गई है कि मै. बेता बिल्डर्स प्राइवेट लिमिटेड ने खसरा सं. 740/607/2 और खसरा सं. 742/607/2 में सम्मिलित 14 बिस्वा भूमि जो ग्राम कुंजाहल, तहसील नालागढ़ में स्थित है, को क्रय करने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया है । यह पाया गया था कि उक्त बिल्डरों ने पहले ही खसरा सं. 740/607/1, 741/607/1, 742/607/1, 507, 509 और 511 में 31-12 बीघा नाप की भूमि ग्राम कुंजाहल और झरमाजरी, तहसील नालागढ़ में हिमाचल प्रदेश सरकार से तारीख 12 अप्रैल, 2006 को कपटपूर्ण अनुज्ञा के आधार पर पहले ही भूमि का क्रय किया था । पूर्वोक्त भूमि को क्रय करने के लिए उपायुक्त कार्यालय के अभिलेख के अनुसार पूर्वोक्त बिल्डरों को सरकार द्वारा इस संबंध में कोई ऐसी अनुज्ञा प्रदान नहीं की गई थी । इन परिस्थितियों में दंड संहिता की धारा 420, 467 और 468 के अधीन 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183 पुलिस थाना, बरोतिवाला पर रजिस्ट्रीकृत की गई थी ।

3. मै. बेता बिल्डर्स के निदेशक अनिल गर्ग ने यह अभिकथन किया है कि कंपनी ने ग्राम कुंजाहल और झरमाजरी में आवासीय कालोनी के निर्माण हेतु 31-12 नाप की भूमि क्रय करने के लिए करार किया था । कंपनी आर्केटेक्ट, कर्मचारिवृंद, लोगों से संपर्क करने वाले को सेवा देने के लिए भूमि के रजिस्ट्रेशन के लिए निकासी अनुज्ञा चाहने के लिए विधिक औपचारिकताएं पूरी कीं तथा गणेश अबरोल चार्टर्ड अकाउंटेंट के हाउसिंग कालोनी के निर्माण हेतु तथा मै. एस. एस. कोठारी जो चंडीगढ़ में कंपनी का कार्य चला रहे थे, की भागीदारी में और उन मामलों में आवश्यक

अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए कंपनी के लिए औपचारिकताओं को पूरा कराने का आश्वासन दिया था । अनिल गर्ग ने यह भी अभिकथन किया है कि गणेश अबरोल पूर्वोक्त कार्य को कंपनी सचिव प्रदीप तुली के माध्यम से करवा रहा था ।

4. परियोजना के निष्पादन में विलंब से बचने के लिए कंपनी ने प्रत्यक्ष रूप से आवेदक से बातचीत की और भूमि को क्रय करने के लिए हिमाचल प्रदेश टेनेंसी और लैंड रिफोर्म एक्ट, 1972 (संक्षेप में जिसे 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 118 के अधीन अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए उसे दस्तावेज दिए । कंपनी ने सभी औपचारिकताएं पूरी की थीं । उपायुक्त कार्यालय, सोलन द्वारा तारीख 1 अप्रैल, 2006 के पत्र के माध्यम से यह सूचना दी गई कि धारा 118 के अधीन अनुज्ञा जारी करने के लिए आवश्यक औपचारिकताएं पूरी कर ली गई हैं । यह अभिकथन किया गया है कि आवेदक ने सरकार द्वारा प्रदान की गई अनुज्ञा के बारे में कंपनी को सूचित किया था । कंपनी ने 14 बिस्वा भूमि की अनुज्ञा प्राप्त करने का विनिश्चय किया था । कंपनी ने बाद में 14 बिस्वा भूमि के लिए धारा 118 के अधीन अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए भी आवेदन किया था । बाद में, यह पाया गया था कि आवेदक द्वारा तारीख 12 अप्रैल, 2006 को अधिनियम की धारा 118 के अधीन प्राप्त की गई अनुज्ञा कपटपूर्ण थी, इसलिए, इस पर तारीख 29 सितंबर, 2006 को 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177 दंड संहिता की धारा 420, 465, 467 और 471 के अधीन पुलिस थाना, बरोतिवाला पर रजिस्ट्रीकृत की गई । पुलिस ने अन्वेषण पूरा करने के पश्चात् न्यायालय, नालागढ़ में तारीख 30 मार्च, 2010 को चालान फाइल किया ।

5. उपायुक्त, सोलन ने अधिनियम की धारा 118 के अधीन अभिकथित कपटपूर्ण अनुज्ञा के आधार पर खरीदी गई भूमि को अधिकार में लेने के लिए कार्यवाही प्रारंभ की गई । भारसाधक अधिकारी, पुलिस थाना बरोतिवाला ने तारीख 8 अगस्त, 2010 को विद्वान् मजिस्ट्रेट के समक्ष तारीख 12 अक्तूबर, 2006 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 की रिपोर्ट को रद्द करने के लिए निवेदन किया । आवेदक ने रद्दकरण रिपोर्ट के बारे में आपत्ति की । उपायुक्त, सोलन ने भी रद्दकरण रिपोर्ट पर आपत्ति की । न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी (II) नालागढ़ ने तारीख 19 अगस्त, 2011 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 की रद्दकरण रिपोर्ट को खारिज कर दिया और मामले को पुलिस को इन निदेशों के साथ वापस कर दिया कि

विधि के अनुसरण में मामले में अन्वेषण करें । आवेदक ने तारीख 22 अक्तूबर, 2001 के आवेदन के माध्यम से विद्वान् मजिस्ट्रेट से यह अनुरोध किया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत मामला राज्य बनाम प्रदीप को तब तक के लिए आस्थगित किया जाए जब तक कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 में अन्वेषण किए जाने के परिणाम से कोई अंतिम निष्कर्ष न निकल जाए ।

6. विद्वान् मजिस्ट्रेट ने तारीख 19 अगस्त, 2011 के आदेश के माध्यम से यह निष्कर्ष निकाला कि पुलिस ने मामले का उचित रूप से अन्वेषण नहीं किया है और इसलिए इसकी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 में रद्दकरण रिपोर्ट को खारिज कर दिया । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/ 2006 से अंतर्वलित घटना जिस पर आवेदक विचारण का सामना कर रहा है एक ही है और इसी तरह प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 मै. बेता बिल्डर्स द्वारा राज्य सरकार से प्राप्त की गई अभिकथित कपटपूर्ण अनुज्ञा के बारे में है । यह निवेदन किया गया कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/ 2006 में तारीख 19 अगस्त, 2011 के आदेश को ध्यान में रखते हुए आवेदक का विचारण प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत मामला अप्रासंगिक हो गया है और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत दांडिक मामला अभिखंडित किए जाने योग्य है ।

7. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 में आवेदक के विरुद्ध अभिकथन इस प्रकार है कि आवेदक ने अधिनियम की धारा 118 के अधीन कपटपूर्ण अनुज्ञा उपगत की है जिस पर आयुक्त, सोलन द्वारा मै. बेता बिल्डर्स के विरुद्ध अधिनियम की धारा 118 के अधीन झूठी अनुज्ञा लेने के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 दर्ज की है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत राज्य बनाम प्रदीप कुमार दांडिक मामले को अभिखंडित करने के लिए अनुरोध किया गया है और यह मामला विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी न्यायालय के नालागढ़ में लंबित है ।

8. पक्षकारों को सुना गया । आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 दोनों पुलिस थाना, बरोतिवाला में रजिस्ट्रीकृत की गई थी और मै. बेता बिल्डर्स द्वारा भूमि को क्रय करने के लिए अधिनियम की धारा 118 के अधीन प्रश्नगत अनुज्ञा में सामान्य अभिकथन दर्ज किए गए हैं । विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी (II), नालागढ़ द्वारा तारीख 19 अगस्त, 2011 को पुलिस को यह निदेश देते हुए कि अग्रिम अन्वेषण

किया जाए, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 की रद्दकरण रिपोर्ट को खारिज कर दिया गया था । इन परिस्थितियों में, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं 177/2006 और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं 177/ 2006 से उद्भूत दांडिक मामला खारिज किए जाने योग्य है । आवेदक के विद्वान् काउंसेल ने अपनी दलीलों के समर्थन में **बाबूभाई** बनाम **गुजरात राज्य और अन्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया है । विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने आवेदन का विरोध किया और यह दलील दी कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 स्वतंत्र और अलग-अलग हैं और इसलिए, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 में से उद्भूत दांडिक मामले के साथ प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 को अभिखंडित नहीं किया जा सकता, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 समय पूर्व की गई है ।

9. आवेदक ने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 तारीख 29 सितंबर, 2006 तथा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 तारीख 12 अक्तूबर, 2006 की प्रतियां अभिलेख पर रखी हैं । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 अनिल कुमार गर्ग की लिखित शिकायत पर दर्ज की गई । अनिल कुमार गर्ग ने यह भी अभिकथन किया है कि मै. बेता बिल्डर्स ने ग्राम कुंजाहल और झरमाजरी, तहसील नालागढ़ पर स्थित 31-12 बीघा नाप की भूमि खरीदने के लिए करार किया था । कंपनी ने आर्केटेक्ट, कर्मचारिवृंद, लोगों से संपर्क करने वाले को भूमि के रजिस्ट्रीकरण के लिए निकासी अनुज्ञा प्राप्त करने तथा हाउसिंग कालोनी के निर्माण की विधिक औपचारिकताएं पूरी करने तथा अपेक्षित ब्यौरे तैयार करने के काम के लिए लगाया गया था । कंपनी ने श्री दिनेश अबरोल चार्टर्ड अकाउंटेंट को काम पर लगाया था । कंपनी को यह पता चला कि श्री दिनेश अबरोल आवेदक प्रदीप तुली के माध्यम से कार्य कर रहा था । दिनेश अबरोल की सेवाएं 3-4 मास तक ली गई थीं, बाद में कंपनी ने कार्य के लिए संपर्क करने हेतु प्रदीप तुली और अश्वनी कौशिक नामक व्यक्ति की प्रत्यक्ष रूप से सेवाएं ली थीं । उन्हें उनकी फीस और कार्य पर उपगत वास्तविक खर्चों की प्रतिपूर्ति की गई थी ।

10. यह अभिकथन किया गया कि कंपनी ने अधिनियम की धारा 118 के अधीन अनुज्ञा प्राप्त करने के लिए प्रदीप तुली और अश्वनी कौशिक को दस्तावेज भी दिए थे । सोलन के उपायुक्त कार्यालय द्वारा हिमाचल

---

[1] (2010) 12 एस. सी. सी. 254.

प्रदेश सरकार के राजस्व सचिव को तारीख 1 अप्रैल, 2006 को लिखित पत्र भेजा गया था कि धारा 118 के अधीन अनुज्ञा जारी करवाने के लिए सभी आवश्यक औपचारिकताएं पूरी कर ली गई हैं । इसलिए, सरकारी नीति के अनुसार कंपनी को अनुज्ञा दी जा सकती है । इसके पश्चात्, प्रदीप तुली ने कंपनी को यह बताया कि धारा 118 के अधीन अनुज्ञा प्राप्त कर ली गई है और भूमि का रजिस्ट्रेशन किया जा सकता है । प्रदीप तुली ने अनिल कुमार गर्ग को उक्त अनुज्ञा परिदत्त की । कंपनी के निदेशक के रूप में प्रदीप तुली को पूरे समय के लिए समय-समय पर फीस तथा वास्तविक खर्चों की प्रतिपूर्ति के संबंध में संदाय किए जाने के अतिरिक्त 11,000/- रुपए का भी संदाय किया गया था । कंपनी ने नालागढ़ पर तारीख 18 अप्रैल, 2006 को भूमि का रजिस्ट्रेशन प्राप्त किया था ।

11. कंपनी ने पूर्व की भूमि के भाग के समीप 14 बिस्वा भूमि क्रय करने के लिए करार किया था । यह अभिकथन किया गया है कि कुछ महीने बीत जाने के पश्चात् (14 बिस्वा भूमि) अनुज्ञा में होने वाली प्रगति संतोषजनक नहीं थी । कंपनी ने शिमला के कार्यालय में जाकर 14 बिस्वा भूमि के लिए अधिनियम की धारा 118 के अधीन अनुज्ञा प्राप्त करने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया । उपायुक्त कार्यालय, सोलन ने धारा 118 को लागू करने के लिए निकासी चाहने हेतु संपर्क भी किया था । कंपनी को यह जानकर आघात लगा कि प्रदीप तुली आवेदक द्वारा तारीख 12 अप्रैल, 2006 को धारा 118 के अधीन अनुज्ञा जो दी गई थी कपटपूर्ण ली गई थी । कंपनी के लोग उपायुक्त कार्यालय, सोलन तथा शिमला पर राजस्व कार्यालय के अधिकारियों से मिले और अपनी स्थिति के बारे में स्पष्टीकरण दिया । यह अभिकथन किया गया है कि कंपनी के निदेशक और अधिकारी इस कपटपूर्ण कार्य में शामिल नहीं थे और यह जालसाजी आवेदक प्रदीप तुली तथा उसके सहबद्ध लोगों द्वारा की गई थी । इस पर प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 दर्ज की गई थी ।

12. प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 उपायुक्त सोलन के पत्र के आधार पर दर्ज की गई । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 में यह अभिकथन किया गया कि कंपनी ने ग्राम कुंजाहल तहसील नालागढ़ पर स्थित खसरा सं. 740/607/2 तथा 742/602/2 में सम्मिलित 14 बिस्वा भूमि क्रय करने के लिए तारीख 30 अगस्त, 2006 को आवेदन फाइल किया था । आवेदन प्राप्त करने पर यह पाया गया कि मै. बेता बिल्डर्स ने ग्राम कुंजाहल, झरमाजरी पर स्थित खसरा सं. 740/607/1, 741/607,

742/607, 507, 509 और 511, 31-12 बीघा नाप की भूमि पहले ही क्रय की, जो तारीख 12 अप्रैल, 2006 के हिमाचल प्रदेश सरकार के पत्र जालसाजी के आधार पर अनुज्ञा ली गई थी । उपायुक्त, सोलन के कार्यालय के अभिलेख के अनुसार सरकार द्वारा मै. बेता बिल्डर्स के पक्ष में उपरोक्त भूमि क्रय करने के लिए ऐसी कोई अनुज्ञा जारी नहीं की गई थी । मामले के रजिस्ट्रेशन के लिए अनुरोध किया गया था और इस पर मामला रजिस्ट्रीकृत किया गया था ।

13. बाबूभाई (उपरोक्त) वाले मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जिसका मामला सी. आर. सं. 1-154/2008 है बावला पुलिस थाने में तारीख 8 जुलाई, 2008 को 5.30 बजे अपराह्न दर्ज की गई थी । एक दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जिसका मामला सी. आर. सं. 1-155/2008 है तारीख 8 जुलाई, 2008 को 10.35 बजे अपराह्न पुलिस थाना बावला पर दर्ज की गई थी । उच्च न्यायालय ने तारीख 22 दिसंबर, 2009 को निर्णय और अंतिम आदेश पारित करके प्रथम इत्तिला रिपोर्ट जो सी. आर. सं. 1-155/2008 के रूप में दर्ज की गई थी उसे अभिखंडित कर दिया तथा एक दूसरी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सी. आर. सं. 1-154/2008 के साथ अगले निदेश जारी होने की संभावना तक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट के अन्वेषण को जोड़ दिया गया ।

14. उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि पूर्णतया यह संभव है कि एक ही घटना के बारे में पुलिस थाने के भारसाधक पुलिस अधिकारी को सूचना के एक अंश बताए जाने से अधिक उसमें एक संज्ञेय अपराध से अधिक अपराध हो सकते हैं । ऐसे मामले में, उसके द्वारा डायरी में सूचना के अलग-अलग अंशों की प्रविष्टि करना जरूरी नहीं है । प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में उल्लिखित तथ्यों में अन्वेषण प्रारंभ किए जाने के पश्चात् मौखिक या लिखित में सभी अन्य सूचनाएं दी जानी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 162 के अधीन कथन माने जाएंगे । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि न्यायालय को दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्टों से उद्भूत वर्णित परिस्थितियों और तथ्यों की परीक्षा करनी चाहिए तथा समानता की परीक्षा यह निष्कर्ष निकाले जाने के लिए लागू करनी चाहिए कि क्या दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्ट एक ही घटना से संबंधित या घटनाओं से संबंधित हैं जो एक ही संव्यवहार के दो या अधिक भाग हो सकते हैं । यदि इस बात का सकारात्मक उत्तर मिलता है तब द्वितीय प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को अभिखंडित किया जाना चाहिए । तथापि, ऐसी दशा में प्रतिकूल रूप से यह साबित

किया गया हो जहां पर द्वितीय प्रथम इत्तिला रिपोर्ट का वृत्तांत भिन्न है और वे भिन्न-भिन्न घटनाओं/अपराधों के बारे में है तब द्वितीय प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अनुज्ञेय है ।

15. उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए आवेदन में संविवाद बहुत सीमित है । आवेदक ने विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, नालागढ़ के समक्ष राज्य बनाम प्रदीप कुमार के मामले में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट और दांडिक मामले को अभिखंडित करने का अनुरोध किया है । आवेदक का मामला तारीख 29 सितंबर, 2006 के प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत हुआ है जो तारीख 12 अक्तूबर, 2006 के प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 183/2006 की तुलना में समय पूर्व है । इन परिस्थितियों में, यदि यह धारणा की गई है कि दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्टों में एक समान अभिकथन किए गए हैं तो भी **बाबू भाई** (उपरोक्त) वाले मामले को भी ध्यान में रखते हुए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 और प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 177/2006 से उद्भूत दांडिक मामले को अभिखंडित नहीं किया जा सकता । इस आवेदन का केवल इस आधार पर निपटारा किया गया है । न्यायालय द्वारा इस प्रश्न पर विचार नहीं किया गया है कि दोनों प्रथम इत्तिला रिपोर्टों में एक समान अभिकथन हैं । इस प्रश्न को स्वतंत्र छोड़ा जाता है ।

16. उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए आवेदन में कोई गुणागुण नहीं है, जिसे खारिज किया जाता है । 2011 का दांडिक प्रकीर्ण आवेदन सं. 917 मुख्य आवेदन के निपटाने को ध्यान में रखते हुए असफल हो गया है ।

आवेदन खारिज किया गया ।

आर्य

रामचन्द

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य, खाद्य निरीक्षक की मार्फत

तारीख 28 मार्च, 2012

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह

खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 (1954 का 37) – धारा 16(1)(क)(i), धारा 7(i) और धारा 2(iक)(ड) – मिलावटी दूध का नमूना लिया जाना – मामले के अभिलेख से यह साबित होता है कि खाद्य निरीक्षक द्वारा मिलावटी दूध का नमूना हिलाकर और एक रूप बनाने के पश्चात् लिया गया था तथा यदि नमूने में ली गई खाद्य वस्तु अपमिश्रित पाई जाती है तब अभियुक्त को उक्त धाराओं के अपराध का दोषी ठहराया जाना उचित है ।

मामले के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार है कि एस. एन. शर्मा (अभि. सा. 2) खाद्य निरीक्षक ने तारीख 26 जुलाई, 1995 को लगभग 8.45 बजे पूर्वाह्न आवेदक से तहकीकात की । आवेदक ने अपना नाम और पता हरबंश सिंह पुत्र दयाल सिंह ग्राम और डाकखाना, नानकपुर, तहसील कालका बताया था, बाद में यह पाया गया कि आवेदक का सही नाम और पता रामचंद पुत्र राम कृष्ण, डेयरी मालिक, बुरावल्ला, डाकखाना बरोतिवाला, तहसील कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश है । अभि. सा. 2 ने साक्ष्य के रूप में रविन्द्र नामक व्यक्ति को सहबद्ध किया है और प्ररूप VI में प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख नोटिस आवेदक को इस बाबत भेजा गया था कि मिश्रित दूध का नमूना लेने के बारे में अपने आशय को प्रकट करें जो लगभग 40 किलोग्राम ड्रम के रूप में याची के कब्जे में था जिसे बेचने के लिए रखा गया था । दूध की अंतर्वस्तु में समुचित रूप से मात्रा का मिश्रण पाया गया था । अभि. सा. 2 ने नमूने के विश्लेषण के लिए 5.00 रुपए का संदाय करके 750 मि. ली. मिश्रित दूध क्रय किया था । आवेदक ने सम्यक् रूप से रसीद प्रदर्श पी-2 के अनुसार उस बात को स्वीकार किया है । इस तरह खरीदा गया दूध तीन साफ, स्वच्छ और सूखे बोतलों में रखा गया जिसमें प्रत्येक बोतल में दूध सुरक्षित रखने के लिए फोर्मालीन की बूंदें डाली गई थीं, बोतलों पर विहित किए गए लेबल भी लगाए गए थे जिन्हें

मोटे कागज में लपेटा गया था तथा हस्ताक्षरित पेपर सील और स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी, सोलन के कोड/क्रमांक सं. एसएलएन/एस/101/95 प्रत्येक बोतल पर लगाया गया था । आवेदक के हस्ताक्षर इन बोतलों पर लिए गए थे और बोतलों को मजबूत धागे से भी बांध दिया गया था और उन्हें मोहरबंद कर दिया गया था । 'पंचनामा' प्रदर्श पी-4 तैयार किया गया था जिस पर आवेदक और साक्षी के हस्ताक्षर कराए गए थे । प्ररूप VII के साथ नमूना मोहरबंद पैकेट में लोक विश्लेषक, कंडाघाट को भेजा गया था । नमूना मोहर छाप के साथ प्ररूप VII की प्रति मोहरबंद लिफाफे में अलग लोक विश्लेषक को भेजी गई थी । शेष प्ररूप VII की दो प्रतियों के साथ नमूने के दो भाग तथा नमूना मोहर छाप मोहरबंद पैकेट में स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी, सोलन के पास जमा की गई थी । लोक विश्लेषक, कंडाघाट की रिपोर्ट स्थानीय स्वास्थ्य अधिकारी, सोलन के माध्यम से प्राप्त की गई थी और नमूने में मिलावट पाई गई क्योंकि नमूने की अंतर्वस्तु में न्यूनतम विहित किए गए मानक 4.5% के विरुद्ध दूध में चर्बी 0.4% पाई गई थी और न्यूनतम विहित किए गए मानक 8.5% के विरुद्ध 4.08% बिना चर्बी के ठोस दूध पाया गया था । शिकायतकर्ता ने आवेदक के विरुद्ध अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी हेतु मुख्य चिकित्सा अधिकारी, सोलन को आवेदन प्रस्तुत किया । मुख्य चिकित्सा अधिकारी द्वारा अभियोजन चलाने की मंजूरी दे दी गई । इसके पश्चात् अभि. सा. 2 ने यह अभिकथन करते हुए शिकायत प्रस्तुत की कि आवेदक ने खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 की धारा 16(1)(क)(i), धारा 7(i) के साथ पठित धारा 2(iक)(ड) के अधीन दंडनीय अपराध किया है । स्थानीय स्वास्थ्य अधिकारी, सोलन ने अधिनियम की धारा 13(2) सपठित नियम 9(क) के अधीन अग्रिम कार्यवाही करने के लिए मामले को संस्थित करने के बारे में अलग से सूचना दी । आवेदक को समन किया गया था । अभियोजन के बारे में नोटिस आवेदक को दिया गया था । उसने दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । अभियोजन पक्ष द्वारा तीन साक्षियों की परीक्षा की गई और आवेदक का कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किया गया था और आवेदक ने अपनी प्रतिरक्षा में प्रतिरक्षा साक्षी 1 हरबंश लाल मेहता की परीक्षा कराई । न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 28 मार्च, 2005 को विचारण से निष्कर्ष निकालकर आवेदक को अधिनियम की धारा 16(1)(क)(i), धारा 7(i) के साथ पठित धारा 2(iक)(ड) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध कर दिया तथा उसे छह माह का कठोर कारावास भोगने और व्यतिक्रम खंड

के साथ 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने तारीख 14 दिसंबर, 2005 को तारीख 28 मार्च, 2005 के निर्णय की अभिपुष्टि की, इसलिए, यह पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया । पुनरीक्षण आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – पुनरीक्षण का क्षेत्र सीमित है । दो निचले न्यायालयों ने अभिलेख के साक्ष्य का मूल्यांकन किया है । उसमें अधिनियम और नियम का कोई अतिक्रमण नहीं हुआ है । आवेदक ने प्राधिकारियों में धूल झोंकने की कोशिश की है और मामले में भिन्न-भिन्न विवरण दिए हैं । परंतु अंततोगत्वा अभिलेख पर यह सिद्ध किया गया है कि आवेदक वह व्यक्ति है जिससे नमूना लिया गया था । खाद्य निरीक्षक का कथन अभियोजन पक्षकथन को साबित करने के लिए पर्याप्त है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए रविन्द्र की परीक्षा न करने पर अभियोजन पक्षकथन के विरुद्ध कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है । उन्होंने पुनरीक्षण आवेदन को खारिज करने का अनुरोध किया है । दूसरी ओर से प्रकट किए गए विरोधों का मूल्यांकन करते हुए यह आवश्यक है कि अभिलेख पर आए हुए साक्ष्य का उल्लेख करें । चतर सिंह उस सुसंगत समय पर स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी/सी. एम. ओ., सोलन में संबंधित सहायक था । उसने यह कथन किया है कि आवेदक के विरुद्ध परिवाद तारीख 5 फरवरी, 1996 को न्यायालय में फाइल किया गया था । खाद्य निरीक्षक से सूचना प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क प्राप्त करने पर अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख आवेदक को रजिस्ट्रीकृत लिफाफे में भेजा गया था, देखिए पोस्टल प्राप्ति प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ग । लिफाफे पर उसी पते का उल्लेख किया गया है जिस पर नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख दिया गया । रजिस्टर्ड पत्र स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी के कार्यालय पर वापस नहीं पहुंचा था । उसने मंजूरी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ङ साबित किया है । एस. एन. शर्मा ने यह कथन किया है कि आवेदक 40 किलोग्राम मिश्रित दूध ड्रम में लाया था और दूध को हिलाया गया था । उसने प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि ड्रम लगभग 4 फीट का था जो 8-9 इंच को छोड़कर पूरी तरह भरा हुआ था । दूध की मात्रा को हिलाया गया था जो लगभग 9 इंच था । 'पंचनामा' प्रदर्श पी-4 में यह कथन किया गया है कि दूध की मात्रा को समुचित रूप से हिलाया गया था और इसके पश्चात् 750 मिलीलिटर दूध क्रय किया गया था । प्रदर्श पी-4 में आवेदक के हस्ताक्षर कराए गए थे जिस पर उसने हरबंश सिंह के

नाम से हस्ताक्षर किए गए । आवेदक ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अपने कथन में 'पंचनामा' की अंतर्वस्तु पर विवाद नहीं किया है । आवेदक ने यह प्रतिरक्षा ली है कि उससे कोई नमूना नहीं लिया गया था और उसका नाम रामचंद है न कि हरबंश सिंह । अभिलेख पर यह साबित हुआ है कि अभि. सा. 2 द्वारा दूध को हिलाने और एकरूप बनाने के पश्चात् नमूना लिया गया था । आवेदक के विद्वान् काउंसेल की दलील कि दूध को उचित रूप से हिलाकर नमूना नहीं लिया गया था, अस्वीकार कर दी गई । खाद्य निरीक्षक के कथन में कोई सहज त्रुटि नहीं है । अभियोजन पक्ष ने पंचसाक्षी रविन्द्र को समन तामील कराने के कई प्रयास किए किंतु उसे समन तामील नहीं किया जा सका । इन परिस्थितियों में, रविन्द्र की परीक्षा नहीं करने के लिए अभियोजन पक्ष के विरुद्ध कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है । निचले दो न्यायालयों ने अभिलेख पर साक्ष्य के आधार पर आवेदक के विरुद्ध तथ्य के निष्कर्ष को अभिलिखित किया है जो प्रतिकूल नहीं है । पुनरीक्षण के क्षेत्र का दायरा संकीर्ण है । अधिरोपित दंडादेश अत्यधिक दंड नहीं है । पुनरीक्षण आवेदन में कोई सार नहीं है । (पैरा 9, 10, 12 और 18)

अवलंबित निर्णय

		पैरा
[1992]	(1992) 3 एस. सी. सी. 100 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **हनीफ** ।	17

पुनरीक्षण (दांडिक) अधिकारिता : 2006 का दांडिक पुनरीक्षण आवेदन सं. 34.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 397/401 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदक की ओर से सर्व श्री रमाकांत शर्मा, अधिवक्ता और अभिषेक सूद, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री जे. एस. राना, सहायक महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह – यह पुनरीक्षण आवेदन 2005 की दांडिक अपील सं. 1-के/10 में विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, सोलन द्वारा तारीख 14 दिसंबर, 2005 को पारित किए गए निर्णय के विरुद्ध फाइल किया गया है जिसमें 02/96 का दांडिक मामला सं. 35/3 में विद्वान् न्यायिक

मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, कंडाघाट कैंप, सोलन द्वारा तारीख 29 मार्च, 2005 को पारित किए गए निर्णय की अभिपुष्टि की गई है ।

2. मामले के संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि एस. एन. शर्मा (अभि. सा. 2) खाद्य निरीक्षक ने तारीख 26 जुलाई, 1995 को लगभग 8.45 बजे पूर्वाह्न आवेदक से तहकीकात की । आवेदक ने अपना नाम और पता हरबंश सिंह पुत्र दयाल सिंह ग्राम और डाकखाना, नानकपुर, तहसील कालका बताया था, बाद में यह पाया गया कि आवेदक का सही नाम और पता राम चंद पुत्र राम कृष्ण, डेयरी मालिक, बुरावल्ला, डाकखाना बरोतिवाला, तहसील कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश है । अभि. सा. 2 ने साक्ष्य के रूप में रविन्द्र नामक व्यक्ति को सहबद्ध किया है और प्ररूप VI में प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख नोटिस आवेदक को इस बाबत भेजा गया था कि मिश्रित दूध का नमूना लेने के बारे में अपने आशय को प्रकट करें जो लगभग 40 किलोग्राम ड्रम के रूप में याची के कब्जे में था जिसे बेचने के लिए रखा गया था । दूध की अंतर्वस्तु में समुचित रूप से मात्रा का मिश्रण पाया गया था । अभि. सा. 2 ने नमूने के विश्लेषण के लिए 5.00 रुपए का संदाय करके 750 मि. ली. मिश्रित दूध क्रय किया था । आवेदक ने सम्यक् रूप से रसीद प्रदर्श पी-2 के अनुसार उस बात को स्वीकार किया है ।

3. इस तरह खरीदा गया दूध तीन साफ, स्वच्छ और सूखे बोतलों में रखा गया जिसमें प्रत्येक बोतल में दूध सुरक्षित रखने के लिए फोर्मालीन की बूंदें डाली गईं थीं, बोतलों पर विहित किए गए लेबल भी लगाए गए थे जिन्हें मोटे कागज में लपेटा गया था तथा हस्ताक्षरित पेपर सील और स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी, सोलन के कोड/क्रमांक सं. एसएलएन/एस/101/95 प्रत्येक बोतल पर लगाया गया था । आवेदक के हस्ताक्षर इन बोतलों पर लिए गए थे और बोतलों को मजबूत धागे से भी बांध दिया गया था और उन्हें मोहरबंद कर दिया गया था । 'पंचनामा' प्रदर्श पी-4 तैयार किया गया था जिस पर आवेदक और साक्षी के हस्ताक्षर कराए गए थे ।

4. प्ररूप VII के साथ नमूना मोहरबंद पैकेट में लोक विश्लेषक, कंडाघाट को भेजा गया था । नमूना मोहर छाप के साथ प्ररूप VII की प्रति मोहरबंद लिफाफे में अलग लोक विश्लेषक को भेजी गई थी । शेष प्ररूप VII की दो प्रतियों के साथ नमूने के दो भाग तथा नमूना मोहर छाप मोहरबंद पैकेट में स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी, सोलन के पास जमा की गई थी ।

5. लोक विश्लेषक, कंडाघाट की रिपोर्ट स्थानीय स्वास्थ्य अधिकारी, सोलन के माध्यम से प्राप्त की गई थी । और नमूने में मिलावट पाई गई क्योंकि नमूने की अंतर्वस्तु में न्यूनतम विहित किए गए मानक 4.5% के विरुद्ध दूध में चर्बी 0.4% पाई गई थी और न्यूनतम विहित किए गए मानक 8.5% के विरुद्ध 4.08% बिना चर्बी के ठोस दूध पाया गया था ।

6. शिकायतकर्ता ने आवेदक के विरुद्ध अभियोजन चलाने के लिए मंजूरी हेतु मुख्य चिकित्सा अधिकारी, सोलन को आवेदन प्रस्तुत किया । मुख्य चिकित्सा अधिकारी द्वारा मंजूरी दे दी गई । इसके पश्चात् अभि. सा. 2 ने यह अभिकथन करते हुए शिकायत प्रस्तुत की कि आवेदक ने खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 (जिसे संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 16(1)(क)(i), धारा 7(i) के साथ पठित धारा 2(iक)(ड) के अधीन दंडनीय अपराध किया है ।

7. स्थानीय स्वास्थ्य अधिकारी, सोलन ने अधिनियम की धारा 13(2) सपठित नियम 9(क) के अधीन अग्रिम कार्यवाही करने के लिए मामले को संस्थित करने के बारे में अलग से सूचना दी । आवेदक को समन किया गया था । अभियोजन के बारे में नोटिस आवेदक को दिया गया था । उसने दोषी नहीं होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । अभियोजन पक्ष द्वारा तीन साक्षियों की परीक्षा की गई और आवेदक का कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित किया गया था और आवेदक ने अपनी प्रतिरक्षा में प्रतिरक्षा साक्षी 1 हरबंश लाल मेहता की परीक्षा कराई । न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 28 मार्च, 2005 को विचारण से निष्कर्ष निकालकर आवेदक को अधिनियम की धारा 16(1)(क)(i), धारा 7(i) के साथ पठित धारा 2(iक)(ड) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध कर दिया तथा उसे छह माह का कठोर कारावास भोगने और व्यतिक्रम खंड के साथ 1,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने तारीख 14 दिसंबर, 2005 को तारीख 28 मार्च, 2005 के निर्णय की अभिपुष्टि की, इसलिए, यह पुनरीक्षण आवेदन फाइल किया गया ।

8. मेरे द्वारा आवेदक की ओर से हाजिर होने वाले श्री रमाकांत शर्मा, अधिवक्ता तथा राज्य की ओर से विद्वान् सहायक महाधिवक्ता को सुना गया और अभिलेख का भी परिशीलन किया गया । आवेदक के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि दूध का नमूना उचित रूप से नहीं लिया गया था क्योंकि दूध का नमूना लेने से पूर्व उसे न तो ठीक ढंग से

हिलाया गया और न उसे एकरूप दिया गया । अधिनियम की धारा 13(2) का अननुपालन हुआ है और इसके अध्यधीन नियम विरचित किए गए । यह दलील दी गई कि प्ररूप VI प्रदर्श पी-1 और 'पंचनामा' प्रदर्श पी-4 और उस व्यक्ति का नाम और पता जिससे नमूना लिया गया था, हरबंश सिंह पुत्र दयाल सिंह के नाम से दिखाया गया है जबकि आवेदक का नाम रामचंद है और पिता का नाम रामकृष्ण है । उस व्यक्ति के प्रदर्श पी-1 और प्रदर्श पी-4 में जो पता दिया गया है और जिससे नमूना लिया गया, अधिनियम की धारा 13(2) प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख के अधीन सूचना में दिए गए पते से भिन्न हैं । स्वतंत्र साक्षी रविन्द्र की शिकायतकर्ता को अवसर दिए जाने के बाद भी परीक्षा नहीं की गई और अंततः न्यायालय द्वारा उसके साक्ष्य को समाप्त कर दिया गया । यह निवेदन किया गया है कि अधिरोपित दंडादेश कठोर है । इसलिए, पुनरीक्षण आवेदन को स्वीकार करने के लिए निवेदन किया गया है ।

9. विद्वान् सहायक महाधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय का समर्थन किया है । उसने यह दलील दी है कि पुनरीक्षण का क्षेत्र सीमित है । दो निचले न्यायालयों ने अभिलेख के साक्ष्य का मूल्यांकन किया है । उसमें अधिनियम और नियम का कोई अतिक्रमण नहीं हुआ है । आवेदक ने प्राधिकारियों की आंखों में धूल झोंकने की कोशिश की है और मामले में भिन्न-भिन्न विवरण दिए हैं । परंतु अंततोगत्वा अभिलेख पर यह सिद्ध किया गया है कि आवेदक वह व्यक्ति है जिससे नमूना लिया गया था । खाद्य निरीक्षक का कथन अभियोजन पक्षकथन को साबित करने के लिए पर्याप्त है । मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए रविन्द्र की परीक्षा न करने पर अभियोजन पक्षकथन के विरुद्ध कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है । उन्होंने पुनरीक्षण आवेदन को खारिज करने का अनुरोध किया है ।

10. दूसरी ओर से प्रकट किए गए विरोधों का मूल्यांकन करते हुए यह आवश्यक है कि अभिलेख पर आए हुए साक्ष्य का उल्लेख करें । चतर सिंह (अभि. सा. 1) उस सुसंगत समय पर स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी/ सी. एम. ओ., सोलन में संबंधित सहायक था । उसने यह कथन किया है कि आवेदक के विरुद्ध परिवाद तारीख 5 फरवरी, 1996 को न्यायालय में फाइल किया गया था । खाद्य निरीक्षक से सूचना प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/क प्राप्त करने पर अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख आवेदक को रजिस्ट्रीकृत लिफाफे में भेजा गया था, देखिए

पोस्टल प्राप्ति प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ग । लिफाफे पर उसी पते का उल्लेख किया गया है जिसपर नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख दिया गया । रजिस्टर्ड पत्र स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी के कार्यालय पर वापस नहीं पहुंचा था । उसने मंजूरी प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ङ साबित किया है ।

11. एस. एन. शर्मा (अभि. सा. 2) ने यह कथन किया है कि तारीख 26 जुलाई, 1995 को लगभग 8.45 बजे पूर्वाह्न वह न्यायालय में उपस्थित हरबंश सिंह **उर्फ** रामचंद से मिला जो बेचने के लिए 40 किलोग्राम मिश्रित दूध ला रहा था जिसने अपनी पहचान प्रकट की । रविन्द्र सिंह साक्षी भी वहां पर मौजूद था । नोटिस प्रदर्श पी-1 आवेदक को दिया गया था और समुचित रूप से दूध को हिलाने के पश्चात् आवेदक से नमूने के प्रयोजन के लिए पांच रुपए देकर रसीद प्रदर्श पी-2 के माध्यम से दूध क्रय किया गया था और नमूने को अलग-अलग करके तीन सूखी बोतलों में दूध भरने के पश्चात् नमूने लिए गए और मोहरबंद किए गए । 'पंचनामा' पी-4 घटनास्थल पर तैयार किया गया था जिस पर आवेदक और साक्षी के हस्ताक्षर करवाए गए थे । नमूने के भाग को सी. टी. एल. विश्लेषण के लिए कंडाघाट भेजा गया । लोक विश्लेषक की रिपोर्ट पी-8 को स्थानीय स्वास्थ्य अधिकारी के पत्र पी-9 के माध्यम से प्राप्त किया गया था और नमूने में मिलावट पाई गई थी । मुख्य चिकित्सा अधिकारी, सोलन से मंजूरी प्राप्त की गई थी और इसके पश्चात्, न्यायालय में परिवाद फाइल किया गया था । उसकी विस्तृत रूप से प्रतिपरीक्षा की गई थी किंतु प्रतिपरीक्षा में आवेदक के पक्ष में कुछ भी प्रकट नहीं हुआ । प्रतिरक्षा साक्षी 1 हरबंश लाल मेहता की आवेदक द्वारा प्रतिरक्षा में परीक्षा करवाई गई थी । प्रतिरक्षा साक्षी 1 ने प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/क, प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/क और प्रदर्श डी. एक्स, प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 1/ग साबित किया ।

12. एस. एन. शर्मा (अभि. सा. 2) ने यह कथन किया है कि आवेदक 40 किलोग्राम मिश्रित दूध ड्रम में लाया था और दूध को हिलाया गया था । उसने प्रतिपरीक्षा में यह कथन किया है कि ड्रम लगभग 4 फीट का था जो 8-9 इंच को छोड़कर पूरी तरह भरा हुआ था । दूध की मात्रा को हिलाया गया था जो लगभग 9 इंच था । 'पंचनामा' प्रदर्श पी-4 में यह कथन किया गया है कि दूध की मात्रा को समुचित रूप से हिलाया गया था और इसके पश्चात् 750 मिलीलिटर दूध क्रय किया गया था । प्रदर्श पी-4 में आवेदक के हस्ताक्षर कराए गए थे जिस पर उसने हरबंश सिंह के नाम से हस्ताक्षर किए गए । आवेदक ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313

के अधीन अपने कथन में 'पंचनामा' की अंतर्वस्तु पर विवाद नहीं किया है । आवेदक ने यह प्रतिरक्षा ली है कि उससे कोई नमूना नहीं लिया गया था और उसका नाम रामचंद है न कि हरबंश सिंह । अभिलेख पर यह साबित हुआ है कि अभि. सा. 2 द्वारा दूध को हिलाने और एकरूप बनाने के पश्चात् नमूना लिया गया था । आवेदक के विद्वान् काउंसेल की दलील कि दूध को उचित रूप से हिलाकर नमूना नहीं लिया गया था, अस्वीकार कर दी गई ।

13. आवेदक की ओर से यह निवेदन किया गया है कि अधिनियम की धारा 13(2) का अननुपालन किया गया है । आवेदक का नाम और पता प्ररूप VI प्रदर्श पी-1, में 'पंचनामा' प्रदर्श पी-4 में नोटिस में प्रकट किए गए नाम अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख से भिन्न है । यह प्रकट हुआ है कि आवेदक ने प्रारंभ में अपूर्ण नाम और पता बताकर प्राधिकारियों की आंखों में धूल झोंकने की कोशिश की । आवेदक ने नमूने लेते समय अपना नाम हरबंश पुत्र दयाल सिंह, ग्राम डाकखाना नानकपुर, तहसील कालका, हरियाणा बताया था । परंतु बाद में प्राधिकारियों ने यह पाया कि उसका सही नाम और पता हरबंश सिंह **उर्फ** रामचंद पुत्र रामकृष्ण डेयरी मालिक, ग्राम बुरावला डाकखाना बरोतिवाला, जिला सोलन है और इसलिए धारा 13(2) के अधीन नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख नोटिस में उल्लिखित पते प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख पर आवेदक को भेजा गया था । तारीख 12 दिसंबर, 1997 को आवेदक के समक्ष अभियोजन चलाने का नोटिस रखा गया था और उस समय उसके अभिलिखित कथन में उसने अपना नाम हरबंश सिंह **उर्फ** रामचंद पुत्र रामकृष्ण डेयरी मालिक ग्राम बुरावला, डाकखाना बरोतिवाला, तहसील कसौली, जिला सोलन बताया था । आवेदक ने अभियोग चलाने के नोटिस पर रामचंद के नाम से अपना हस्ताक्षर किया था । आवेदक ने उस समय कोई विवाद नहीं किया कि उसका **उर्फ** नाम हरबंश सिंह नहीं है ।

14. चतर सिंह (अभि. सा. 1) ने यह कथन किया है कि नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख उस पते पर आवेदक को भेजा गया था जिस पते का नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख का उल्लेख किया गया है । यह नोटिस रजिस्ट्रीकृत डाक से भेजा गया था और रजिस्ट्रीकृत पत्र स्थानीय स्वास्थ्य प्राधिकारी कार्यालय पर परिदत्त न होने के कारण वापस नहीं लौटाया गया था । इसलिए, सुरक्षित रूप से यह उपधारणा की जा सकती है कि नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख पत्र पाने वाले को मिल गया था । विचारण

न्यायालय द्वारा तारीख 28 मार्च, 2005 को आवेदक को दोषसिद्ध किया गया था । आवेदक ने अपने काउंसेल के माध्यम से दंडादेश के निलंबन के लिए आवेदन फाइल किया जो विचारण न्यायालय की फाइल के पृष्ठ 77 पर है । विचारण न्यायालय ने यह निदेश देते हुए तारीख 28 मार्च, 2005 को आवेदक के मूल दंडादेश को निलंबित कर दिया कि 7 दिन के अंतर्गत जुर्माना जमा करे तथा 5,000/- रुपए का वैयक्तिक और प्रतिभूति बंधपत्र जमा करे । आवेदक ने तारीख 28 मार्च, 2005 को वैयक्तिक बंधपत्र पेश किया जो निचले न्यायालय के फाइल के पृष्ठ 78 पर है । वैयक्तिक बंधपत्र में आवेदक ने अपना नाम हरबंश सिंह पुत्र रामकृष्ण ग्राम बुरावला, डाकखाना बरोतिवाला, तहसील कसौली, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश वर्णित किया है । वैयक्तिक बंधपत्र पर आवेदक द्वारा रामचंद के नाम से हस्ताक्षर किया गया था । आवेदक द्वारा तारीख 28 मार्च, 2005 के वैयक्तिक बंधपत्र में दिए गए विवरण का नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ख में आवेदक द्वारा दिए गए विवरण तथा आवेदक द्वारा परिवाद में दिए गए विवरण से मिलान होता है । अभि. सा. 2 के अनुसार उसमें आवेदक का सही नाम और सही पता पाया गया था । यह सिद्ध हुआ है कि आवेदक से जब नमूना लिया गया था तब उसके द्वारा गलत विवरण देकर प्राधिकारियों को भ्रमित करना चाहा गया था । अभि. सा. 2 ने न्यायालय में आवेदक की शिनाख्त की थी । आवेदक का पक्षकथन यह नहीं है कि अभि. सा. 2 द्वारा आवेदक को नहीं जाना जाता था या मामले में गलत रूप से पहचान की गई है । अभि. सा. 2 की प्रतिपरीक्षा में आवेदक का पक्षकथन यह नहीं है कि उससे दूध का नमूना नहीं लिया गया था ।

15. आवेदक की शिनाख्त उस व्यक्ति से पूरी तरह संबंधित है जिससे तारीख 26 जुलाई, 1995 को अभि. सा. 2 द्वारा मिश्रित दूध का नमूना लिया गया था । अधिनियम की धारा 13(2) के अनुपालन को आवेदक द्वारा शिनाख्त किए जाने के आधार पर तथा अपने पते के बारे में चुनौती दी गई है । परंतु अभिलेख पर यह साबित किया गया है कि न केवल आवेदक की पहचान सिद्ध की गई । बल्कि अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन नोटिस आवेदक को भेजा गया था जो उसका सही पता था ।

16. अंत में यह दलील दी गई कि स्वतंत्र साक्षी रविन्द्र की परीक्षा नहीं की गई और इसलिए, प्रत्यर्थी के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाले जाने के बारे में दलील दी गई । तारीख 18 दिसंबर, 2003 को विचारण न्यायालय ने अभियोजन साक्ष्य समाप्त कर दिया । तारीख 18 दिसंबर,

2003 के आदेश में यह प्रकट हुआ है कि खाद्य निरीक्षक ने न्यायालय में यह कथन किया है कि सभी संभव प्रयास करने के बावजूद भी वह साक्षी का सही पता मालूम नहीं कर सका । साक्षी रविन्द्र का पता परिवाद में दिया गया है । उसे इस पते पर नोटिस तामिल नहीं हुआ था । विचारण न्यायालय के अभिलेख से यह प्रकट हुआ है कि साक्षी रविन्द्र को नोटिस तामिल करवाने के लिए कई प्रयास किए गए थे किंतु उसे नोटिस की तामिली नहीं की जा सकी और अंत में न्यायालय द्वारा अभियोजन का साक्ष्य समाप्त कर दिया गया । इन परिस्थितियों में, यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियोजन पक्ष ने सआशय पंचसाक्षी रविन्द्र की परीक्षा नहीं करवाई । खाद्य निरीक्षक (अभि. सा. 2) की परीक्षा की गई थी । उसने अभियोजन पक्षकथन का समर्थन किया है । खाद्य निरीक्षक के विरुद्ध कोई वैयक्तिक अभिकथन नहीं किए गए हैं । खाद्य निरीक्षक द्वारा लिए गए नमूने से इनकार नहीं किया गया है । क्या विक्रेता की शिनाख्त के बारे में उसने इनकार किया है । विश्वास करने का कोई ऐसा कारण नहीं है कि अभि. सा. 2 आवेदक को नहीं जानता । पहले ही ऊपर यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अभि. सा. 2 द्वारा आवेदक से दूध क्रय किया गया था ।

17. **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **हनीफ**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि विधि ऐसी नहीं है कि खाद्य निरीक्षक के साक्ष्य पर अपरिहार्य रूप से स्वतंत्र साक्षियों से सम्पुष्टि जरूरी होगी । खाद्य निरीक्षक का साक्ष्य स्वाभाविक रूप से संदेहास्पद नहीं है और न उस आधार पर उसे अस्वीकार किया जा सकता है । उसने भोजन की वस्तु को विश्लेषण के लिए क्रय करने के लिए लोक कृत्य का निर्वहन किया था । यदि भोजन की वस्तु को अधिनियम के अधीन विहित की गई रीति में क्रय किया गया है और उसमें मिलावट पाई जाती है तब उसके लिए यह अपेक्षित है कि वह विधि के अनुसार कार्यवाही करें । उसने लोक कर्तव्य का निर्वहन किया है । उसके साक्ष्य की गुणागुण पर परीक्षा की जानी चाहिए और यदि यह स्वीकार योग्य पाया जाता है तब न्यायालय अभियोजन पक्षकथन को स्वीकार करने का हकदार होगा तथा उसके साबित होने का अवलंब लेगा ।

18. खाद्य निरीक्षक के कथन में कोई सहज त्रुटि नहीं है । अभियोजन पक्ष ने पंचसाक्षी रविन्द्र को समन तामील कराने के कई प्रयास

---

[1] (1992) 3 एस. सी. सी. 100.

किए किंतु उसे समन तामील नहीं किया जा सका । इन परिस्थितियों में, रविन्द्र की परीक्षा नहीं करने के लिए अभियोजन पक्ष के विरुद्ध कोई प्रतिकूल निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है । निचले दो न्यायालयों ने अभिलेख पर साक्ष्य के आधार पर आवेदक के विरुद्ध तथ्य के निष्कर्ष को अभिलिखित किया है जो प्रतिकूल नहीं है । पुनरीक्षण के क्षेत्र का दायरा संकीर्ण है । अधिरोपित दंडादेश अत्यधिक दंड नहीं है । पुनरीक्षण आवेदन में कोई गुणागुण नहीं है ।

19. उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है । आवेदक के जमानत बंधपत्र रद्द किए जाते हैं । आवेदक को यह निर्देश दिया जाता है कि वह अधिरोपित दंडादेश भोगने हेतु अभ्यर्पण करें ।

पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया गया ।

आर्य

(2012) 2 दा. नि. प. 139 **हिमाचल प्रदेश**

मनोहर सिंह

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तारीख 2 मई, 2012

न्यायमूर्ति सुरिन्दर सिंह

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 409 [सपठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2)] – लोक सेवक द्वारा आपराधिक न्यासभंग – जहां साक्षियों के साक्ष्य और अभिलेख से यह साबित होता है कि अभियुक्त ने उसे सौंपी गई संपत्ति (सीमेंट की बोरियों) को हिसाब में नहीं लिया और दुर्विनियोजित करके स्वयं के लिए धनीय अभिलाभ अर्जित किया, वहां अभियुक्त को उक्त धाराओं के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाना उचित है ।

संक्षेप में अभियोजन का पक्षकथन इस प्रकार है । अपीलार्थी/

अभियुक्त मनोहर सिंह ने तारीख 14 जून, 1999 को अपर पुलिस महानिदेशक (प्रवर्तन), शिमला को एक शिकायत भेजी जिसमें यह अभिकथन किया गया कि वह मार्च, 1995 से मार्च 1996 के दौरान शिमला विकास प्राधिकरण/हिमाचल नगर विकास प्राधिकरण के भंडार का पर्यवेक्षक होने के नाते अथारिटी/प्राधिकरण के कार्यपालक इंजीनियर, उपमण्डल अधिकारी और कनिष्ठ इंजीनियर के निदेशानुसार कार्य कर रहा था । उसने यह भी अभिकथन किया कि शिमला विकास प्राधिकरण नागरिक आपूर्ति निगम की मार्फत ए. सी. सी. बरमाना से सीमेंट क्रय करता है । इसका संदाय अग्रिम तौर पर किया जाता है । इस प्रकार प्राप्त हुई सीमेंट की जी. आर. पुस्तिका में प्रविष्टि करके भंडार में रखनी होती है । जब भी सीमेंट की आवश्यकता होती है, तो इसे संबंधित व्यक्ति को जारी करना होता है, किंतु वर्ष 1995-96 के दौरान 15 ट्रक सीमेंट जिनमें 2700 बोरी थी, खरीदी गई और बरमाना से लादी गई जिनका मूल्य 3,25,998/- रुपए था, किंतु यह सीमेंट भंडार में प्राप्त नहीं हुई । उसने अपनी शिकायत में यह भी अभिकथन किया कि उक्त ट्रकों के चालकों और परिचालकों ने उसे सीमेंट की बोरियां प्राप्त हुए बिना ही इनकी प्रविष्टि सुसंगत रजिस्टर में करने के लिए कहा । चूंकि उसने इनकी प्रविष्टि करने में आना-कानी की, अतः उन्होंने उसे गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी और कहा कि उन्हें श्री वी. के. कश्यप, कार्यपालक इंजीनियर, मंगल सेन, उपमण्डल अधिकारी और आनंद कपूर, कनिष्ठ इंजीनियर ने यह निदेश दिया है कि उसके द्वारा इनकी प्रविष्टि की जाए और प्रविष्टि न किए जाने पर उनसे शिकायत करें, जबकि उनके द्वारा सीमेंट की बोरियां कहीं और उतार दी गईं । चूंकि वह एक दैनिक वेतनभोगी कर्मकार था, इसलिए उसने उनकी धमकी से डर कर सुसंगत रजिस्टर में प्रविष्टियां कर दीं । बाद में उसे सीमेंट की बोरियों का गबन करने के आरोपों का सामना करना पड़ा, किंतु जब उसने उच्चतर प्राधिकारियों को बताया कि उसने यह कार्य उनके ही निदेशों के अनुसरण में किया था, तब पूर्वोक्त साक्षियों द्वारा एक बैठक की गई और तत्कालीन कार्यपालक इंजीनियर श्री एस. के. अग्रवाल के दबाव में 50,000/- रुपए मंगल सेन द्वारा, 2,00,000/- रुपए वी. के. कश्यप, डी. के. अग्रवाल और बलविन्दर सिंह द्वारा तथा शेष 75,998/- रुपए मंगल सेन और आनंद कपूर द्वारा उसके मार्फत जमा किए गए । इस प्रकार, उसे पूर्वोक्त घटना में बली का बकरा बनाया गया । इस शिकायत के आधार पर तारीख 14 मई, 1999 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट रजिस्ट्रीकृत की गई । पुलिस ने इस मामले के अन्वेषण के दौरान सभी संबंधित दस्तावेजों को

अपने कब्जे में लिया । अभियुक्त की अंतर्ग्रस्तता पाए जाने पर न्यायालय में चालान प्रस्तुत किया गया । उसे पूर्वोक्त धाराओं के अधीन आरोपपत्रित किया गया । अभियुक्त ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । विचारण न्यायालय ने अभियुक्त के प्रतिरक्षा वृत्तांत को नकार दिया और अभियोजन पक्ष के साक्ष्य का अवलंब लेते हुए उसे दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । अभियुक्त ने विचारण न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्च न्यायालय में अपील फाइल की । उच्च न्यायालय द्वारा अपील का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभियुक्त द्वारा प्रतिरक्षा में प्रतिवाद किया गया पक्षकथन यह है कि अभि. सा. 5 वी. के. कश्यप, अभि. सा. 13 आनंद कपूर और अभि. सा. 15 मंगल सेन ने प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी पर उसके हस्ताक्षर दबाव डालकर अभिप्राप्त किए थे, जिसके द्वारा उसने यह स्वीकार किया है कि उसके द्वारा 2700 सीमेंट की बोरियां दुर्विनियोजित की गई थीं और उसने इन सीमेंट की बोरियों के मूल्य को सात बराबर किस्तों में जमा करना स्वीकार किया था और उसने तीन अलग-अलग समय पर किस्तें जमा की थीं । इन दस्तावेजों को अभि. सा. 2 नेक चंद द्वारा कार्यालय में बनाए रखे गए अभिलेख से साबित किया है । जी. आर. प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-15 पर उसके द्वारा हस्ताक्षर किए जाने की बात को भी साबित किया गया है । हस्तलेख विशेषज्ञ की रिपोर्ट उसके विरुद्ध है । अभि. सा. 13 आनंद कपूर और अभि. सा. 15 मंगल सेन की न्यायालय में परीक्षा की गई थी, किंतु उनमें से किसी से भी ऐसी कोई बात नहीं कही गई थी कि उन्होंने उक्त दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने के लिए अभियुक्त पर दबाव डाला था । यहां तक कि अभियुक्त द्वारा भी इन साक्षियों से प्रतिरक्षा में ऐसी कोई बात नहीं कही गई थी कि उनके द्वारा उसकी मार्फत रकम जमा कराई गई थी । अभियुक्त प्रतिपरीक्षा में इन साक्षियों के समक्ष अपने अनिवार्य और तात्विक पक्षकथन को प्रस्तुत करके अवसर का उपभोग करने में असफल रहा है । इससे यह निष्कर्ष निकलेगा कि अभियुक्त को यह विश्वास था कि वे जो कुछ कथन कर रहे हैं, वह कतई विवादग्रस्त नहीं है । इसके अतिरिक्त, अभियुक्त ने शिकायत, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 14/ए पर अपने हस्ताक्षर होने की बात स्वीकार की है और उसके अनुसार उसे शिकायत पर हस्ताक्षर करने के लिए पुलिस महानिरीक्षक द्वारा बाध्य किया गया था, किंतु ऐसा करने के लिए उसके किसी हेतु का उल्लेख नहीं किया गया है । वस्तुतः भंडार में

कमी वर्ष 1997 में ध्यान में आई थी, जबकि शिकायत वर्ष 1999 में की गई । इन दो वर्षों की अवधि में अभियुक्त ने कोई आक्षेप नहीं किया और शिमला विकास प्राधिकरण के किसी अधिकारी/पदधारी के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं की और न ही उसने जी. आर. या प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी पर या तो वी. के. कश्यप या आनंद कपूर द्वारा हस्ताक्षर अभिप्राप्त करने के बारे में कोई अभ्यावेदन दिया और ऐसा कोई जिक्र तक नहीं किया कि उसे उनके द्वारा इस मामले में बली का बकरा बनाया गया । अभि. सा. 13 आनंद कपूर, कनिष्ठ इंजीनियर सहित इन सभी साक्षियों की विचारण के दौरान परीक्षा की गई थी और अभियुक्त ने प्रतिपरीक्षा में इस आशय का जिक्र तक नहीं किया । पूर्वोक्त अभि. सा. 13 अभियुक्त का अव्यवहित वरिष्ठ अधिकारी था जिसने अभियुक्त की लिखाई और दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करते हुए देखा था और वह कारबार के मामूली अनुक्रम में अभियुक्त की लिखाई और हस्ताक्षरों से परिचित था । उसने विभिन्न दस्तावेजों पर अभियुक्त की लिखाई और हस्ताक्षरों को भी साबित किया है । अभि. सा. 5 वी. के. कश्यप की विचारण के दौरान परीक्षा की गई थी । अभियुक्त ने उसके समक्ष किसी भी रीति में कोई प्रतिरक्षा प्रस्तुत नहीं की । दस्तावेज प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी तथा जी. आर. प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-15 से यह साबित होता है कि अभियुक्त द्वारा भंडार में 2700 सीमेंट की बोरियां प्राप्त की गईं थी जो उसके द्वारा हिसाब में नहीं ली गईं । जब एक बार संपत्ति का सौंपा जाना साबित हो गया है, तो अभियुक्त के लिए इसे हिसाब में लेना लाजिमी था । यदि वह ऐसा करने में असफल रहता है और दुर्विनियोग किया है, तो उसके विरुद्ध गबन का अपराध साबित हो जाता है । इसके अतिरिक्त, पूर्वोक्त सीमेंट की कमी के संबंध में रकम जमा करने के उसके पश्चात्वर्ती आचरण से पूरी तरह यह स्पष्ट होता है कि वही वह व्यक्ति है जिसने उसके द्वारा प्राप्त की गई सीमेंट की बोरियों का गबन किया । अभियुक्त सुसंगत समय पर एक लोक सेवक था और उसे यथा पूर्वोक्त संपत्ति सौंपी गई थी किंतु उसने इसका दुर्विनियोजन किया । उसने स्वयं दुराचार किया और स्वयं के लिए धनीय अभिलाभ अर्जित किया । उसे मिथ्या रूप से आलिप्त किए जाने की बात से पूरी तरह इनकार किया जाता है ।. अतः न्यायालय की सुविचारित राय में अभियुक्त को पूर्वोक्त कारणों से भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए ठीक ही दोषसिद्ध किया गया है । जहां तक दंडादेश का संबंध है, अभियुक्त द्वारा

दुर्विनियोजित रकम को विप्रेषित किए जाने की बात को साबित किया गया है । इसलिए अभियुक्त पर अधिरोपित मूल दंडादेश को, प्रत्येक धारा के अधीन व्यतिक्रम खंड सहित जुर्माने के साथ छेड़छाड़ किए बिना, कम करके दो वर्ष किया जाता है । (पैरा 8, 9, 10 और 11)

अपीली दांडिक अधिकारिता : 2010 की दांडिक अपील सं. 476.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री मनोज पाठक

प्रत्यर्थी की ओर से श्री आर. पी. सिंह, सहायक महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति सुरिन्दर सिंह – अपीलार्थी ने विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा 2006 के भ्रष्टाचार मामला सं. 15-एस/7, जिसका विनिश्चय तारीख 23 सितम्बर, 2010 को किया गया, में भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए पारित की गई अपनी दोषसिद्धि को चुनौती दी है, जिसके द्वारा उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन अपराध के लिए पांच वर्ष का साधारण कारावास भोगने और तीस हजार रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन तीन वर्ष का साधारण कारावास भोगने और बीस हजार रुपए का संदाय करने का दंडादेश, व्यतिक्रम खंड सहित, दिया गया है ।

2. पक्षकारों को सुना गया और अभिलेख पर के साक्ष्य का परिशीलन किया गया ।

3. संक्षेप में, अभियोजन के पक्षकथन का इस प्रकार उल्लेख किया जा सकता है ।

(i) अपीलार्थी मनोहर सिंह, जिसे इसमें इसके पश्चात 'अभियुक्त' कहा गया है, ने तारीख 14 जून, 1999 को अपर पुलिस महानिदेशक (प्रवर्तन), शिमला को एक शिकायत, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 14/ए भेजी, जिसमें यह अभिकथन किया गया कि वह मार्च, 1995 से मार्च 1996 के दौरान शिमला विकास प्राधिकरण/हिमाचल नगर विकास प्राधिकरण के भंडार का पर्यवेक्षक होने के नाते अथारिटी/प्राधिकरण के कार्यपालक इंजीनियर, उपमण्डल अधिकारी और कनिष्ठ इंजीनियर के निदेशानुसार कार्य कर रहा था । उसने यह भी अभिकथन किया कि शिमला विकास प्राधिकरण

नागरिक आपूर्ति निगम की मार्फत ए. सी. सी. बरमाना से सीमेंट क्रय करता है । इसका संदाय अग्रिम तौर पर किया जाता है । इस प्रकार प्राप्त हुई सीमेंट की जी. आर. पुस्तिका में प्रविष्टि करके भंडार में रखनी होती है । जब भी सीमेंट की आवश्यकता होती है, तो इसे संबंधित व्यक्ति को जारी करना होता है, किंतु वर्ष 1995-96 के दौरान 15 ट्रक सीमेंट जिनमें 2700 बोरी थी, खरीदी गई और बरमाना से लादी गई जिनका मूल्य 3,25,998/- रुपए था, कितु यह सीमेंट भंडार में प्राप्त नहीं हुई । उसने अपनी शिकायत में जी. आर. संख्यांक के साथ-साथ ट्रकों का भी ब्यौरा दिया और यह अभिकथन किया कि उक्त ट्रकों के चालकों और परिचालकों ने उसे जी. आर. सीमेंट की बोरियां प्राप्त हुए बिना ही इनकी प्रविष्टि सुसंगत रजिस्टर में करने के लिए प्रस्तुत कीं । चूंकि उसने इनकी प्रविष्टि करने में आना-कानी की, अतः उन्होंने उसे गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी और कहा कि उन्हें श्री वी. के. कश्यप, कार्यपालक इंजीनियर, मंगल सेन, उपमण्डल अधिकारी और आनंद कपूर, कनिष्ठ इंजीनियर ने यह निदेश दिया है कि उसके द्वारा (अभियुक्त) इनकी प्रविष्टि की जाए और प्रविष्टि न किए जाने पर उनसे शिकायत करें, जबकि उनके द्वारा सीमेंट की बोरियां कहीं और उतार दी गईं । चूंकि वह एक दैनिक वेतनभोगी कर्मकार था, इसलिए उसने उनकी धमकी से डर कर सुसंगत रजिस्टर में प्रविष्टियां कर दीं । बाद में उसे सीमेंट की बोरियों का गबन करने के आरोपों का सामना करना पड़ा, किंतु जब उसने उच्चतर प्राधिकारियों को बताया कि उसने यह कार्य उनके ही निदेशों के अनुसरण में किया था, तब पूर्वोक्त साक्षियों द्वारा एक बैठक की गई और तत्कालीन कार्यपालक इंजीनियर श्री एस. के. अग्रवाल के दबाव में 50,000/- रुपए मंगल सेन द्वारा, 2,00,000/- रुपए वी. के. कश्यप, डी. के. अग्रवाल और बलविन्दर सिंह द्वारा तथा शेष 75,998/- रुपए मंगल सेन और आनंद कपूर द्वारा उसके मार्फत जमा किए गए । इस प्रकार, उसे पूर्वोक्त घटना में बली का बकरा बनाया गया । यह भी अभिकथन किया गया कि निर्माण के प्रयोजनार्थ घटिया सामग्री का प्रयोग किया गया । इस शिकायत के आधार पर तारीख 14 मई, 1999 को प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 13/99 रजिस्ट्रीकृत की गई ।

(ii) अन्वेषण के दौरान अभि. सा. 2 नेक चंद ने फाइल सं. एचपी एण्ड वीपी-एबी(बी)सीमेंट शारटेज-97-वाल्यूम 1 पृष्ठ 1 से 269 और उसके साथ टिप्पण क्र. सं. 1 से 181 और आदेश जिसके द्वारा फाइल सभी दस्तावेजों और टिप्पण सहित पत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ई द्वारा पुलिस को

सौंपी गई थी, प्रस्तुत की ।

(iii) उसके पश्चात् पुलिस ने तारीख 17 जून, 2007 को पूर्वोक्त फाइल अग्रेषित किए गए पत्रों, जो ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/डी द्वारा कब्जे में लिए गए थे, को विधारित करते हुए लौटा दी । पुलिस ने कारण बताओ नोटिस प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/एफ-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/एफ-5 के साथ-साथ जी. आर. प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3 /ए-15, जिन्हें बरामदगी ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/बी द्वारा कब्जे में लिया गया था, भी कब्जे में लिए ।

(iv) अन्वेषण के दौरान यह बात भी सामने आई कि प्राप्त हुई सभी मदें सहायक इंजीनियर (निर्माण), हिमाचल प्रदेश नगर विकास प्राधिकरण के नाम में थी और जी. आर. संबंधित विभाग के कनिष्ठ इंजीनियर या सहायक इंजीनियर द्वारा हस्ताक्षरित थीं ।

(v) अभियुक्त ने 3,28,700/- रुपए की राशि सात किस्तों में जमा करने की अनुज्ञा देने के लिए आवेदन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए द्वारा मुख्य प्रशासनिक अधिकारी को अभ्यावेदन दिया और उसने इसके साथ 50,000/- रुपए की रकम प्रथम किस्त के रूप में जमा की तथा उसके बाद उसके द्वारा तारीख 31 मई, 1997 को दूसरी किस्त की दो लाख रुपए की रकम प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/बी द्वारा और 75,998/- की तीसरी किस्त प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी द्वारा जमा की गई । उस समय वह भंडारी था । पुलिस ने अन्वेषण के दौरान इन आवेदनों को भी कब्जे में लिया ।

(vi) वर्ष 1997 में जब कमी का पता चला और जांच की गई, तो अभियुक्त को नोटिस जारी किया गया । साथ-ही-साथ श्री आर. के. नायर द्वारा विभागीय जांच भी की गई । जांच के दौरान अभियुक्त ने लिखित में (प्रदर्श डीई) दिया जिसमें उसने भंडार में पाई गई कमी के संबंध में अपनी गलती स्वीकार की और कमी की भरपाई करने का वचन दिया । यहां तक कि जांच अधिकारी ने जांच के दौरान अपनी रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 7/ए द्वारा मंगल सेन, उपमण्डल अधिकारी और आनंद कपूर, कनिष्ठ इंजीनियर को भी उपेक्षा बरतने के लिए उत्तरदायी ठहराया और उन्हें दंडित किया गया । अन्वेषण के दौरान यह बात भी सामने आई कि वर्ष 1995-96 में 15 ट्रकों में लाई गई 3,25,998/- रुपए मूल्य की 2700 सीमेंट की बोरियां बरमाना से जी. आर. प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-15 द्वारा भंडार में भेजी गई थीं और ये बोरियां अभियुक्त मनोहर सिंह

द्वारा प्राप्त की गई थीं । अभियुक्त ने पूर्वोक्त पत्रों, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी द्वारा उक्त रकम जमा की थी और इस रकम को सम्यक् रूप से प्राधिकरण के खाते में, खाते के सार प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/बी से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/डी द्वारा, जमा किया गया था ।

(vii) पुलिस ने इस मामले के अन्वेषण के दौरान उस मस्टर रोल को भी कब्जे में लिया जिसके द्वारा अभियुक्त को पूर्वोक्त अवधि के दौरान दैनिक मजदूरी पर नियोजित किया गया था ।

(viii) पुलिस ने पत्रों, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी, तथा अभियुक्त के हस्ताक्षरों वाली जी. आर. को भी उसके हस्तलेख के नमूनों प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1 से ए-20 सहित न्यायालयिक विज्ञान परीक्षण के लिए भेजा । हस्तलेख विशेषज्ञ की रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8 है और उसकी राय के कारण प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/सी पर हैं । उसने राय व्यक्ति की कि ये दोनों एक ही हाथ से लिखे गए हैं ।

(ix) पुलिस ने अन्वेषण के दौरान बिन-कार्ड और माप बही की प्रतियां भी कब्जे में ली ।

4. इस प्रकार, अभियुक्त की अंतर्ग्रस्तता पाए जाने पर न्यायालय में चालान प्रस्तुत किया गया । तद्नुसार, उसे पूर्वोक्त धाराओं के अधीन आरोप पत्रित किया गया । अभियुक्त ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया ।

5. अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को साबित करने के लिए अपने साक्षियों की परीक्षा कराई और अभियुक्त को भी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन परीक्षा की गई । उसने शिकायत से इनकार किया किंतु उस पर अपने हस्ताक्षर होने की बात स्वीकार की जो, उसके अनुसार, ए. डी. जी. (पी) द्वारा लिए गए थे । उसके विरुद्ध पाई गई तत्संबद्ध परिस्थितियों से उसके द्वारा इनकार किया गया । उसने कार्यपालक मजिस्ट्रेट के समक्ष लिए गए अपने नमूना हस्तलेख और हस्ताक्षरों की बात भी स्वीकार की । संक्षेप में उसका आधार यह था कि उसे इस मामले में मिथ्या रूप से आलिप्त किया गया है ।

6. उसने प्रतिरक्षा में साक्ष्य भी प्रस्तुत किया और प्रति. सा. 1 हरि राम की परीक्षा कराई जिसने मस्टर-रोल, प्रदर्श डी-30 से डी-56 को साबित किया । प्रति. सा. 2 श्री संदीप सेन, सहायक पर्यवेक्षक और प्रति. सा. 3 बेली राम चौहान, पर्यवेक्षक जिनका उससे कोई लेना-देना नहीं है

की परीक्षा कराई और उसने न्यायालय की अनुज्ञा लेकर स्वयं के साक्षी के तौर पर प्रति. सा. 4 के रूप में अपनी भी परीक्षा कराई । उसने यह कथन किया कि वह दैनिक मजदूरी के आधार पर कार्यरत था । उसे उपमण्डल अधिकारी मंगल सेन और कनिष्ठ इंजीनियर आनंद कपूर ने जी. आर. पुस्तिका पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा था । भंडार पर्यवेक्षक के रूप में उसका यह कर्तव्य था कि वस्तुओं की गिनती करके भंडार में रखे । इसी प्रकार गोदाम से वस्तुएं निर्मोचित की जाती हैं । इसके अतिरिक्त, उसका यह कहना है कि गोदाम के ताले की दो चाबियां हैं । एक उपमण्डल अधिकारी के पास रहती है और एक कनिष्ठ इंजीनियर के पास । भंडार या तो उपमण्डल अधिकारी या कनिष्ठ इंजीनियर की मौजूदगी में खोला जाता है । उसने अपने कब्जे में चाबी होने की बात से भी इनकार किया । उसने यह भी कथन किया कि भंडार की कभी भी अस्तित्व जांच नहीं की गई । उसने यह अभिकथन किया कि कार्यपालक इंजीनियर वी. के. कश्यप, उपमण्डल अधिकारी मंगल सेन और कनिष्ठ इंजीनियर आनंद कपूर और ठेकेदार बलविन्दर गुप्ता द्वारा उस पर दबाव डालकर दस्तावेज प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/डी-9, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/बी, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/डी-3 से डी-10 और प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी (पी. डब्ल्यू. 1/डी/11) पर हस्ताक्षर कराए गए और उसने अभिकथित अनुसार विभाग में कोई रकम जमा नहीं की थी । तथापि, उसने अपने विरुद्ध विभागीय जांच आरंभ होने की बात स्वीकार की । उसने जी. आर. पर अपने हस्ताक्षर होने और पुलिस महानिदेशक को शिकायत करने की बात से भी इनकार किया ।

7. विचारण न्यायालय ने अभियुक्त के प्रतिरक्षा वृत्तांत को नकार दिया और अभियोजन पक्ष के साक्ष्य का अवलंब लेते हुए उसे पूर्वोक्त अनुसार दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया । इसलिए यह अपील फाइल की गई है ।

8. संक्षेप में, अभियुक्त द्वारा प्रतिरक्षा में प्रतिवाद किया गया पक्षकथन यह है कि अभि. सा. 5 वी. के. कश्यप, अभि. सा. 13 आनंद कपूर और अभि. सा. 15 मंगल सेन ने प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी पर उसके हस्ताक्षर दबाव डालकर अभिप्राप्त किए थे, जिसके द्वारा उसने ऊपर उल्लिखित अनुसार यह स्वीकार किया है कि उसके द्वारा 2700 सीमेंट की बोरियां दुर्विनियोजित की गई थीं और उसने इन सीमेंट की बोरियों के मूल्य को सात बराबर किस्तों में जमा करना स्वीकार किया था और उसने तीन अलग-अलग समय पर किस्तें जमा की थीं । इन दस्तावेजों को अभि. सा. 2 नेक चंद द्वारा कार्यालय में बनाए रखे गए

अभिलेख से साबित किया है । जी. आर. प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-15 पर उसके द्वारा हस्ताक्षर किए जाने की बात को भी साबित किया गया है । हस्तलेख विशेषज्ञ की रिपोर्ट उसके विरुद्ध है । अभि. सा. 13 आनंद कपूर और अभि. सा. 15 मंगल सेन की न्यायालय में परीक्षा की गई थी, किंतु उनमें से किसी से भी ऐसी कोई बात नहीं कही गई थी कि उन्होंने उक्त दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने के लिए अभियुक्त पर दबाव डाला था । यहां तक कि अभियुक्त द्वारा भी इन साक्षियों से प्रतिरक्षा में ऐसी कोई बात नहीं कही गई थी कि उनके द्वारा उसकी मार्फत रकम जमा कराई गई थी । अभियुक्त प्रतिपरीक्षा में इन साक्षियों के समक्ष अपने अनिवार्य और तात्विक पक्षकथन को प्रस्तुत करके अवसर का उपभोग करने में असफल रहा है । इससे यह निष्कर्ष निकलेगा कि अभियुक्त को यह विश्वास था कि वे जो कुछ कथन कर रहे हैं, वह कतई विवादग्रस्त नहीं है । इसके अतिरिक्त, अभियुक्त ने शिकायत, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 14/ए पर अपने हस्ताक्षर होने की बात स्वीकार की है और उसके अनुसार उसे शिकायत पर हस्ताक्षर करने के लिए पुलिस महानिरीक्षक द्वारा बाध्य किया गया था, किंतु ऐसा करने के लिए उसके किसी हेतु का उल्लेख नहीं किया गया है । वस्तुतः भंडार में कमी वर्ष 1997 में ध्यान में आई थी, जबकि शिकायत वर्ष 1999 में की गई । इन दो वर्षों की अवधि में अभियुक्त ने कोई आक्षेप नहीं किया और शिमला विकास प्राधिकरण के किसी अधिकारी/पदधारी के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं की और न ही उसने जी. आर. या प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी पर या तो वी. के. कश्यप या आनंद कपूर द्वारा हस्ताक्षर अभिप्राप्त करने के बारे में कोई अभ्यावेदन दिया और ऐसा कोई जिक्र तक नहीं किया कि उसे उनके द्वारा इस मामले में बली का बकरा बनाया गया । अभि. सा. 13 आनंद कपूर, कनिष्ठ इंजीनियर सहित इन सभी साक्षियों की विचारण के दौरान परीक्षा की गई थी और अभियुक्त ने प्रतिपरीक्षा में इस आशय का जिक्र तक नहीं किया । पूर्वोक्त अभि. सा. 13 अभियुक्त का अव्यवहित वरिष्ठ अधिकारी था जिसने अभियुक्त की लिखाई और दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करते हुए देखा था और वह कारबार के मामूली अनुक्रम में अभियुक्त की लिखाई और हस्ताक्षरों से परिचित था । उसने विभिन्न दस्तावेजों पर अभियुक्त की लिखाई और हस्ताक्षरों को भी साबित किया है ।

9. अभि. सा. 5 वी. के. कश्यप की विचारण के दौरान परीक्षा की गई थी । अभियुक्त ने उसके समक्ष किसी भी रीति में कोई प्रतिरक्षा प्रस्तुत नहीं

की । दस्तावेज प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/सी तथा जी. आर. प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-1 से प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 3/ए-15 से यह साबित होता है कि अभियुक्त द्वारा भंडार में 2700 सीमेंट की बोरियां प्राप्त की गई थीं जो उसके द्वारा हिसाब में नहीं ली गईं । जब एक बार संपत्ति का सौंपा जाना साबित हो गया है, तो अभियुक्त के लिए इसे हिसाब में लेना लाजिमी था । यदि वह ऐसा करने में असफल रहता है और दुर्विनियोग किया है, तो उसके विरुद्ध गबन का अपराध साबित हो जाता है । इसके अतिरिक्त, पूर्वोक्त सीमेंट की कमी के संबंध में रकम जमा करने के उसके पश्चात्वर्ती आचरण से पूरी तरह यह स्पष्ट होता है कि वही वह व्यक्ति है जिसने उसके द्वारा प्राप्त की गई सीमेंट की बोरियों का गबन किया । अभियुक्त सुसंगत समय पर एक लोक सेवक था और उसे यथा पूर्वोक्त संपत्ति सौंपी गई थी किंतु उसने इसका दुर्विनियोजन किया । उसने स्वयं दुराचार किया और स्वयं के लिए धनीय अभिलाभ अर्जित किया । उसे मिथ्या रूप से आलिप्त किए जाने की बात से पूरी तरह इनकार किया जाता है ।

10. अतः, मेरी सुविचारित राय में अभियुक्त को पूर्वोक्त कारणों से भारतीय दंड संहिता की धारा 409 और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए ठीक ही दोषसिद्ध किया गया है ।

11. जहां तक दंडादेश का संबंध है, अभियुक्त द्वारा दुर्विनियोजित रकम को विप्रेषित किए जाने की बात को साबित किया गया है । इसलिए अभियुक्त पर अधिरोपित मूल दंडादेश को, प्रत्येक धारा के अधीन व्यतिक्रम खंड सहित जुर्माने के साथ छेड़छाड़ किए बिना, कम करके दो वर्ष किया जाता है । तद्नुसार आदेश किया जाता है ।

12. अपीलार्थी आज से तीस दिन के भीतर विचारण न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करेगा और उसके असफल रहने पर विद्वान् विचारण न्यायालय इस निर्णय के अनुरूप दंडादेश का निष्पादन करने के लिए उपाय करेगा । दंडादेश में पूर्वोक्त उपांतरण करते हुए इस अपील का निपटारा किया जाता है ।

अपील का निपटारा किया गया ।

जस.

दिलबाग सिंह

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य

तथा

हिमाचल प्रदेश राज्य

बनाम

उषा देवी

तारीख 30 मई, 2012

न्यायमूर्ति आर. बी. मिश्रा और न्यायमूर्ति संजय करोल

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 तथा धारा 96 – हत्या – प्राइवेट प्रतिरक्षा का अभिवाक् – अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्यों और अभिलेख पर की सामग्री से स्पष्ट रूप से यह साबित हुआ है कि अभियुक्त ने अपने सगे भाई (मृतक) की हत्या धारदार आयुध से अनेक प्रहार करके पूर्ववर्ती झगड़े के कारण तथा अपने या अपने परिवार के सदस्यों के जीवन या संपत्ति को किसी आसन्न या तात्कालिक संकट की कोई युक्तियुक्त आशंका न होते हुए की थी, विचारण न्यायालय द्वारा की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि उचित है और उसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं है – तथापि, अन्य अभियुक्त की अपराध में आलिप्तता साबित नहीं होने पर उसकी दोषमुक्ति उचित है ।

मामले के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि तारीख 5 मार्च, 2005 को मृतक श्री रछपाल सिंह साइकिल पर घास लेकर घर लौट रहा था । उसकी पत्नी ने अपने पति के चिल्लाने की आवाज यह कहते हुए सुनी "हाय मार दीत्ता" । जब वह भागकर उस स्थान पर गई जहां से चिल्लाने की आवाज आ रही थी, तो उसने दिलबाग सिंह (अभियुक्त सं. 1) को श्री रछपाल सिंह के सिर पर कस्सी से प्रहार करते हुए देखा । उसने अभियुक्त सं. 1 की पत्नी उषा देवी (अभियुक्त सं. 2) को भी उसके पति पर घूंसों से प्रहार करते हुए देखा । जब वह सहायता के लिए चिल्लाई, तो उसकी पुत्री और देवर घटनास्थल पर आए । पूर्वोक्त व्यक्तियों को देखकर अभियुक्त दिलबाग सिंह अपनी पत्नी के साथ तुरंत अपने स्कूटर पर, जो उसने निकट ही खड़ा कर रखा था, घटनास्थल से भाग गया । श्री रछपाल सिंह को तुरंत

अस्पताल ले जाया गया, जहां उसकी उसे पहुंची क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई । अभियुक्त घटनास्थल से भागने के पश्चात् उन्हें पहुंची क्षतियों के लिए आपराधिक मामला रजिस्ट्रीकृत करने के लिए पुलिस थाने गए । अभियुक्तों को भी चिकित्सीय परीक्षण के लिए अस्पताल भेजा गया । अभियुक्तों को उसी दिन गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण से अभिकथित अपराध में अभियुक्तों की सह-अपराधिता प्रकट हुई और परिणामस्वरूप विचारण के लिए न्यायालय में चालान प्रस्तुत किया गया । अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने के लिए आरोपित किया गया, जिसके लिए उन्होंने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया । विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर की सामग्री का मूल्यांकन करने के पश्चात् अभियुक्त दिलबाग सिंह को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने के लिए दोषसिद्ध किया और आजीवन कारावास तथा जुर्माने से दंडादिष्ट किया । तथापि, विचारण न्यायालय ने अभियुक्त उषा देवी के विरुद्ध षड्यंत्र के अपराध को साबित नहीं पाया और उसे हत्या के आरोप से दोषमुक्त कर दिया । अभियुक्त ने विचारण न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्च न्यायालय में अपील फाइल की । राज्य द्वारा भी दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा अपीलों को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अब प्राइवेट प्रतिरक्षा के संबंध में विधि सुस्थिर है । विधि की यह स्थापित स्थिति है कि प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार तभी प्रारंभ हो जाता है जैसे ही शरीर के प्रति युक्तियुक्त संकट की आशंका उद्भूत होती है । संकट आसन्न, तात्कालिक और वास्तविक होना चाहिए । इस अधिकार का विस्तार उतनी अपहानि से अधिक अपहानि करने तक नहीं है जितनी प्रतिरक्षा के प्रयोजन के लिए करनी आवश्यक है । इस अधिकार का प्रयोग तब न्यायोचित होगा यदि ऐसे अधिकार का प्रयोग कर रहे व्यक्ति को यह युक्तियुक्त आशंका हो कि हमले का परिणाम मृत्यु या घोर उपहति होगा । यह पता लगाने के लिए कि प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार उपलब्ध है या नहीं, अभियुक्त को पहुंची क्षतियां, उसकी सुरक्षा के प्रति संकट की आसन्नता, अभियुक्त द्वारा पहुंचाई गई क्षति और यह परिस्थिति कि क्या अभियुक्त के पास लोक प्राधिकारी की सहायता प्राप्त करने का अवसर था, ऐसी सुसंगत बातें हैं जिन पर विचार किया जाना चाहिए । न्यायालय विधि के पूर्वोक्त स्थिर सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए साक्षियों के परिसाक्ष्यों की

परीक्षा करेगा । न्यायालय ने यह पाया है कि सिद्धदोष ने इस तथ्य को विवादग्रस्त नहीं किया है कि वह स्वयं प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाने गया था और डा. जगदीश सिंह (अभि. सा. 5) द्वारा उसका परीक्षण किया गया था । डाक्टर ने यह राय व्यक्त की है कि अभियुक्त दिलबाग सिंह को बाईं तर्जनी अंगुली के सतही भाग के अंतिम सिरे पर वृत्तीय शुण्डाकार में 2-1/2 इंच माप का विछिन्न घाव था और ताजा निकला हुआ रक्त मौजूद था । उसका परीक्षण तारीख 5 मार्च, 2005 को अपराह्न में 9.30 बजे किया गया था । यह महत्वपूर्ण है कि उसकी शरीर पर कोई अन्य क्षति नहीं पाई गई थी । डाक्टर ने यह भी परामर्श दिया था कि उक्त अभियुक्त के बाएं हाथ का एक्स-रे कराया जाए । किंतु डाक्टर का इस आशय का अविवादित परिसाक्ष्य है कि अभियुक्त दिलबाग सिंह अपना आरंभिक परीक्षण कराने के पश्चात् मुड़कर वापस नहीं आया । डाक्टर ने यह भी स्पष्ट किया है कि उक्त अभियुक्त के शरीर पर पायी गई क्षति गिरने से भी पहुंच सकती थी, यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को क्षतियां पहुंचाने के पश्चात् भाग रहा हो । अभियुक्त उषा देवी का भी डाक्टर द्वारा परीक्षण किया गया था और उसकी बाईं भुजा पर केवल खरोंच के चिह्न पाए गए थे । उसने बाएं श्रोणीय भाग और कटि प्रदेश पर हल्के दर्द की भी शिकायत की थी । निर्विवाद रूप से अभियुक्तों को पहुंची क्षति न तो घातक थी और न ही प्राणघातक तथा न ही ये क्षति दरांती से कारित की गई, जैसा कि अभियुक्त द्वारा अभिकथन किया गया है, कही जा सकती है । यह दर्शित नहीं किया जा सका कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों के प्रति अऋजुता से कार्य किया था । पुलिस अपराध के स्थल से कोई दरांती बरामद नहीं कर सकी थी । पुलिस द्वारा अभियुक्तों को तारीख 6 मार्च, 2005 को ही गिरफ्तार कर लिया गया था । उनका यह पक्षकथन नहीं है कि पुलिस ने उनकी शिकायत पर अऋजुता से कार्य किया था या उन्हें गिरफ्तार करने से पूर्व आवश्यक अन्वेषण नहीं किया था । यहां तक कि अपनी गिरफ्तारी के पश्चात् या विचारण के दौरान भी उन्होंने इस बाबत ऐसी कोई शिकायत नहीं की थी । ऐसी क्या बात थी कि दिलबाग सिंह ने और आगे चिकित्सीय परीक्षण के लिए अपने आप को उपलब्ध नहीं कराया, ऐसा विलंबित प्रश्न है जो विचारण के दौरान उसकी ओर से अनुत्तरित और अस्पष्टीकृत रहा, बहरहाल उसने प्राइवेट प्रतिरक्षा में कार्य किया था । उसने घटनास्थल पर अपनी मौजूदगी को स्वीकार किया है । मृतक उसका सगा भाई था । उसके अनुसार, मृतक उसके मकान के सामने बनाई गई बाड़ को हटा रहा था जिसका उसके द्वारा विरोध किया

गया । अभियुक्त के अनुसार यह घटना तारीख 5 मार्च, 2005 की सायंकाल में घटित हुई थी । अभियुक्त का यह पक्षकथन नहीं है कि मृतक या उसके परिवार के किसी सदस्य ने धमकी दी थी, अभित्रस्त किया था या अभियुक्त दिलबाग सिंह को शारीरिक क्षति या उपहति कारित करने के आशय से आयुधों से लैस होकर आए थे । अभियुक्त दिलबाग सिंह सुबह होने तक इंतजार कर सकता था और फिर मामले को पंचायत के सदस्यों के ध्यान में लाता । इतना ही नहीं, तथ्य यह है कि उसने स्वयं साक्षियों से यह बात कही थी कि चारदिवारी से संबंधित विवाद को उसके द्वारा पंचायत के समक्ष उठाया गया था । इस बाबत वह स्वयं पुलिस को मामले की रिपोर्ट कर सकता था । पुलिस पदधारियों (साक्षी) से ऐसी बात नहीं कही गई थी कि उन्होंने अऋजु रीति से अन्वेषण किया था और उस दरांती को, जिससे मृतक द्वारा उस पर अभिकथित रूप से हमला किया गया था, जानबूझकर बरामद नहीं किया गया था और उसे अभिलेख पर नहीं लाया गया । इस अभियुक्त का यह भी पक्षकथन नहीं है कि भूतकाल में मृतक या उसके परिवार के सदस्यों ने कभी उसे या उसके परिवार के सदस्यों को अभित्रस्त किया था, धमकी दी थी या हमला किया था । मृतक या उसके परिवार के सदस्यों की ओर से कदापि किसी हमले का प्रयत्न नहीं किया गया था । इसलिए न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि प्रस्तुत मामले में के अभियुक्त ने आत्म-प्रतिरक्षा का मिथ्या अभिवाक् किया है जिसे किसी भी स्थिति में स्पष्ट नहीं किया गया है और इसे प्रथमदृष्ट्या सिद्ध नहीं किया गया है । न्यायालय यह भी अवेक्षा कर सकता है कि अभियुक्त द्वारा ली गई प्रतिरक्षा को भी अधिसंभाव्य नहीं कहा जा सकता है और इसका कारण यह है कि सिद्धदोष-अभियुक्त को पहुंची क्षतियां उसके शरीर के मुख्य अंगों पर नहीं थीं और न ही उसे अपने परिवार के जीवन के प्रति कोई आशंका या धमकी थी । श्री मोहिन्दर सिंह (अभि. सा. 2) ने अभि. सा. 1 द्वारा वर्णित किए गए वृत्तांत की संपुष्टि की है । न्यायालय का यह भी निष्कर्ष है कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 1 के वृत्तांत की संपुष्टि अभि. सा. 3 द्वारा की गई है । इन साक्षियों के परिसाक्ष्यों की सावधानी से संवीक्षा करने पर यह प्रकट होता है कि किसी भी स्थिति में मृतक आक्रामक नहीं था । केवल इस कारण कि घटना अभियुक्त के मकान के निकट घटित हुई थी या यह कि मृतक अभिकथित रूप से अभियुक्त द्वारा लगाई गई बाड़ को हटाने की कोशिश कर रहा था, किसी भी रीति में यह अर्थ नहीं है कि मृतक आक्रामक था । इसके विपरीत, यह सिद्ध होता है कि मृतक सायंकाल में पशुओं के लिए चारा लेकर घर वापस आ रहा था ।

उसका साइकिल घटनास्थल से चारे के साथ, जो साइकिल से बंधा हुआ था, बरामद किया गया था । घटनास्थल पर मौजूद साक्षियों ने घटना घटित होने के बारे में एक स्वर में एक-दूसरे के परिसाक्ष्यों की संपुष्टि की है । न्यायालय ने उनके परिसाक्ष्यों को विश्वसनीय और भरोसेमंद तथा उनके बयानों को सटीक, अविचल और विश्वासप्रद पाया है । विद्वेष और दुश्मनी एक दुधारी तलवार है । अभियुक्त दिलबाग सिंह ने तात्विक अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्य के माध्यम से यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि उसके और मृतक के बीच पूर्वतर विद्वेष और भू-विवाद था । किंतु यह तथ्य भी स्वतः मृतक को अपहानि कारित करने या साक्षियों को अविश्वसनीय ठहराने का कारण नहीं हो सकता है । यह ऐसा मामला नहीं है जहां झगड़ा हुआ और सिद्धदोष ने यकायक मृतक को क्षतियां कारित कीं । अभियुक्त दिलबाग सिंह ने किसी पर्याप्त प्रकोपन या हेतु के बिना मृतक के मुख्य अंगों पर तेज धारदार आयुध से प्रहार किया । उसने एक प्रहार नहीं अपितु कई प्रहार किए । वह इन प्रहारों के परिणाम से भिज्ञ था । यह सिद्ध होता है कि सुसंगत समय पर मृतक अकेला था । अभियुक्त ने कस्सी से अपने ही भाई पर कई प्रहार किए थे और इसलिए न्यायालय के सुविचारित मत में, अभियुक्त यहां तक कि दंडादेश के संबंध में भी किसी सहानुभूति या रियायत, जैसा कि प्रतिरक्षा पक्ष के विद्वान् काउंसेल द्वारा आग्रह किया गया है, का पात्र नहीं है । अतः न्यायालय अभियुक्त दिलबाग सिंह की सह-अपराधिता के संबंध में निचले न्यायालय द्वारा दिए गए आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाता है । उसे विधि के स्थिर सिद्धांतों के अनुसार ठीक ही दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है । राज्य द्वारा फाइल की गई अपील पर विचार करने पर न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि यह नहीं कहा जा सकता है कि मृतक की हत्या करने के लिए दोनों अभियुक्तों के सामान्य आशय का आरोप अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्यों से पूर्णतः सिद्ध होता है । न्यायालय के सुविचारित मत में, विचारण न्यायालय ने ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि घटनास्थल पर अभियुक्त उषा देवी की मात्र मौजूदगी से स्वतः उक्त सामान्य आशय का निष्कर्ष नहीं निकलता है । (पैरा 10, 14, 15, 25, 26, 27 और 28)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2012]	(2012) 1 एस. सी. सी. 414 : **रंजीथम** बनाम **बासवराज और अन्य;**	13

[2010] (2010) 2 एस. एस. सी. 333 :
दर्शन सिंह बनाम **पंजाब राज्य और एक अन्य;** 11

[2010] (2010) 7 एस. एस. सी. 477 :
सिकंदर सिंह और अन्य बनाम **बिहार राज्य** । 12

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2006 की दांडिक अपील सं. 306 और 2006 की दांडिक अपील सं. 370.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374 और 378 के अधीन अपीलें ।

2006 की दांडिक अपील सं. 306

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री अजय कोछर और विवेक शर्मा

प्रत्यर्थी/राज्य की ओर से सर्वश्री आर. के. शर्मा, ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता और जे. एस. गुलेरिया, सहायक महाधिवक्ता

2006 की दांडिक अपील सं. 370

अपीलार्थी/राज्य की ओर से सर्वश्री आर. के. शर्मा, ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता और जे. एस. गुलेरिया, सहायक महाधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री अजय कोछर

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संजय करोल ने दिया ।

न्या. करोल – अभियुक्तों का एक अपराध के लिए, जो अभिकथित रूप से तारीख 5 मार्च, 2005 को कारित किया गया था, विचारण किया गया था । अपर सेशन न्यायाधीश, त्वरित निपटान न्यायालय, ऊना, जिला ऊना, हिमाचल प्रदेश द्वारा सेशन मामला सं. 10/05 आरबीटी 66/05/05 (सेशन विचारण सं. 9/06), जिसका शीर्षक राज्य बनाम दिलबाग सिंह और एक अन्य था, में तारीख 27 जुलाई, 2006 को पारित किए गए निर्णय के निबंधनानुसार दिलबाग सिंह (अभियुक्त सं. 1) को आरोपित अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया और उषा देवी (अभियुक्त सं. 2) को दोषमुक्त कर दिया गया ।

2. अभियोजन का पक्षकथन यह है कि तारीख 5 मार्च, 2005 को श्रीमती कांता देवी (अभि. सा. 1) का पति मृतक श्री रछपाल सिंह साइकिल पर घास लेकर घर लौट रहा था । अभि. सा. 1 ने अपने पति के चिल्लाने की आवाज यह कहते हुए सुनी "हाय मार दीत्ता" । जब वह भागकर उस स्थान पर गई जहां से चिल्लाने की आवाज आ रही थी, तो उसने दिलबाग सिंह (अभियुक्त सं. 1) को श्री रछपाल सिंह के सिर पर कस्सी (फावड़ा) से प्रहार करते हुए देखा । अभि. सा. 1 ने अभियुक्त सं. 1 की पत्नी उषा देवी (अभियुक्त सं. 2) को भी घूसों से प्रहार करते हुए देखा । जब अभि. सा. 1 सहायता के लिए चिल्लाई, तो उसकी पुत्री कुमारी सपना (अभि. सा. 3) और देवर मोहिन्दर सिंह (अभि. सा. 2) घटनास्थल पर आए । पूर्वोक्त व्यक्तियों को देखकर अभियुक्त दिलबाग सिंह अपनी पत्नी के साथ तुरंत अपने स्कूटर पर, जो उसने निकट ही खड़ा कर रखा था, घटनास्थल से भाग गया । श्री रछपाल सिंह को तुरंत दौलतपुर में अस्पताल ले जाया गया, जहां पर डा. जगदीश सिंह (अभि. सा. 5) द्वारा उसका परीक्षण किया गया । दूरभाष पर पुलिस को सूचित किया गया और हैड कांस्टेबल राजिन्दर सिंह (अभि. सा. 13) ने इसके बारे में अभिलेख में रोजनामचा प्रविष्टि (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 13/ए) की । सहायक उप निरीक्षक मोहिन्दर सिंह (अभि. सा. 12), जो पुलिस चौकी दौलतपुर में तैनात था, अभि. सा. 13 द्वारा दी गई सूचना पर अस्पताल के लिए रवाना हुआ जहां उसने श्री रछपाल सिंह को बेहोशी की हालत में लेटे हुए और डाक्टर द्वारा चिकित्सीय उपचार करते हुए पाया । परिणामस्वरूप, उसने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के अधीन अभि. सा. 1 का कथन (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए) अभिलिखित किया और इसे रुक्का (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 12/ए) सहित हैड कांस्टेबल नरदेव सिंह (अभि. सा. 18) के माध्यम से पुलिस थाना, गंगरेट भेजा, जहां हैड कांस्टेबल रविन्दर कुमार (अभि. सा. 15) द्वारा तारीख 5 मार्च, 2005 को अपराह्न में 9.50 बजे भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 307 के अधीन प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 36/05 (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 15/ए) रजिस्ट्रीकृत की गई । इसी बीच श्री रछपाल सिंह की उसे पहुंची क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई और डा. जगदीश सिंह (अभि. सा. 5) द्वारा चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ए) जारी किया गया । अभियुक्त घटनास्थल से भागने के पश्चात् उन्हें पहुंची क्षतियों के लिए आपराधिक मामला रजिस्ट्रीकृत करने के लिए पुलिस थाने गए । अभियुक्तों को भी चिकित्सीय परीक्षण के लिए दौलतपुर स्थित अस्पताल भेजा गया, जहां डा. जगदीश सिंह (अभि. सा. 5) द्वारा

अभियुक्त दिलबाग सिंह का परीक्षण किया गया और उसने चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र (प्रदर्श डीए) जारी किया । अभि. सा. 5 द्वारा अभियुक्त उषा देवी का भी चिकित्सीय परीक्षण किया गया और उसने चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र (प्रदर्श डीबी) जारी किया । उप निरीक्षक, ओम प्रकाश (अभि. सा. 21) जो पुलिस थाना, गंगरेट में अपर थाना भारसाधक अधिकारी के रूप में तैनात था, ने अन्वेषण का कार्यभार संभाला और तारीख 6 मार्च, 2005 को सुबह घटनास्थल पर गया । उसने श्री रणदीप कुमार (अभि. सा. 6) की मौजूदगी में ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 2/ए द्वारा रक्तरंजित मिट्टी के नमूने बरामद किए । मृतक के साइकिल को भी बरामदगी ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 21/सी द्वारा कब्जे में लिया गया । अभियुक्तों को उसी दिन गिरफ्तार किया गया और अभियुक्त दिलबाग सिंह की रक्तरंजित कमीज को भी अभिग्रहण ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 21/डी द्वारा कब्जे में लिया गया । श्री बछित्तर सिंह (अभि. सा. 8) और श्री ओम प्रकाश (अभि. सा. 9) की मौजूदगी में अभियुक्त दिलबाग सिंह ने प्रकटन कथन (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ए) किया जिसे अन्वेषक अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया और आक्रामक आयुध अर्थात् कस्सी (प्रदर्श पी-1) को भी बरामद कराया जिसे ज्ञापन प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/बी द्वारा कब्जे में लिया गया । पुलिस ने वह स्कूटर भी कब्जे में लिया जिस पर अभियुक्त घटनास्थल से भागे थे । पुलिस द्वारा घटनास्थल के फोटोग्राफ भी लिए गए । राजस्व पदधारियों से घटनास्थल का सीमांकन भी कराया गया और आवश्यक राजस्व अभिलेख तैयार कराया और कब्जे में लिया । डा. विपिन शर्मा (अभि. सा. 11) द्वारा मृतक के शव की मरणोत्तर परीक्षा की गई और पुलिस द्वारा रिपोर्ट (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 11/ए और 11/बी) कब्जे में ली गईं । पुलिस द्वारा रक्तरंजित मिट्टी के नमूने और सुसंगत व्यक्तियों के वस्त्रों को रसायनिक विश्लेषण के लिए न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला, जुंगा भेजे गए और राय (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 11/सी, 11/डी और 11/ई) अभिलेख पर ली गई । अन्वेषण से अभिकथित अपराध में अभियुक्तों की सह-अपराधिता प्रकट हुई और परिणामस्वरूप विचारण के लिए न्यायालय में चालान प्रस्तुत किया गया ।

3. अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने के लिए आरोपित किया गया, जिसके लिए उन्होंने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया ।

4. अभियोजन पक्ष ने अपने पक्षकथन को साबित करने के लिए कुल 22 साक्षियों की परीक्षा कराई और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के भी कथन अभिलिखित किए गए जिनमें उन्होंने निम्नलिखित एक जैसी प्रतिरक्षा ली :–

> "मैं निर्दोष हूं और मुझे इस मामले में मिथ्या रूप से आलिप्त किया गया है क्योंकि घटना के दिन सायंकाल में मृतक रछपाल सिंह मेरे मकान की बाड़ को कस्सी से उखेड़ रहा था और जब मैंने विरोध किया तो रछपाल सिंह ने दरांती से वार किया और इसी बीच उषा देवी वहां आई और रछपाल सिंह द्वारा उस पर भी दरांती से वार किया गया और हाथापाई के दौरान रछपाल सिंह कस्सी पर गिर पड़ा और उसे क्षतियां पहुंचीं और क्योंकि यह सब मेरे जीवन और संपत्ति की संरक्षा करते हुए घटित हुआ था ।"

5. अभियुक्तों ने साक्ष्य पेश करने की इच्छा जाहिर की और अवसर दिए जाने के बावजूद प्रतिरक्षा में किसी साक्षी की परीक्षा नहीं कराई गई और इसलिए विचारण न्यायालय ने प्रतिरक्षा के साक्ष्य को बंद कर दिया ।

6. विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर की सामग्री का मूल्यांकन करने के पश्चात् अभियुक्त दिलबाग सिंह को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध कारित करने के लिए दोषसिद्ध किया और आजीवन कारावास भोगने तथा 10,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का और साधारण कारावास भोगने का दंडादेश दिया । तथापि, विचारण न्यायालय ने उक्त अभियुक्त और अभियुक्त उषा देवी के विरुद्ध षड्यंत्र के अपराध को साबित नहीं पाया और उसे किसी दशा में हत्या के आरोप से दोषमुक्त कर दिया ।

7. अभियुक्त दिलबाग सिंह ने सेशन मामला सं. 10/05 आरबीटी 66/05/05, सेशन विचारण सं. 9/06 में अपर सेशन न्यायाधीश, त्वरित निपटान न्यायालय, ऊना द्वारा तारीख 27 जुलाई, 2006 के आक्षेपित निर्णय को चुनौती देते हुए 2006 की अपील सं. 306 फाइल की है । इसी निर्णय को चुनौती देते हुए राज्य ने भी अभियुक्त उषा देवी की दोषमुक्ति के विरुद्ध 2006 की दांडिक अपील सं. 370 फाइल की है ।

8. हमने राज्य की ओर से श्री आर. के. शर्मा, विद्वान् ज्येष्ठ अपर महाधिवक्ता, जिनकी श्री जे. एस. गुलेरिया, सहायक महाधिवक्ता द्वारा सम्यक् रूप से सहायता की गई, के साथ-साथ अभियुक्तों की ओर से

विद्वान् काउंसेल श्री अजय कोछर को भी सुना । हमने अभियोजन पक्ष द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए साक्षियों के परिसाक्ष्यों और अन्य दस्तावेजी साक्ष्य की बारीकी से परीक्षा की । अभिलेख की बारीकी से परीक्षा करने पर हमारा यह सुविचारित मत है कि हस्तक्षेप करने के लिए कतई कोई मामला नहीं बनता है । हमारा यह निष्कर्ष है कि विचारण न्यायालय द्वारा सुनाया गया निर्णय सुविचारित है और अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य (दस्तावेजी और प्रत्यक्षदर्शी) के पूर्ण और उचित मूल्यांकन पर आधारित है । इसमें न तो कोई अवैधता/कमी है और न ही कोई अनुचितता है ।

9. अभियुक्त दिलबाग सिंह को अपने सगे भाई श्री रछपाल सिंह की हत्या करने के लिए दोषी ठहराया गया है । घटना मृतक की पत्नी श्रीमती कांता देवी (अभि. सा. 1) और पुत्री कुमारी सपना (अभि. सा. 3) के साथ-साथ अभियुक्त दिलबाग सिंह और मृतक के एक अन्य भाई मोहिन्दर सिंह (अभि. सा. 2) द्वारा देखी गई थी । अभियोजन पक्ष ने मृतक के केवल घनिष्ठ नातेदारों की परीक्षा कराई है । प्रतिरक्षा पक्ष के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि प्रस्तुत तथ्यों और परिस्थितियों में इस तथ्य पर विचार करते हुए कि दो भाइयों अर्थात् सिद्धदोष और मृतक के बीच पूर्ववर्ती विवाद था, अभियोजन पक्ष को अन्यथा हितबद्ध व्यक्तियों के परिसाक्ष्यों की संपुष्टि के लिए स्वतंत्र साक्षियों की परीक्षा करानी चाहिए थी । तात्विक अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्यों की बारीकी से परीक्षा करने के पश्चात् हमारा यह निष्कर्ष है कि उनके परिसाक्ष्य अन्यथा विश्वासोत्पादक हैं और किसी संपुष्टि की आवश्यकता नहीं है । विधि का ऐसा कोई नियम नहीं है कि प्रत्येक मामले में हितबद्ध साक्षी के परिसाक्ष्य की संपुष्टि करने की आवश्यकता हो, इतना ही नहीं वर्तमान मामले में जहां हमने यह पाया है कि घटनास्थल पर सिद्धदोष की मौजूदगी कतई विवादग्रस्त नहीं है । अभियुक्त दिलबाग सिंह के अनुसार, मृतक कस्सी से उसके मकान की बाड़ उखेड़ रहा था और उसके इस कृत्य का उसके द्वारा विरोध किया गया । उस समय मृतक श्री रछपाल सिंह ने अपनी दरांती से वार किया । जब उषा देवी घटनास्थल पर आई, तो उस पर भी दरांती से वार किया किया । हाथापाई के दौरान श्री रछपाल सिंह कस्सी, जो निकट ही पड़ी हुई थी, पर गिर पड़ा और उसे क्षतियां पहुंचीं । अभियुक्त दिलबाग सिंह के अनुसार, उसने अपने जीवन और संपत्ति की संरक्षा के लिए आत्म-प्रतिरक्षा में कार्य किया था ।

10. अब प्राइवेट प्रतिरक्षा के संबंध में विधि सुस्थिर है । विधि की यह

स्थापित स्थिति है कि प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार तभी प्रारंभ हो जाता है जैसे ही शरीर के प्रति युक्तियुक्त संकट की आशंका उद्भूत होती है । संकट आसन्न, तात्कालिक और वास्तविक होना चाहिए । इस अधिकार का विस्तार उतनी अपहानि से अधिक अपहानि करने तक नहीं है जितनी प्रतिरक्षा के प्रयोजन के लिए करनी आवश्यक है । इस अधिकार का प्रयोग तब न्यायोचित होगा यदि ऐसे अधिकार का प्रयोग कर रहे व्यक्ति को यह युक्तियुक्त आशंका हो कि हमले का परिणाम मृत्यु या घोर उपहति होगा । यह पता लगाने के लिए कि प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार उपलब्ध है या नहीं, अभियुक्त को पहुंची क्षतियां, उसकी सुरक्षा के प्रति संकट की आसन्नता, अभियुक्त द्वारा पहुंचाई गई क्षति और यह परिस्थिति कि क्या अभियुक्त के पास लोक प्राधिकारी की सहायता प्राप्त करने का अवसर था, ऐसी सुसंगत बातें हैं जिन पर विचार किया जाना चाहिए ।

11. **दर्शन सिंह** बनाम **पंजाब राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने प्रतिरक्षा के अधिकार से संबंधित निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित किए हैं :–

(i) आत्म-सुरक्षा आधारभूत मानवीय नैसर्गिक प्रवृत्ति है और सभी सभ्य देशों के दंड न्यायशास्त्र द्वारा सम्यक्तः मान्यताप्राप्त है । सभी स्वतंत्र, लोकतांत्रिक और सभ्य देश प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार को कतिपय युक्तियुक्त सीमाओं के भीतर मान्यता प्रदान करते हैं ।

(ii) प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार केवल ऐसे व्यक्ति को उपलब्ध है जो किसी आसन्न, न कि स्वयं सृजित, संकट को टालने के लिए अचानक आवश्यकता में घिर जाता है ।

(iii) मात्र युक्तियुक्त आशंका आत्म-प्रतिरक्षा के अधिकार को प्रवर्तन में लाने के लिए पर्याप्त है । दूसरे शब्दों में, यह आवश्यक नहीं है कि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करने के लिए वास्तविक अपराध किया जाए । इतना ही पर्याप्त है यदि अभियुक्त को यह आशंका हो कि ऐसे किसी अपराध का किया जाना अनुध्यात है और यह कारित होना संभाव्य है यदि प्राइवेट प्रतिरक्षा का प्रयोग नहीं किया जाता ।

(iv) प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार युक्तियुक्त आशंका उद्भूत

---

[1] (2010) 2 एस. एस. सी. 333.

होते ही प्रारंभ हो जाता है और यह ऐसी आशंका बने रहने तक जारी रहता है ।

(v) किसी व्यक्ति से हमले के अधीन कदम-दर-कदम किसी ठीक-ठीक अंकगणितीय रीति से अपनी प्रतिरक्षा निर्धारित करने की प्रत्याशा करना अस्वाभाविक है ।

(vi) शरीर या संपत्ति की संरक्षा के लिए प्राइवेट प्रतिरक्षा में अभियुक्त द्वारा प्रयुक्त बल पूर्णतः अननुपातिक या आवश्यकता से अत्यधिक नहीं होना चाहिए ।

(vii) यह सुस्थिर है कि चाहे अभियुक्त आत्म प्रतिरक्षा का अभिवाक् नहीं करे, फिर भी यदि अभिलेख की सामग्री से यह उद्भूत होता है तो न्यायालय विचार करने के लिए स्वतंत्र है ।

(viii) अभियुक्त के लिए प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के अस्तित्व को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करना आवश्यक नहीं है ।

(ix) दंड संहिता प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार केवल तभी प्रदत्त करती है जब वह विधिविरुद्ध या सदोष कार्य अपराध हो ।

(x) ऐसा कोई व्यक्ति जो अपने जीवन या अंग के खोने के आसन्न या युक्तियुक्त खतरे में है, आत्म प्रतिरक्षा का प्रयोग करते हुए तब अपने हमलावर को मृत्यु तक कोई अपहानि पहुंचा सकता है जब या तो हमला करने का प्रयत्न किया गया हो या प्रत्यक्षतः धमकी दी गई हो ।

12. इसके अतिरिक्त, **सिकंदर सिंह और अन्य** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"24. भारतीय दंड संहिता की धारा 96 में यह उपबंध है कि कोई बात अपराध नहीं है, जो प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में की जाती है । धारा में 'प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार' अभिव्यक्ति परिभाषित नहीं है । धारा में मात्र यह उपदर्शित है कि कोई बात अपराध नहीं है, जो ऐसे अधिकार के प्रयोग में की जाती है । इसी प्रकार, भारतीय दंड संहिता की धारा 97 किसी व्यक्ति के न केवल स्वयं अपने या किसी अन्य व्यक्ति के शरीर की प्रतिरक्षा करने के

[1] (2010) 7 एस. एस. सी. 477.

अधिकार को मान्यता देती है, अपितु यह कतिपय विनिर्दिष्ट अपराधों, अर्थात् चोरी, लूट, रिष्टि और आपराधिक अतिचार के विरुद्ध, चाहे अपनी या किसी अन्य व्यक्ति की, संपत्ति की संरक्षा को भी समाविष्ट करती है ।

25. भारतीय दंड संहिता की धारा 99 उन अपवादों को अधिकथित करती है जिनके अध्यधीन आत्म प्रतिरक्षा का नियम है । भारतीय दंड संहिता की धारा 100 में अन्य बातों के साथ-साथ यह उपबंध है कि शरीर की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का विस्तार भारतीय दंड संहिता की धारा 99 में वर्णित निर्बन्धनों के अधीन रहते हुए स्वेच्छया मृत्यु कारित करने तक है, यदि वह अपराध, जिसके कारण उस अधिकार के प्रयोग का अवसर आता है, ऐसा हमला है जिससे युक्तियुक्त रूप से यह आशंका कारित हो कि अन्यथा ऐसे हमले का परिणाम घोर उपहति होगा । दूसरे शब्दों में, यदि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का दावा करने वाले व्यक्ति को ऐसे हमलावर, जिसके द्वारा उसे घोर उपहति कारित करने की युक्तियुक्त आशंका हो सकती है, से सामना करना पड़े, तो वह अपने बचाव में हमलावर की मृत्यु कारित करने के लिए स्वतंत्र होगा ।

26. प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार की व्याप्ति और विस्तार को आगे भारतीय दंड संहिता की धारा 102 और 105 में स्पष्ट किया गया है, जिनमें क्रमशः शरीर और संपत्ति के प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रारंभ और बने रहने के बारे में उपबंध हैं । इन उपबंधों के अनुसार, यह अधिकार उसी क्षण प्रारंभ हो जाता है, जब अपराध करने के प्रयत्न या धमकी से शरीर के संकट की युक्तियुक्त आशंका पैदा होती है, चाहे वह अपराध किया न गया हो, किंतु युक्तियुक्त आशंका की समाप्ति के बाद नहीं । यह अधिकार तब तक बना रहता है जब तक शरीर के संकट की ऐसी आशंका बनी रहती है । (जय देव **बनाम** पंजाब राज्य, ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 612 वाला मामला देखें)

27. सारतः, प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार एक रक्षात्मक अधिकार है । यह न तो आक्रमण करने और न ही प्रतिशोध लेने का अधिकार है । जहां संकट की कोई आशंका नहीं हो, वहां प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार नहीं है । प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार केवल उस व्यक्ति को उपलब्ध है जो किसी आसन्न, न कि स्वयं सृजित,

संकट को टालने के लिए अचानक आवश्यकता में घिर जाता है । आवश्यकता तात्कालिक, वास्तविक या स्पष्ट होनी चाहिए । (लक्ष्मण साहू **बनाम** उड़ीसा राज्य, ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 83 वाला मामला देखें)

28. इस प्रकार, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के सिद्धांत का अंतर्निहित मूलभूत नियम यह है कि जब किसी व्यक्ति या उसकी संपत्ति पर कोई संकट आ पड़ता है और राज्य की मशीनरी से आसानी से सहायता उपलब्ध नहीं है, तो वह व्यक्ति स्वयं और अपनी संपत्ति की संरक्षा करने का हकदार है । ऐसा होने पर, आवश्यक उप-सिद्धांत यह है कि हिंसा, जिसका नागरिक स्वयं और अपनी संपत्ति को बचाने के लिए प्रयोग करने का हकदार है, उस क्षति से असम्यक् रूप से अननुपातिक नहीं होनी चाहिए जिसे रोका जाना ईप्सित है या जिसकी युक्तियुक्त आशंका है और यह उसके विधिसम्मत प्रयोजन से अधिक नहीं होनी चाहिए ।

29. तथापि, हम यह कहने के लिए भी तत्पर हैं कि कोई संकटग्रस्त व्यक्ति संकट को टालने और स्वयं की या अपनी संपत्ति की रक्षा करने के लिए तत्क्षण जो साधन और बल अपनाता है, उसे स्वर्ण तुला में नहीं तोला जा सकता । ऐसे आदर्श मानदंड, जो यह अवधारित करने के लिए लागू किए जा सकें कि संकटग्रस्त व्यक्ति द्वारा अपनाया गया साधन और बल उचित था या नहीं, अधिकथित करना न तो संभव है और न ही प्रज्ञापूर्ण है । ऐसे किसी प्रश्न का उत्तर अनेक बातों पर निर्भर करता है, जैसे घटनास्थल पर की प्रबल परिस्थितियां, सुसंगत समय पर संकटग्रस्त व्यक्ति की भावनाएं, उस पर किए गए हमले की प्रकृति पर निर्भर करते हुए भ्रम और उत्तेजना आदि । तो भी, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग कदापि प्रतिशोधात्मक या विद्वेषपूर्ण नहीं हो सकता । ऐसा करना प्राइवेट प्रतिरक्षा की संकल्पना के विरुद्ध होगा । [धर्म **बनाम** हरियाणा राज्य, जे. टी. 2007 (1) एस. सी. 299 = (2007) 15 एस. सी. सी. 241]

30. यह सुस्थिर है कि आत्म प्रतिरक्षा के अभिवाक् को सिद्ध करने का भार अभियुक्त पर होता है किंतु यह वैसा भार नहीं है जैसा अभियोजन पक्ष पर होता है । जबकि अभियोजन पक्ष के लिए अपने पक्षकथन को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित करना अपेक्षित होता है,

अभियुक्त के लिए आत्म प्रतिरक्षा के अभिवाक् को पूर्णतया सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है और वह उस अभिवाक् के समर्थन में भार का निर्वहन अभिलेख पर की सामग्री के आधार पर अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता को दर्शित करते हुए कर सकता है ।

31. विद्या सिंह **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य [(1971) 3 एस. सी. सी. 244] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि आत्म प्रतिरक्षा के अधिकार का संकीर्णता से अर्थान्वयन नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि यह एक बहुत ही मूल्यवान अधिकार है और इसका सामाजिक प्रयोजन है । (मुंशी राम और अन्य **बनाम** दिल्ली प्रशासन, ए. आई. आर. 1968 एस. सी. 702, गुजरात राज्य **बनाम** बाई फातिमा और एक अन्य, ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 1478 और सलीम जिया **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य, ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 391 वाले मामले भी देखें)

32. यह पता लगाने के लिए कि क्या प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार उपलब्ध था या नहीं, अभियुक्त के पास इसके प्रयोग का अवसर और उसे पहुंची क्षतियां, उसकी सुरक्षा के संकट की आसन्नता, अभियुक्त द्वारा कारित की गई क्षतियां और परिस्थितियां कि क्या अभियुक्त के पास लोक प्राधिकारियों की सहायता प्राप्त करने का समय था या नहीं, सुसंगत बातें हैं, फिर भी क्षतियों की संख्या को, यह अवधारित करने के लिए कि आक्रामक कौन था, सदैव सुरक्षित मानदंड के रूप में विचार में नहीं लिया जा सकता है । इस बात को विधि की इस अविशेषित प्रतिपादना के रूप में भी अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि जब भी अभियुक्त के शरीर पर क्षतियां पाई जाएं, अवश्य ही आवश्यक रूप से यह उपधारणा की जाए कि अभियुक्त ने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए क्षतियां कारित की थीं । प्रतिरक्षा पक्ष को यह भी सिद्ध करना चाहिए कि अभियुक्त को पहुंची ऐसी क्षति प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के वृत्तांत को अधिसंभाव्य बनाती है ।"

13. हाल ही में **रंजीथम** बनाम **बासवराज और अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने पूर्वोक्त सिद्धांत को दोहराते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि :–

---

[1] (2012) 1 एस. सी. सी. 414.

"यह सुस्थिर है कि प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार को स्वर्ण तुला में नहीं तोला जा सकता और न्यायालय द्वारा किसी प्रस्तुत मामले में शारीरिक क्षति के बिना भी ऐसे अधिकार को मान्य ठहराया जा सकता है बशर्ते किसी व्यक्ति को जीवन के संकट की या घोर उपहति की युक्तियुक्त आशंका हो । इसके अतिरिक्त, अभियुक्त पर प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करने से संबंधित सबूत का भार उतना भारी नहीं है जितना कि अभियुक्त के दोष को साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष पर होता है तथा अभियुक्त के लिए प्रतिरक्षा को अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता की कसौटी पर साबित करना पर्याप्त है । इसके अतिरिक्त, क्या किसी व्यक्ति ने अपने प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रयोग करते हुए विधिसम्मत रूप से कार्य किया था या नहीं, प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर अवधारित किए जाने वाला एक तथ्य का प्रश्न है । किसी प्रस्तुत मामले में न्यायालय ऐसे अभिवाक् पर विचार करने के लिए स्वतंत्र है चाहे अभियुक्त ने ऐसा अभिवाक् न किया हो, किंतु आस-पास की परिस्थितियों से यह सिद्ध होता हो कि उसे यह अधिकार उपलब्ध था । अपने अभिवाक् को साबित करने का भार अभियुक्त पर होता है । इस भार का निर्वहन उस अभिवाक् के पक्ष में अधिसंभाव्यताओं की प्रबलता को दर्शित करके किया जाता है । अभियुक्त को पहुंची क्षतियां, उसकी सुरक्षा के संकट की आसन्नता, अभियुक्त द्वारा कारित की गई क्षतियां और क्या अभियुक्त के पास लोक प्राधिकारियों की सहायता प्राप्त करने का अवसर था या नहीं, ऐसी सुसंगत बातें हैं, जिन्हें विचार में लिया जाना चाहिए ।"

14. हम विधि के पूर्वोक्त स्थिर सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए साक्षियों के परिसाक्ष्यों की परीक्षा करेंगे । हमने यह पाया है कि सिद्धदोष ने इस तथ्य को विवादग्रस्त नहीं किया है कि वह स्वयं प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाने गया था और डा. जगदीश सिंह (अभि. सा. 5) द्वारा उसका परीक्षण किया गया था । डाक्टर ने यह राय व्यक्त की है कि अभियुक्त दिलबाग सिंह को बाईं तर्जनी अंगुली के सतही भाग के अंतिम सिरे पर वृत्तीय शुण्डाकार में 2-1/2 इंच माप का विछिन्न घाव था और ताजा निकला हुआ रक्त मौजूद था । उसका परीक्षण तारीख 5 मार्च, 2005 को अपराह्न में 9.30 बजे किया गया था । यह महत्वपूर्ण है कि उसकी शरीर पर कोई अन्य क्षति नहीं पाई गई थी । डाक्टर ने यह भी

परामर्श दिया था कि उक्त अभियुक्त के बाएं हाथ का एक्स-रे कराया जाए । किंतु डाक्टर का इस आशय का अविवादित परिसाक्ष्य है कि अभियुक्त दिलबाग सिंह अपना आरंभिक परीक्षण कराने के पश्चात् मुड़कर वापस नहीं आया । डाक्टर ने यह भी स्पष्ट किया है कि उक्त अभियुक्त के शरीर पर पाई गई क्षति गिरने से भी पहुंच सकती थी, यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को क्षतियां पहुंचाने के पश्चात् भाग रहा हो । अभियुक्त उषा देवी का भी डाक्टर द्वारा परीक्षण किया गया था और उसकी बाईं भुजा पर केवल खरोंच के चिह्न पाए गए थे । उसने बाएं श्रोणीय भाग और कटि प्रदेश पर हल्के दर्द की भी शिकायत की थी । निर्विवाद रूप से अभियुक्तों को पहुंची क्षति न तो घातक थी और न ही प्राणघातक तथा न ही ये क्षति दरांती से कारित की गई, जैसा कि अभियुक्त द्वारा अभिकथन किया गया है, कही जा सकती है । यह दर्शित नहीं किया जा सका कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों के प्रति अऋजुता से कार्य किया था । पुलिस अपराध के स्थल से कोई दरांती बरामद नहीं कर सकी थी ।

15. पुलिस द्वारा अभियुक्तों को तारीख 6 मार्च, 2005 को ही गिरफ्तार कर लिया गया था । उनका यह पक्षकथन नहीं है कि पुलिस ने उनकी शिकायत पर अऋजुता से कार्य किया था या उन्हें गिरफ्तार करने से पूर्व आवश्यक अन्वेषण नहीं किया था । यहां तक कि अपनी गिरफ्तारी के पश्चात् या विचारण के दौरान भी उन्होंने इस बाबत ऐसी कोई शिकायत नहीं की थी । ऐसी क्या बात थी कि दिलबाग सिंह ने और आगे चिकित्सीय परीक्षण के लिए अपने आप को उपलब्ध नहीं कराया, ऐसा विलंबित प्रश्न है जो विचारण के दौरान उसकी ओर से अनुत्तरित और अस्पष्टीकृत रहा, बहरहाल उसने प्राइवेट प्रतिरक्षा में कार्य किया था । उसने घटनास्थल पर अपनी मौजूदगी को स्वीकार किया है । मृतक उसका सगा भाई था । उसके अनुसार, मृतक उसके मकान के सामने बनाई गई बाड़ को हटा रहा था जिसका उसके द्वारा विरोध किया गया । अभियुक्त के अनुसार यह घटना तारीख 5 मार्च, 2005 की सायंकाल में घटित हुई थी । अभियुक्त का यह पक्षकथन नहीं है कि मृतक या उसके परिवार के किसी सदस्य ने धमकी दी थी, अभित्रस्त किया था या अभियुक्त दिलबाग सिंह को शारीरिक क्षति या उपहति कारित करने के आशय से आयुधों से लैस होकर आए थे । अभियुक्त दिलबाग सिंह सुबह होने तक इंतजार कर सकता था और फिर मामले को पंचायत के सदस्यों के ध्यान में लाता । इतना ही नहीं, तथ्य यह है कि उसने स्वयं साक्षियों से यह बात कही थी

कि चारदिवारी से संबंधित विवाद को उसके द्वारा पंचायत के समक्ष उठाया गया था । इस बाबत वह स्वयं पुलिस को मामले की रिपोर्ट कर सकता था । पुलिस पदधारियों (साक्षी) से ऐसी बात नहीं कही गई थी कि उन्होंने अऋजु रीति से अन्वेषण किया था और उस दरांती को, जिससे मृतक द्वारा उस पर अभिकथित रूप से हमला किया गया था, जानबूझकर बरामद नहीं किया गया था और उसे अभिलेख पर नहीं लाया गया । इस अभियुक्त का यह भी पक्षकथन नहीं है कि भूतकाल में मृतक या उसके परिवार के सदस्यों ने कभी उसे या उसके परिवार के सदस्यों को अभित्रस्त किया था, धमकी दी थी या हमला किया था । मृतक या उसके परिवार के सदस्यों की ओर से कदापि किसी हमले का प्रयत्न नहीं किया गया था । इसलिए हमारा यह निष्कर्ष है कि प्रस्तुत मामले में के अभियुक्त ने आत्म प्रतिरक्षा का मिथ्या अभिवाक् किया है जिसे किसी भी स्थिति में स्पष्ट नहीं किया गया है और इसे प्रथमदृष्ट्या सिद्ध नहीं किया गया है । हम यह भी अवेक्षा कर सकते हैं कि अभियुक्त द्वारा ली गई प्रतिरक्षा को भी अधिसंभाव्य नहीं कहा जा सकता है और इसका कारण यह है कि सिद्धदोष-अभियुक्त को पहुंची क्षतियां उसके शरीर के मुख्य अंगों पर नहीं थीं और न ही उसे अपने परिवार के जीवन के प्रति कोई आशंका या धमकी थी ।

16. डा. जगदीश सिंह (अभि. सा. 5) ने मृतक के शरीर पर निम्नलिखित क्षतियां पाई थीं :–

> "1. दाएं अनुकपालीय-पार्श्विक भाग पर 6 इंच x 1 इंच आकार का त्वचा तक गहरा स्पष्ट पार्श्व घाव । ताजा रक्तस्राव मौजूद । अंतिम सिरे पर घाव का वेधन । शिरोस्थि पिलपिली ।
>
> 2. बाएं अनुकपालीय-पार्श्विक भाग पर त्वचा तक गहरे एक अन्य स्पष्ट पार्श्व घाव के साथ-साथ कुछ बेढोल पार्श्व घाव । ताजा रक्तस्राव मौजूद । शिरोस्थि 5 इंच x 2 इंच की लंबाई और चौड़ाई में पिलपिली ।
>
> 3. निचले ओष्ठ का श्लेष्मामल अन्दर से शोधयुक्त तथा रक्तस्राव मौजूद ।
>
> 4. संपूर्ण चेहरे पर तथा दोनों आंखों के चारों ओर सूजन और कालश मौजूद ।
>
> 5. बाईं आंख के बाएं मध्य भाग पर त्वचा तक गहरा 2 इंच x 1/2 इंच का बेढोल घाव । ताजा रक्तस्राव मौजूद ।

6. दाएं घुटने पर दाएं घुटने के जोड़ के ठीक नीचे 1 इंच x 1/2 इंच का बेढोल घाव ।"

17. डाक्टर (अभि. सा. 5) के अनुसार क्षति सं. 1 और 2 किसी धारदार आयुध से कारित की गई थीं और शेष क्षतियां कुंद आयुध से कारित की गई थीं । अभियुक्त का यह पक्षकथन नहीं है कि मृतक बार-बार आक्रामक आयुध अर्थात् कस्सी पर गिरा था जिसके परिणामस्वरूप उसे पूर्वोक्त क्षतियां पहुंची थीं । इस बाबत डाक्टर (अभि. सा. 5) का निम्नलिखित अखंडनीय परिसाक्ष्य भी है जिससे अभियुक्त दिलबाग सिंह के परिसाक्ष्य की असत्यता स्पष्ट रूप से सिद्ध होती है :–

"रछपाल सिंह के चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र, पी. डब्ल्यू. 5/ए, में वर्णित क्षति सं. 1 और 2 किसी व्यक्ति के ऐसी वस्तु, जिसका फलक ऊपर की ओर हो विशिष्ट रूप से कस्सी प्रदर्श पी-1, जो मैंने आज न्यायालय में देखी, पर गिरने मात्र से कारित नहीं हो सकती है ।

.....

रछपाल सिंह के चिकित्सा विधिक प्रमाणपत्र, प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 5/ए में वर्णित क्षति सं. 1 और 2 कस्सी प्रदर्श पी-1 जैसी वस्तु, जिसका फलक ऊपर की ओर हो, पर बलपूर्वक बार-बार गिरने से कारित हो सकती है ।"

18. शिकायतकर्ता पक्ष के परिसाक्ष्यों पर विचार करने से पूर्व हम पहले शेष साक्षियों के परिसाक्ष्य पर विचार करेंगे । हमने यह पाया है कि इन साक्षियों में से अधिकांश साक्षियों की तात्विक पहलुओं पर प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है ।

19. अभि. सा. 21 के अनुसार, अभियुक्त ने प्रकटन कथन (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 8/ए) किया, जिसके आधार पर श्री बछित्तर सिंह (अभि. सा. 8) और श्री ओम प्रकाश (अभि. सा. 9) की मौजूदगी में आक्रामक आयुध की बरामदगी की गई । हमने इस पहलू पर इन साक्षियों के परिसाक्ष्यों की बारीकी से परीक्षा की और यह पाया कि वह समय, जब अभियुक्त से परिप्रश्न किए गए थे, से संबंधित फेरफार के सिवाय अधिक विरोधाभास नहीं है और समय से संबंधित छुट-पुट विरोधाभास भी महत्वहीन और अतात्विक हैं । अभि. सा. 8 ने यह कथन किया है कि परिप्रश्न पूर्वाह्न में लगभग 11.30 बजे किए गए थे, जबकि अभि. सा. 9 का कथन यह है कि परिप्रश्न पूर्वाह्न में 9.00 बजे किए गए थे । अभियुक्त की प्रतिरक्षा की

पृष्ठभूमि में, इन साक्षियों के अन्यथा विश्वासोत्पादक परिसाक्ष्यों को अविश्वसनीय ठहराने के लिए समय के बारे में भिन्नता महत्वपूर्ण नहीं है ।

20. सिद्धदोष की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा यह भी दलील दी गई कि स्थल नक्शे (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 21/ए) से वह सही स्थान प्रकट नहीं होता है जहां घटना वस्तुतः घटित हुई थी । किंतु हमारे सुविचारित मत में, यह बात अभियुक्त दिलबाग सिंह की दोषमुक्ति के लिए एक आधार और अभियोजन पक्षकथन के लिए घातक नहीं हो सकती है । अधिक से अधिक यह अन्वेषक अधिकारी द्वारा दोषपूर्ण ढंग से स्थल नक्शा बनाने का मामला है । अन्यथा भी, हमने यह पाया है कि इस तथ्य को अन्वेषक अधिकारी, जिसने स्थल नक्शा (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 21/ए) बनाया था, के समक्ष प्रतिपरीक्षा में स्पष्ट रूप से उस रीति में नहीं उठाया गया था जिस रीति में हमारे समक्ष इसकी दलील दी गई है ।

21. हमने यह पाया है कि अभियोजन पक्ष ने रिपोर्टों (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 11/सी, 11/डी और 11/ई) के माध्यम से यह प्रमाणित किया है कि घटनास्थल से उठाई गई मिट्टी का नमूना आक्रामक आयुध पर से उठाई गई मिट्टी से मेल खाता है । हमने यह भी पाया है कि मृतक के वस्त्रों पर पाया गया रक्त अर्थात् रक्त-समूह-बी आक्रामक आयुध पर पाए गए रक्त के नमूने से मेल खाता है ।

22. डा. विपिन शर्मा (अभि. सा. 11) द्वारा की गई मरणोत्तर परीक्षा की रिपोर्ट के अनुसार, मृतक की मृत्यु उसे पहुंची घातक क्षतियों के कारण हुई थी । विसरा, जिसका विशेषज्ञों द्वारा परीक्षण किया गया था, से भी यह सिद्ध होता है कि कोई विषैला पदार्थ नहीं पाया गया था । मृतक के शरीर पर की क्षतियां उस आयुध से कारित की जा सकती थीं जिसे डाक्टर को भी दिखाया गया था और उसने स्पष्ट रूप से यह राय व्यक्त की थी कि मृतक की मृत्यु उसे जो क्षतियां पहुंची थीं उनके कारण हुई थी ।

23. प्रधान, कृष्ण राणा (अभि. सा. 4) ने यह कथन किया है कि उसे मृतक की पुत्री द्वारा यह सूचित किया गया था कि उसके पिता की एक झगड़े में मृत्यु हो गई है जो दिलबाग सिंह के साथ हुआ था । इस साक्षी के अनुसार, मृतक की पुत्री ने उसे यह बताया था कि दिलबाग सिंह ने उसके पिता की हत्या की है । इस साक्षी का यह बयान अखंडनीय रहा है क्योंकि इस साक्षी के इस परिसाक्ष्य की कतई कोई प्रतिपरीक्षा नहीं की गई है । इस साक्षी के परिसाक्ष्य से किसी भी स्थिति में तथाकथित नातेदार

साक्षियों के बयान की संपुष्टि होती है ।

24. श्रीमती कांता देवी (अभि. सा. 1) ने न्यायालय में अभियोजन के वृत्तांत का पूरी तरह से वर्णन किया । उसने यह कथन किया कि तारीख 5 मार्च, 2005 को सवेरे अभियुक्त दिलबाग सिंह और अभियुक्त उषा देवी का उसके पति के साथ झगड़ा हुआ था । मुद्दा गोबर के ढेर को लेकर था जिस पर किसी व्यक्ति द्वारा कतिपय ईंधन की लकड़ियां फेंक दी गई थीं । श्री दिलबाग सिंह ने उस स्थल पर एक पंचायत बुलाई थी और ईंधन की लकड़ियों को हटाया गया था । उस समय उसका पति घर पर नहीं था क्योंकि वह चारा लेने गया हुआ था । सायंकाल में उसने अपने पति की चिल्लाने की आवाज यह पुकारते हुए सुनी कि "हाय मार दीत्ता" । वह तुरंत उस स्थान की ओर गई जहां से ऐसी चिल्लाने की आवाज आ रही थी और अभियुक्त दिलबाग सिंह को एक कस्सी से उसके पति की पिटाई करते हुए देखा । उसके सिर और मुंह पर प्रहार किए गए थे । अभियुक्त उषा देवी ने भी उसके पति की पिटाई की । जब वह सहायता के लिए चिल्लाई तो उसकी पुत्री तथा देवर श्री ओम पाल घटनास्थल पर आए । उसके बाद दोनों अभियुक्त एक स्कूटर पर भाग गए । उसके पति को अस्पताल ले जाने के लिए तुरंत एक यान का प्रबंध किया गया । पुलिस द्वारा अस्पताल में उसका कथन अभिलिखित किया गया जहां उसके पति की मृत्यु हो गई । उसने उस आयुध (प्रदर्श पी-1) की शनाख्त की, जिससे अभियुक्त दिलबाग सिंह द्वारा उसके पति को क्षतियां पहुंचाई गई थीं । हमने पाया है कि न्यायालय में किए गए उसके वृत्तांत में कुछ सुधार है । इस साक्षी का उसके कथन (प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए) से सामना कराया गया था जिसमें गाय के गोबर के ढेर को लेकर हुए किसी झगड़े का कोई जिक्र नहीं है । किंतु फिर भी यह सुधार/अतिरंजना स्वतः इस साक्षी पर विश्वास न करने का आधार नहीं हो सकता है । इस साक्षी ने यह माना है कि स्थल पर पंचायत आई थी और गोबर के ढेर के सामने की बाड़ उखड़ी हुई थी । किंतु उस समय उसका पति वहां मौजूद नहीं था, जैसा कि स्वयं अभियुक्त द्वारा कहा गया है । इस साक्षी ने अपने अविवादित परिसाक्ष्य में यह कथन किया है कि उसने अभियुक्त को पकड़कर बीच-बचाव नहीं किया था, हालांकि वह सहायता के लिए चिल्लाई थी । उसने यह स्पष्ट किया कि उस समय वह अपने पति से पांच फुट की दूरी पर थी । इस साक्षी द्वारा किए गए सुधार/अतिरंजनाएं उन बातों के संबंध में है जो सवेरे घटित हुई थीं न कि उन बातों के संबंध में है जो घटना घटित होने के समय घटित हुई थीं । हम अन्यथा उसके परिसाक्ष्य को पूर्णतः विश्वासोत्पादक और

विश्वसनीय पाते हैं ।

25. श्री मोहिन्दर सिंह (अभि. सा. 2) ने अभि. सा. 1 द्वारा वर्णित किए गए वृत्तांत की संपुष्टि की है । हमारा यह भी निष्कर्ष है कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 1 के वृत्तांत की संपुष्टि अभि. सा. 3 द्वारा की गई है । इन साक्षियों के परिसाक्ष्यों की सावधानी से संवीक्षा करने पर यह प्रकट होता है कि किसी भी स्थिति में मृतक आक्रामक नहीं था । केवल इस कारण कि घटना अभियुक्त के मकान के निकट घटित हुई थी या यह कि मृतक अभिकथित रूप से अभियुक्त द्वारा लगाई गई बाड़ को हटाने की कोशिश कर रहा था, किसी भी रीति में यह अर्थ नहीं है कि मृतक आक्रामक था । इसके विपरीत, यह सिद्ध होता है कि मृतक सायंकाल में पशुओं के लिए चारा लेकर घर वापस आ रहा था । उसका साइकिल घटनास्थल से चारे के साथ, जो साइकिल से बंधा हुआ था, बरामद किया गया था । घटनास्थल पर मौजूद साक्षियों ने घटना घटित होने के बारे में एक स्वर में एक-दूसरे के परिसाक्ष्यों की संपुष्टि की है । हमने उनके परिसाक्ष्यों को विश्वसनीय और भरोसेमंद तथा उनके बयानों को सटीक, अविचल और विश्वासप्रद पाया है ।

26. विद्वेष और दुश्मनी एक दुधारी तलवार है । अभियुक्त दिलबाग सिंह ने तात्विक अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्य के माध्यम से यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि उसके और मृतक के बीच पूर्वतर विद्वेष और भू-विवाद था । किंतु यह तथ्य भी स्वतः मृतक को अपहानि कारित करने या साक्षियों को अविश्वसनीय ठहराने का कारण नहीं हो सकता है । यह ऐसा मामला नहीं है जहां झगड़ा हुआ और सिद्धदोष ने यकायक मृतक को क्षतियां कारित कीं । अभियुक्त दिलबाग सिंह ने किसी पर्याप्त प्रकोपन या हेतु के बिना मृतक के मुख्य अंगों पर तेज धारदार आयुध से प्रहार किया । उसने एक प्रहार नहीं अपितु कई प्रहार किए । वह इन प्रहारों के परिणाम से भिज्ञ था । यह सिद्ध होता है कि सुसंगत समय पर मृतक अकेला था । अभियुक्त ने कस्सी से अपने ही भाई पर कई प्रहार किए थे और इसलिए हमारे सुविचारित मत में, अभियुक्त यहां तक कि दंडादेश के संबंध में भी किसी सहानुभूति या रियायत, जैसा कि प्रतिरक्षा पक्ष के विद्वान् काउंसेल द्वारा आग्रह किया गया है, का पात्र नहीं है ।

27. अतः हम अभियुक्त दिलबाग सिंह की सह-अपराधिता के संबंध में निचले न्यायालय द्वारा दिए गए आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाते हैं । उसे विधि के स्थिर सिद्धांतों के अनुसार ठीक ही

दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है ।

28. राज्य द्वारा फाइल की गई अपील पर विचार करने पर हमारा यह निष्कर्ष है कि यह नहीं कहा जा सकता है कि मृतक की हत्या करने के लिए दोनों अभियुक्तों के सामान्य आशय का आरोप अभियोजन साक्षियों के परिसाक्ष्यों से पूर्णतः सिद्ध होता है । हमारे सुविचारित मत में, विचारण न्यायालय ने ठीक ही यह अभिनिर्धारित किया है कि घटनास्थल पर अभियुक्त उषा देवी की मात्र मौजूदगी से स्वतः उक्त सामान्य आशय का निष्कर्ष नहीं निकलता है । विचारण न्यायालय ने ठीक ही यह मत व्यक्त किया है कि:–

> "अभिलेख पर के साक्ष्य से केवल यह सिद्ध होता है कि अभियुक्त द्वारा मृतक रछपाल सिंह पर कस्सी, प्रदर्श पी-1, से उसके सिर और शरीर के अन्य अंगों पर प्रहार किए गए थे जिनके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हुई । यह दर्शित करने के लिए कुछ नहीं है कि अभियुक्त दिलबाग सिंह को प्रश्नगत कस्सी उषा देवी द्वारा दी गई थी । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए भी कुछ नहीं है कि उषा देवी घटनास्थल पर कस्सी अपने मकान या गौशाला से लाई थी । यह दर्शित करने के लिए कोई सटीक साक्ष्य नहीं है कि उसने भी मृतक की पिटाई की थी या अपराध कारित करने में सक्रिय भाग लिया था । बल्कि, साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि वह एक बार अपने पति को, जब वह कस्सी से रछपाल सिंह पर हमला करने के लिए तैयार था, घटनास्थल से वापस ले गई थी । इस तथ्य को अभि. सा. 3 कुमारी सपना द्वारा स्वीकार किया गया है । अभि. सा. 2 मोहिन्दर सिंह का बयान भी इस संबंध में सुसंगत है । उसने अपनी मुख्य परीक्षा में यह कथन किया कि उषा देवी ने रछपाल सिंह को रोका और फिर दिलबाग सिंह ने उसके नाक पर कस्सी से प्रहार किया । किंतु पुलिस द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन में ऐसा कोई तथ्य नहीं है और प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा उसका सामना न्यायालय में किए गए कथन और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए कथन से कराया गया, जिससे स्पष्ट रूप से यह साबित होता है कि उसने इस तथ्य की बाबत सुधार किया है कि उषा देवी ने रछपाल सिंह को रोका था । इस कथन में सुधार होने के कारण इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता है और यह बात भी अभियुक्त उषा

देवी के पक्ष में जाती है । जहां तक अभि. सा. 1 का संबंध है, उषा देवी के संबंध में उसका बयान उसके पति की मृत्यु हो जाने के कारण ईर्ष्या के कारण दिए जाने की संभाव्यता से इनकार नहीं किया जा सकता है । परिणामतः, उषा देवी को प्रश्नगत अपराध के लिए दायी नहीं ठहराया जा सकता है ।"

29. हमारे सुविचारित मत में, विचारण न्यायालय ने पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत की गई सामग्री का उचित रूप से मूल्यांकन किया है और इसके आधार पर न्यायसंगत निष्कर्ष निकाले हैं । अभियुक्त दिलबाग सिंह की दोषसिद्धि और दंडादेश तथा अभियुक्त उषा देवी की दोषमुक्ति प्रत्यक्षदर्शी और दस्तावेजी साक्ष्य के उचित मूल्यांकन पर आधारित है । हमारे सुविचारित मत में, अभियोजन पक्ष अभियुक्त दिलबाग सिंह की दोषिता को स्पष्ट, सटीक, संगत और विश्वसनीय साक्ष्य प्रस्तुत करके युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध करने में समर्थ रहा है । हमें निचले न्यायालय द्वारा अभिलिखित किए गए निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं पड़ता है ।

30. दोनों अपीलें खारिज की जाती हैं । अभियुक्त उषा देवी द्वारा प्रस्तुत किए गए जमानत बंधपत्र, यदि कोई हो, उन्मोचित किए जाते हैं ।

अपीलें खारिज की गई ।

जस.

संसद् के अधिनियम

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963
(1963 का अधिनियम संख्यांक 47)[1]

[13 दिसम्बर, 1963]

कतिपय प्रकारों के विनिर्दिष्ट अनुतोष से संबंधित विधि परिभाषित और संशोधित करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो : –

भाग 1

प्रारम्भिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ – (1) यह अधिनियम विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख[2] को प्रवृत्त होगा जिसे केन्द्रीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) ''बाध्यता'' के अंतर्गत विधि द्वारा प्रवर्तनीय हर एक कर्तव्य आता है ;

(ख) ''व्यवस्थापन'' से [भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का 39) द्वारा यथापरिभाषित बिल अथवा क्रोड़पत्र से भिन्न] ऐसी लिखत अभिप्रेत है जिसके द्वारा जंगम या स्थावर सम्पत्ति में के क्रमवर्ती हितों के गन्तव्य अथवा न्यागमन को व्ययनित किया जाता है या उसका व्ययनित किया जाना कारित होता है;

---

[1] अधिसूचना सं. का. आ. 648 (अ.), तारीख 24-8-1984, भारत का राजपत्र, असाधारण, भाग 2, खण्ड 3(ii) द्वारा इस अधिनियम को सिक्किम राज्य में प्रवृत्त किया जाएगा ।

[2] 1 मार्च, 1964, देखिए अधिसूचना सं. का. आ. 189, तारीख 13-1-1964, भारत का राजपत्र, भाग 2, खण्ड 3(ii), पृ. 214.

(ग) ''न्यास'' का वही अर्थ है जो भारतीय न्यास अधिनियम, 1882 (1882 का 2) की धारा 3 में है और उस अधिनियम के अध्याय 9 के अर्थ के भीतर आने वाली न्यास प्रकृति की बाध्यता इसके अन्तर्गत आती है ;

(घ) ''न्यासी'' के अन्तर्गत हर ऐसा व्यक्ति आता है जो सम्पत्ति को न्यासतः धारण किए हुए है ;

(ङ) ऐसे अन्य सब शब्दों और पदों के, जो एतस्मिन् प्रयुक्त हैं किन्तु परिभाषित नहीं हैं, और भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) में परिभाषित हैं, वे ही अर्थ होंगे जो उस अधिनियम में उन्हें क्रमशः समनुदिष्ट हैं ।

3. **व्यावृत्तियां** – एतस्मिन् अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, इस अधिनियम की किसी भी बात से यह नहीं समझा जाएगा कि वह –

(क) किसी व्यक्ति को, विनिर्दिष्ट पालन से भिन्न अनुतोष के किसी ऐसे अधिकार से, जो वह किसी संविदा के अधीन रखता हो, वंचित करती है; अथवा

(ख) दस्तावेजों पर भारतीय रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का 16) के प्रवर्तन पर प्रभाव डालती है ।

4. **विनिर्दिष्ट अनुतोष का व्यक्तिगत सिविल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ही अनुदत्त किया जाना, दण्ड विधियों के प्रवर्तन के लिए नहीं** – विनिर्दिष्ट अनुतोष, व्यक्तिगत सिविल अधिकारों के प्रवर्तन के प्रयोजन के लिए ही अनुदत्त किया जा सकता है, न कि किसी दण्ड विधि के प्रवर्तन के प्रयोजन मात्र के लिए ।

भाग 2

विनिर्दिष्ट अनुतोष

अध्याय 1

सम्पत्ति के कब्जे का प्रत्युद्धरण

5. **विनिर्दिष्ट स्थावर सम्पत्ति का प्रत्युद्धरण** – जो व्यक्ति, किसी विनिर्दिष्ट स्थावर सम्पत्ति के कब्जे का हकदार है, वह सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) द्वारा उपबन्धित प्रकार से उसका प्रत्युद्धरण कर सकेगा ।

6. **स्थावर सम्पत्ति से बेकब्जा किए गए व्यक्ति द्वारा वाद** – (1)

यदि कोई व्यक्ति अपनी सम्पत्ति के बिना स्थावर सम्पत्ति से विधि के सम्यक् अनुक्रम से अन्यथा बेकब्जा कर दिया जाए, तो वह अथवा उससे व्युत्पन्न अधिकार द्वारा दावा करने वाला कोई भी व्यक्ति, किसी अन्य ऐसे हक के होते हुए भी जो ऐसे वाद में खड़ा किया जा सके, उसका कब्जा वाद द्वारा प्रत्युद्धृत कर सकेगा ।

(2) इस धारा के अधीन कोई भी वाद –

(क) बेकब्जा किए जाने की तारीख से छह मास के अवसान के पश्चात्; अथवा

(ख) सरकार के विरुद्ध,

नहीं लाया जाएगा ।

(3) इस धारा के अधीन संस्थित किसी भी वाद में पारित किसी भी आदेश या डिक्री से न तो कोई अपील होगी, और न ऐसे किसी आदेश या डिक्री का कोई पुनर्विलोकन ही अनुज्ञात होगा ।

(4) इस धारा की कोई भी बात किसी भी व्यक्ति को ऐसी सम्पत्ति पर अपना हक स्थापित करने के लिए वाद लाने से और उसके कब्जे का प्रत्युद्धरण करने से वर्जित नहीं करेगी ।

7. **विनिर्दिष्ट जंगम सम्पत्ति का प्रत्युद्धरण** – जो व्यक्ति किसी विनिर्दिष्ट जंगम सम्पत्ति के कब्जे का हकदार हो, वह सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) द्वारा उपबन्धित प्रकार से उसका प्रत्युद्धरण कर सकेगा ।

स्पष्टीकरण 1 – न्यासी ऐसी जंगम सम्पत्ति के कब्जे के लिए इस धारा के अधीन वाद ला सकेगा, जिसमें के फायदाप्रद हित का वह व्यक्ति हकदार हो जिसके लिए वह न्यासी है ।

स्पष्टीकरण 2 – जंगम संपत्ति पर वर्तमान कब्जे का कोई विशेष या अस्थायी अधिकार इस धारा के अधीन वाद के समर्थन के लिए पर्याप्त है ।

8. **जिस व्यक्ति का कब्जा है किन्तु स्वामी के नाते नहीं है, उसका उन व्यक्तियों को, जो अव्यवहित कब्जे के हकदार हैं परिदत्त करने का दायित्व** – कोई भी व्यक्ति जिसका जंगम सम्पत्ति की किसी भी विशिष्ट वस्तु पर कब्जा अथवा नियंत्रण है जिसका वह स्वामी नहीं है, वह उसके अव्यवहित कब्जे के हकदार व्यक्ति को निम्नलिखित दशाओं में से किसी में

भी उसका विनिर्दिष्टतः परिदान करने के लिए विवश किया जा सकेगा –

(क) जबकि दावाकृत वस्तु प्रतिवादी द्वारा वादी के अभिकर्ता अथवा न्यासी के रूप में धारित हो;

(ख) जबकि दावाकृत वस्तु की हानि के लिए धन के रूप में प्रतिकर वादी को यथायोग्य अनुतोष न पहुंचाता हो;

(ग) जबकि उसकी हानि से कारित वास्तविक नुकसान का अभिनिश्चय करना अत्यन्त कठिन हो;

(घ) जबकि दावाकृत वस्तु का कब्जा वादी के पास से सदोषतः अन्तरित कराया गया हो ।

स्पष्टीकरण – जब तक और जहां तक कि तत्प्रतिकूल साबित न कर दिया जाए, इस धारा के खंड (ख) या खंड (ग) के अधीन दावाकृत जंगम सम्पत्ति की किसी वस्तु के बारे में न्यायालय, यथास्थिति, यह उपधारित करेगा कि –

(क) दावाकृत वस्तु की हानि के लिए धन के रूप में प्रतिकर वादी को यथायोग्य अनुतोष न पहुंचाएगा;

(ख) उसकी हानि द्वारा कारित वास्तविक नुकसान का अभिनिश्चय करना अत्यन्त कठिन होगा ।

अध्याय 2
संविदाओं का विनिर्दिष्ट पालन

9. **संविदा पर आधारित अनुतोष के वादों में प्रतिरक्षाएं** – एतस्मिन् अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, जहां कि किसी संविदा के बारे में किसी अनुतोष का दावा इस अध्याय के अधीन किया जाए, वहां वह व्यक्ति, जिसके विरुद्ध उस अनुतोष का दावा किया जाए, किसी भी ऐसे आधार का अभिवचन प्रतिरक्षा के तौर पर कर सकेगा जो उसे संविदाओं से संबंधित किसी भी विधि के अधीन उपलभ्य हो ।

संविदाएं जिनका विनिर्दिष्टतः प्रवर्तन कराया जा सकता है

10. **दशाएं जिनमें संविदा का विनिर्दिष्ट पालन प्रवर्तनीय है** – इस अध्याय में अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, किसी भी संविदा का विनिर्दिष्ट पालन न्यायालय के विवेकानुसार प्रवर्तित कराया जा सकेगा –

(क) जबकि उस कार्य का, जिसके करने का करार हुआ है

अपालन द्वारा कारित वास्तविक नुकसान का अभिनिश्चय करने के लिए कोई मानक विद्यमान न हो; अथवा

(ख) जबकि वह कार्य, जिसके करने का करार हुआ है ऐसा हो कि उसके अपालन के लिए धन के रूप में प्रतिकर यथायोग्य अनुतोष न पहुंचाता हो ।

स्पष्टीकरण – जब तक और जहां तक कि तत्प्रतिकूल साबित न कर दिया जाए न्यायालय यह उपधारित करेगा कि –

(i) स्थावर सम्पत्ति के अन्तरण की संविदा के भंग का धन के रूप में प्रतिकर द्वारा यथायोग्य अनुतोष नहीं दिया जा सकता; तथा

(ii) जंगम सम्पत्ति के अन्तरण की संविदा के भंग का इस प्रकार अनुतोष दिया जा सकता है सिवाय निम्नलिखित दशाओं के –

(क) जहां कि सम्पत्ति मामूली वाणिज्य-वस्तु न हो अथवा वादी के लिए विशेष मूल्य या हित की हो अथवा ऐसा माल हो जो बाजार में सुगमता से अभिप्राप्य नहीं हो;

(ख) जहां कि सम्पत्ति प्रतिवादी द्वारा वादी के अभिकर्ता या न्यासी के रूप में धारित हो ।

11. **दशाएं जिनमें न्यासों से संसक्त संविदाओं का विनिर्दिष्ट पालन प्रवर्तनीय है** – (1) इस अधिनियम में अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, किसी संविदा का विनिर्दिष्ट पालन, न्यायालय के विवेकानुसार प्रवर्तित कराया जा सकेगा जबकि वह कार्य, जिसके करने का करार हुआ है, किसी न्यास के पूर्णतः या भागतः पालन में हो ।

(2) न्यासी द्वारा अपनी शक्तियों के बाहर या न्यास के भंग में की गई संविदा का विनिर्दिष्टतः प्रवर्तन नहीं कराया जा सकता ।

12. **संविदा के भाग का विनिर्दिष्ट पालन** – (1) इस धारा में एतस्मिन् पश्चात्, अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, न्यायालय किसी संविदा के किसी भाग के विनिर्दिष्ट पालन का निदेश नहीं देगा ।

(2) जहां कि किसी संविदा का कोई पक्षकार उसमें के अपने पूरे भाग का पालन करने में असमर्थ हो किन्तु वह भाग, जिसे अपालित रह जाना ही है, पूरे भाग के अनुपात में मूल्य में बहुत कम हो और उसके लिए धन के रूप में प्रतिकर हो सकता हो, वहां दोनों में से किसी भी पक्षकार के

वाद लाने पर न्यायालय संविदा में से उतने भर के विनिर्दिष्ट पालन का निदेश दे सकेगा जितने का पालन किया जा सकता हो और उतने के लिए धन के रूप में प्रतिकर दिलवा सकेगा ।

(3) जहां कि संविदा का कोई पक्षकार उसमें के अपने पूरे भाग का पालन करने में असमर्थ हो और वह भाग जिसे अपालित रह जाना ही है या तो –

(क) सम्पूर्ण का प्रचुर भाग हो यद्यपि उसका धन के रूप में प्रतिकर हो सकता हो; या

(ख) उसका धन के रूप में प्रतिकर न हो सकता हो,

वहां वह विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री अभिप्राप्त करने का हकदार नहीं है किन्तु न्यायालय दूसरे पक्षकार के वाद लाने पर व्यतिक्रम करने वाले पक्षकार को यह निदेश दे सकेगा कि संविदा के अपने उतने भाग का, जितने का वह पालन कर सकता है, विनिर्दिष्टतः पालन करे, यदि दूसरा पक्षकार –

(i) खंड (क) के अधीन आने वाली दशा में, पूरी संविदा के लिए करारित प्रतिफल उसमें से उस भाग के प्रतिफल को, जिसे अपालित रह जाना ही है घटाकर दे दे या दे चुका हो और, खंड (ख) के अधीन आने वाली दशा में पूरी संविदा के लिए प्रतिफल, कोई कमी किए बिना [1][दे दे या दे चुका हो]; तथा

(ii) दोनों दशाओं में से हर एक में संविदा के शेष भाग के पालन कराने के सब दावों को तथा शेष की ऊनता के लिए या प्रतिवादी के व्यतिक्रम द्वारा उसे हुई हानि या नुकसान के लिए प्रतिकर पाने के समस्त अधिकार को त्याग दे ।

(4) जबकि संविदा का कोई भाग जिसका यदि उसे अलग से ले तो विनिर्दिष्टतः पालन किया जा सकता है और किया जाना चाहिए, उसी संविदा के ऐसे अन्य भाग से पृथक् और स्वतन्त्र आधार पर खड़ा हो जिसका विनिर्दिष्टतः पालन नहीं किया जा सकता या नहीं किया जाना चाहिए, वहां न्यायालय पूर्वकथित भाग के विनिर्दिष्ट पालन का निदेश दे सकेगा ।

स्पष्टीकरण – संविदा का कोई पक्षकार उसमें के अपने पूरे भाग का

---

[1] 1964 के अधिनियम सं. 52 की धारा 3 तथा अनुसूची 2 द्वारा प्रतिस्थापित ।

पालन करने में इस धारा के प्रयोजनों के लिए असमर्थ माना जाएगा, यदि उसकी विषय-वस्तु का कोई प्रभाग जो संविदा की तारीख को अस्तित्व में था उसके पालन के समय अस्तित्व में न रह जाए ।

13. **हक न रखने वाले या अपूर्ण हक वाले व्यक्ति के विरुद्ध क्रेता या पट्टेदार के अधिकार** – (1) जहां कि किसी स्थावर सम्पत्ति को ऐसा व्यक्ति, जिसका उसमें कोई हक न हो अथवा केवल अपूर्ण हक हो, बेचने की अथवा पट्टे पर देने की संविदा करे वहां क्रेता या पट्टेदार के इस अध्याय के अन्य उपबन्धों के अध्यधीन निम्नलिखित अधिकार हैं, अर्थात : –

(क) यदि विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता में संविदा के पश्चात् सम्पत्ति में कोई हित अर्जित किया हो तो क्रेता या पट्टेदार ऐसे हित में से संविदा की पूर्ति करने के लिए उसे विवश कर सकेगा;

(ख) जहां कि हक को विधिमान्य बनाने के लिए अन्य व्यक्तियों की सहमति आवश्यक हो और विक्रेता या पट्टाकर्ता की प्रार्थना पर वे सहमति देने को आबद्ध हों, वहां क्रेता या पट्टेदार उसको ऐसी सहमति उपाप्त करने के लिए विवश कर सकेगा और जबकि हक को विधिमान्य बनाने के लिए अन्य व्यक्तियों द्वारा हस्तान्तरण आवश्यक हो और विक्रेता या पट्टाकर्ता की प्रार्थना पर वे हस्तान्तरण करने को आबद्ध हों तब क्रेता या पट्टेदार उसको ऐसा हस्तान्तरण उपाप्त करने के लिए विवश कर सकेगा;

(ग) जहां कि विक्रेता विल्लंगम रहित सम्पत्ति को बेचने की प्रव्यंजना करे किन्तु सम्पत्ति क्रय-धन से अनधिक राशि के लिए बंधकित है और विक्रेता को वास्तव में केवल मोचन का ही अधिकार हो वहां क्रेता उसे उस बंधक का मोचन कराने के लिए और बंधकदार से विधिमान्य उन्मोचन और जहां आवश्यक हो, वहां हस्तान्तरण भी अभिप्राप्त करने के लिए विवश कर सकेगा;

(घ) जहां कि विक्रेता या पट्टाकर्ता संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद लाए और हक के अभाव या अपूर्ण हक के आधार पर वाद खारिज हो जाए वहां प्रतिवादी को अपने निक्षेप की, यदि कोई हो, उस पर ब्याज सहित वापसी का और वाद के अपने खर्चे पाने का अधिकार है तथा ऐसे निक्षेप, ब्याज और खर्चों के लिए उस हित पर यदि कोई हो, धारणाधिकार है जो उस सम्पत्ति में विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता का हो जो संविदा की विषय-वस्तु है ।

(2) उपधारा (1) के उपबन्ध जंगम सम्पत्ति के विक्रय या भाड़े की संविदाओं को भी, यावत्शाक्य, लागू होंगे ।

संविदाएं जिनका विनिर्दिष्टतः प्रवर्तन नहीं कराया जा सकता है

14. **संविदाएं जो विनिर्दिष्टतः प्रवर्तनीय नहीं हैं** – (1) निम्नलिखित संविदाएं विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित नहीं कराई जा सकती, अर्थात् –

(क) वह संविदा जिसके अपालन के लिए धन के रूप में प्रतिकर यथायोग्य अनुतोष हो;

(ख) वह संविदा जिसमें सूक्ष्म या बहुत से ब्यौरे हों अथवा जो पक्षकारों की वैयक्तिक अर्हताओं या स्वेच्छा पर इतनी आश्रित हो अथवा अन्यथा अपनी प्रकृति के कारण ऐसी हो कि न्यायालय उसके तात्विक निबन्धनों के विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन न करा सकता हो;

(ग) वह संविदा जो अपनी प्रकृति से ही पर्यवसेय हो;

(घ) वह संविदा जिसके पालन में ऐसा सतत्-कर्तव्य का पालन अन्तर्वलित है जिसका न्यायालय पर्यवेक्षण न कर सके ।

(2) माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 (1940 का 10) में यथा उपबंधित के सिवाय वर्तमान या भावी मतभेदों को माध्यस्थम् के लिए निर्देशन करने की कोई भी संविदा विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित नहीं की जाएगी; किन्तु यदि कोई व्यक्ति जिसने (ऐसे माध्यस्थम्-करार से, जिसे उक्त अधिनियम के उपबन्ध लागू होते हों, भिन्न) ऐसी संविदा की हो और उसका पालन करने से इनकार कर दिया हो किसी ऐसे विषय के बारे में वाद लाए, जिसके निर्देशन की उसने संविदा की है, तो ऐसी संविदा का अस्तित्व उस वाद का वर्जन करेगा ।

(3) उपधारा (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ग) या खण्ड (घ) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी न्यायालय निम्नलिखित दशाओं में विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन करा सकेगा –

(क) जहां कि वाद ऐसी संविदा के प्रवर्तन के लिए हो, जो –

(i) किसी ऐसे ऋण के प्रतिसंदाय को प्रतिभूत करने के लिए, जिसे उधार लेने वाला तत्क्षण प्रतिसंदत्त करने को रजामन्द न हो, बन्धक निष्पादन करने या कोई अन्य प्रतिभूति देने के लिए हो :

परन्तु जहां कि उधार का केवल एक भाग दिया गया हो,

वहां यह तब जब कि उधार देने वाला संविदा के निबन्धनों के अनुसार उधार का अवशिष्ट भाग देने को रजामन्द हो, अथवा

(ii) किसी कम्पनी के कोई डिबेंचर लेने और उनके निमित्त संदाय करने के लिए हो;

(ख) जहां कि वाद –

(i) भागीदारी के प्ररूपिक विलेख के निष्पादन के लिए हो, यदि भागीदारी के कारबार का चलाना पक्षकारों ने प्रारम्भ कर दिया हो; अथवा

(ii) किसी फर्म के भागीदार के अंश के क्रय के लिए हो;

(ग) जहां कि वाद ऐसी संविदा का प्रवर्तन कराने के लिए हो जो कोई निर्माण तैयार करने के लिए या भूमि पर किसी अन्य संकर्म के निष्पादन के लिए है :

परन्तु यह तब जब कि निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाएं, अर्थात् –

(i) निर्माण या अन्य संकर्म संविदा में पर्याप्त रूप से प्रमित शब्दों में ऐसे वर्णित हों कि न्यायालय निर्माण या संकर्म की ठीक-ठीक प्रकृति का अवधारण करने में समर्थ हो सके;

(ii) संविदा के पालन में वादी का सारभूत हित हो और हित भी ऐसी प्रकृति का हो कि धन के रूप में प्रतिकर उसके अपालन के लिए यथायोग्य अनुतोष न हो; तथा

(iii) संविदा के अनुसरण में प्रतिवादी ने उस समस्त भूमि का या उसके किसी भाग का कब्जा अभिप्राप्त कर लिया हो जिस पर निर्माण तैयार या अन्य संकर्म निष्पादित किया जाना है ।

वे व्यक्ति जिनके पक्ष में या विरुद्ध संविदाएं विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित की जा सकेंगी

15. **कौन विनिर्दिष्ट पालन अभिप्राप्त कर सकेगा** – इस अध्याय में अन्यथा उपबंधित के सिवाय, किसी संविदा का विनिर्दिष्ट पालन अभिप्राप्त किया जा सकेगा –

(क) उसमें के किसी भी पक्षकार द्वारा;

(ख) उसमें के किसी भी पक्षकार के हित-प्रतिनिधि या मालिक द्वारा :

परन्तु जहां कि ऐसे पक्षकार की विद्वता, कौशल, शोधन क्षमता या कोई वैयक्तिक गुण संविदा का तात्विक अंग हो या जहां कि संविदा उपबन्ध करती हो कि उसका हित समनुदेशित नहीं किया जाएगा, वहां उसका हित-प्रतिनिधि या उसका मालिक संविदा का विनिर्दिष्ट पालन कराने का हकदार न होगा, जब तक कि ऐसे पक्षकार ने संविदा के अपने भाग का विनिर्दिष्ट पालन पहले ही न कर दिया हो या उसके हित-प्रतिनिधि या उसके मालिक द्वारा किया गया उसका पालन दूसरे पक्षकार द्वारा पहले ही प्रतिगृहीत न किया जा चुका हो;

(ग) जहां कि संविदा विवाह पर का व्यवस्थापन या एक ही कुटुम्ब के सदस्यों के बीच संदेहपूर्ण अधिकारों का कोई समझौता हो, वहां तद्धीन फायदा पाने के हकदार किसी भी व्यक्ति द्वारा;

(घ) जहां कि किसी आजीवन अभिधारी द्वारा किसी शक्ति के सम्यक् प्रयोग में कोई संविदा की गई हो, वहां शेष भोगी द्वारा;

(ङ) सकब्जा उत्तरभोगी द्वारा, जहां कि करार ऐसी प्रसंविदा हो जो उसके हक पूर्वाधिकारी के साथ की गई हो और उत्तरभोगी उस प्रसंविदा के फायदे का हकदार हो;

(च) शेष के उत्तरभोगी द्वारा, जहां कि करार वैसी प्रसंविदा हो, और उत्तरभोगी उसके फायदे का हकदार हो, उसके भंग के कारण तात्विक क्षति उठाएगा;

(छ) जबकि किसी कम्पनी ने संविदा की हो और तत्पश्चात् वह किसी दूसरी कम्पनी में समामेलित हो गई हो, तब उस समामेलन से उद्भूत नई कम्पनी द्वारा;

(ज) जबकि किसी कम्पनी के सम्प्रवर्तकों ने उसके निगमन के पहले कम्पनी के प्रयोजनों के लिए कोई संविदा की हो और संविदा निगमन के निबन्धनों द्वारा समर्थित हो तब उस कम्पनी द्वारा :

परन्तु यह तब जबकि कम्पनी ने संविदा को प्रतिगृहीत कर लिया हो और संविदा के दूसरे पक्षकार को ऐसा प्रतिग्रहण संसूचित कर दिया हो ।

16. **अनुतोष का वैयक्तिक वर्जन** – संविदा का विनिर्दिष्ट पालन किसी ऐसे व्यक्ति के पक्ष में नहीं कराया जा सकता –

(क) जो उसके भंग के लिए प्रतिकर वसूल करने का हकदार न हो; अथवा

(ख) जो संविदा के किसी मर्मभूत निबन्धन का, जिसका उसकी ओर से पालन किया जाना शेष हो, पालन करने में असमर्थ हो गया हो, या उसका अतिक्रमण करे, या संविदा के प्रति कपट करे अथवा जानबूझकर ऐसा कार्य करे जो संविदा द्वारा स्थापित किए जाने के लिए आशयित संबंध का विसंवादी या ध्वंसक हो; अथवा

(ग) जो यह प्रकथन करने और साबित करने में असफल रहे कि उसके संविदा के उन निबन्धनों से भिन्न जिनका पालन प्रतिवादी द्वारा निवारित अथवा अधित्यक्त किया गया है, ऐसे मर्मभूत निबन्धनों का जो उसके द्वारा पालन किए जाने हैं, उसने पालन कर दिया है अथवा पालन करने के लिए वह सदा तैयार और रजामन्द रहा है ।

स्पष्टीकरण – खण्ड (ग) के प्रयोजनों के लिए –

(i) जहां कि संविदा में धन का संदाय अन्तर्वलित हो, वादी के लिए आवश्यक नहीं है कि वह प्रतिवादी को किसी धन का वास्तव में निविदान करे या न्यायालय में निक्षेप करे सिवाय जबकि न्यायालय ने ऐसा करने का निदेश दिया हो;

(ii) वादी को यह प्रकथन करना होगा कि वह संविदा का उसके शुद्ध अर्थान्वयन के अनुसार पालन कर चुका, अथवा पालन करने को तैयार और रजामन्द है ।

17. **किसी सम्पत्ति के बेचने या पट्टे पर देने की ऐसे व्यक्ति द्वारा संविदा जिसका उस पर कोई हक न हो, विनिर्दिष्टतः प्रवर्तनीय नहीं है** – (1) किसी स्थावर सम्पत्ति के बेचने अथवा पट्टे पर देने की संविदा ऐसे विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता के पक्ष में विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित नहीं कराई जा सकती –

(क) जिसने यह जानते हुए कि उस सम्पत्ति पर उसका हक नहीं है, उसे बेचने की या पट्टे पर देने की संविदा की हो;

(ख) जिसने यद्यपि इस विश्वास के साथ संविदा की थी कि सम्पत्ति पर उसका अच्छा हक है, तथापि जो विक्रय के या पट्टे के पूरा करने के लिए पक्षकारों या न्यायालय द्वारा नियत किए गए समय पर क्रेता या पट्टेदार को युक्तियुक्त शंका से रहित हक नहीं दे सकता ।

(2) उपधारा (1) के उपबन्ध, जंगम सम्पत्ति के विक्रय या अविक्रय

की संविदाओं को भी यावत्शक्य लागू होंगे ।

18. **फेरफार किए बिना अप्रवर्तन** – जहां कि वादी ऐसी किसी लिखित संविदा का विनिर्दिष्ट पालन कराना चाहता है, जिसमें फेरफार होना प्रतिवादी अभिकथित करता है, वहां वादी, ऐसे अभिकथित फेरफार के बिना ईप्सित पालन निम्नलिखित दशाओं में, अभिप्राप्त नहीं कर सकता, अर्थात् :–

(क) जहां कि ऐसी लिखित संविदा जिसका पालन ईप्सित है, कपट, तथ्य की भूल अथवा दुर्व्यपदेशन के कारण, अपने निबन्धनों और प्रभाव में उससे भिन्न हो जिसका पक्षकारों ने करार किया था अथवा जिसमें पक्षकारों के बीच करार किए गए वे सारे निबन्धन अन्तर्विष्ट न हों जिनके आधार पर प्रतिवादी ने संविदा की थी;

(ख) जहां कि पक्षकारों का उद्देश्य ऐसा कोई विधिक परिणाम पैदा करना था जो यह संविदा, जैसी वह विरचित की गई है, पैदा करने के लिए परिकल्पित न हों;

(ग) जहां कि संविदा के निष्पादन के पश्चात् पक्षकारों ने उसके निबन्धनों में फेरफार कर दिया हो ।

19. **पक्षकारों के और उनसे व्युत्पन्न पश्चात्वर्ती हक के अधीन दावा करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध अनुतोष** – इस अध्याय द्वारा यथा उपबन्धित के सिवाय संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन निम्नलिखित के विरुद्ध कराया जा सकेगा –

(क) उसमें का कोई पक्षकार;

(ख) ऐसे मूल्यार्थ अन्तरिती के सिवाय, जिसने अपना धन सद्भावपूर्वक तथा मूल संविदा की सूचना के बिना दिया हो, ऐसा कोई दूसरा व्यक्ति, जो उससे व्युत्पन्न ऐसे हक के अधीन दावा कर रहा हो जो संविदा के पश्चात् उद्भूत हुआ हो;

(ग) ऐसा कोई व्यक्ति जो ऐसे हक के अधीन दावा कर रहा हो जो हक, यद्यपि संविदा के पहले का और वादी की जानकारी में था, तथापि प्रतिवादी द्वारा विस्थापित किया जा सकता था;

(घ) जबकि किसी कम्पनी ने कोई संविदा की हो और उसके पश्चात् किसी दूसरी कम्पनी से समामेलित हो गई हो तब ऐसे समामेलन से उद्भूत नई कम्पनी;

(ङ) जबकि किसी कम्पनी के सम्प्रवर्तकों ने उसके निगमन के

पहले कोई संविदा कम्पनी के प्रयोजन के लिए की हो और संविदा ऐसी हो जो निगमन के निबन्धनों द्वारा समर्थित हो, तब वह कम्पनी :

परन्तु यह तब जबकि कम्पनी ने संविदा को प्रतिगृहीत कर लिया हो और संविदा के दूसरे पक्षकार को ऐसा प्रतिग्रहण संसूचित कर दिया हो ।

न्यायालय का विवेकाधिकार और शक्तियां

20. **विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री करने के बारे में विवेकाधिकार** – (1) विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री करने की अधिकारिता वैवेकिक है और न्यायालय ऐसा अनुतोष अनुदत्त करने के लिए आबद्ध नहीं है केवल इस कारण से कि ऐसा करना विधिपूर्ण है किन्तु न्यायालय का यह विवेकाधिकार मनमाना नहीं है वरन् स्वस्थ और युक्तियुक्त, न्यायिक सिद्धांतों द्वारा मार्गदर्शित तथा अपील न्यायालय द्वारा शुद्धिशक्य है ।

(2) निम्नलिखित दशाएं ऐसी हैं जिनमें न्यायालय विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री न करने के अपने विवेकाधिकार का उचिततया प्रयोग कर सकेगा –

(क) जहां कि संविदा के निबन्धन या संविदा करने के समय पक्षकारों का आचरण या अन्य परिस्थितियां, जिनके अधीन संविदा की गई थी, ऐसी हों कि संविदा यद्यपि शून्यकरणीय नहीं है, तथापि वादी को प्रतिवादी के ऊपर अऋजु फायदा देती है; अथवा

(ख) जहां कि संविदा का पालन प्रतिवादी को कुछ ऐसे कष्ट में डाल देगा जिसे वह पहले से कल्पना नहीं कर सका था, और उसका अपालन वादी को वैसे किसी कष्ट में नहीं डालेगा;

(ग) जहां कि प्रतिवादी ने संविदा ऐसी परिस्थितियों के अधीन की हो जिनसे यद्यपि संविदा शून्यकरणीय तो नहीं हो जाती किन्तु उसके विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन असाम्यिक हो जाता है ।

स्पष्टीकरण 1 – प्रतिफल की अपर्याप्तता मात्र या यह तथ्य मात्र कि संविदा प्रतिवादी के लिए दुर्भर या अपनी प्रकृति से ही अदूरदर्शी है, खण्ड (क) के अर्थ के भीतर अऋजु फायदा अथवा खण्ड (ख) के अर्थ के भीतर कष्ट न समझा जाएगा ।

स्पष्टीकरण 2 – यह प्रश्न कि संविदा का पालन खण्ड (ख) के अर्थ के भीतर प्रतिवादी को कष्ट में डाल देगा या नहीं संविदा के समय विद्यमान परिस्थितियों के प्रति निर्देशन से अवधारित किया जाएगा सिवाय उन

दशाओं के जिनमें कि कष्ट संविदा के पश्चात् वादी द्वारा किए गए ऐसे किसी कार्य के परिणामस्वरूप हुआ हो ।

(3) किसी ऐसी दशा में जहां कि वादी ने विनिर्दिष्टतः पालनीय संविदा के परिणामस्वरूप सारवान् कार्य किए हैं या हानियां उठाई हैं वहां न्यायालय विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री करने के विवेकाधिकार का उचिततया प्रयोग कर सकेगा ।

(4) न्यायालय किसी पक्षकार को संविदा का विनिर्दिष्ट पालन कराने से इनकार केवल इस आधार पर नहीं करेगा कि संविदा दूसरे पक्षकार की प्रेरणा पर प्रवर्तनीय नहीं है ।

21. **कतिपय मामलों में प्रतिकर दिलाने की शक्ति** – (1) किसी संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के वाद में वादी, ऐसे पालन के या तो अतिरिक्त या स्थान पर उसके भंग के लिए प्रतिकर का भी दावा कर सकेगा ।

(2) यदि किसी ऐसे वाद में न्यायालय यह विनिश्चय करे कि विनिर्दिष्ट पालन तो अनुदत्त नहीं किया जाना चाहिए किन्तु पक्षकार के बीच ऐसी संविदा है जो प्रतिवादी द्वारा भंग की गई है और वादी उस भंग के लिए प्रतिकर पाने का हकदार है, तो वह उसे तदनुसार वैसा प्रतिकर दिलाएगा ।

(3) यदि किसी ऐसे वाद में, न्यायालय यह विनिश्चय करे कि विनिर्दिष्ट पालन तो अनुदत्त किया जाना चाहिए किन्तु उस मामले में न्याय की तुष्टि के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है और संविदा के भंग के लिए वादी को कुछ प्रतिकर भी दिया जाना चाहिए तो वह तदनुसार उसको ऐसा प्रतिकर दिलाएगा ।

(4) इस धारा के अधीन अधिनिर्णीत किसी प्रतिकर की रकम के अवधारण में न्यायालय, भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) की धारा 73 में विनिर्दिष्ट सिद्धांतों द्वारा मार्गदर्शित होगा ।

(5) इस धारा के अधीन कोई प्रतिकर नहीं दिलाया जाएगा जब तक कि वादी ने उपने वादपत्र में ऐसे प्रतिकर का दावा न किया हो :

परन्तु जहां वादपत्र में वादी ने किसी ऐसे प्रतिकर का दावा न किया हो वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में वादी को वादपत्र में ऐसा प्रतिकर का दावा अन्तर्गत करने के लिए संशोधित करने की अनुज्ञा

ऐसे निबन्धनों पर देगा जैसे न्यायसंगत हों ।

स्पष्टीकरण – यह परिस्थिति कि संविदा विनिर्दिष्ट पालन के अयोग्य हो गई है न्यायालय को इस धारा द्वारा प्रदत्त अधिकारिता के प्रयोग से प्रवारित नहीं करती ।

22. **कब्जा, विभाजन, अग्रिम धन के प्रतिदाय आदि के लिए अनुतोष अनुदत्त करने की शक्ति** – (1) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) में किसी तत्प्रतिकूल बात के अन्तर्विष्ट होते हुए भी, स्थावर सम्पत्ति के अन्तरण की संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का वाद लाने वाला कोई व्यक्ति, समुचित मामले में –

(क) ऐसे पालन के अतिरिक्त सम्पत्ति का कब्जा या विभाजन और पृथक् कब्जा मांग सकेगा; अथवा

(ख) उस दशा में जिसमें कि उसका विनिर्दिष्ट पालन का दावा नामंजूर कर दिया गया हो कोई भी अन्य अनुतोष, जिसका वह हकदार हो और जिसके अन्तर्गत [1][उस द्वारा] दिए गए किसी अग्रिम धन या निक्षेप का प्रतिदाय भी आता है, मांग सकेगा ।

(2) उपधारा (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ख) के अधीन कोई भी अनुतोष न्यायालय द्वारा अनुदत्त नहीं किया जाएगा जब तक कि उसका विनिर्दिष्टतः दावा न किया गया हो :

परन्तु जहां कि वादपत्र में वादी ने किसी ऐसे अनुतोष का दावा न किया हो वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में वादी को वादपत्र में ऐसे अनुतोष का दावा अन्तर्गत करने के लिए संशोधन करने की अनुज्ञा ऐसे निबन्धनों पर देगा जैसे न्यायसंगत हो ।

(3) उपधारा (1) के खण्ड (ख) के अधीन अनुतोष अनुदत्त करने की न्यायालय की शक्ति धारा 21 के अधीन प्रतिकर देने की उसकी शक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगी ।

23. **नुकसानी का परिनिर्धारण विनिर्दिष्ट पालन के लिए वर्जन न होगा** – (1) जिस संविदा का विनिर्दिष्टतः प्रवर्तन अन्यथा उचित हो, यद्यपि उसके भंग की दशा में संदेय रकम के तौर पर कोई राशि उसमें नामित हो और व्यतिक्रम करने वाला पक्षकार उसे देने के लिए रजामन्द हो तथापि, उसका ऐसा प्रवर्तन किया जा सकेगा, यदि न्यायालय का संविदा के

---

[1] 1964 के अधिनियम सं. 52 की धारा 3 तथा अनुसूची 2 द्वारा ''उसको'' के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

निबन्धनों और अन्य विद्यमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए समाधान हो जाए कि वह राशि केवल संविदा के पालन को सुनिश्चित करने के प्रयोजन से ही नामित है, न कि व्यतिक्रम करने वाले पक्षकार को यह विकल्प देने के प्रयोजन से कि वह विनिर्दिष्ट पालन के स्थान पर धन का संदाय कर सके ।

(2) इस धारा के अधीन विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन करते समय, न्यायालय संविदा में ऐसी नामित राशि के संदाय की भी डिक्री नहीं करेगा ।

24. **विनिर्दिष्ट पालन के वाद के खारिज होने के पश्चात् भंग के लिए प्रतिकर के वाद का वर्जन** – किसी संविदा के या उसके किसी भाग के विनिर्दिष्ट पालन के वाद की खारिजी, यथास्थिति, ऐसी संविदा या उसके भाग के भंग के लिए प्रतिकर का वाद लाने के वादी के अधिकार का वर्जन कर देगी किन्तु किसी अन्य ऐसे अनुतोष के लिए वाद लाने के उसके अधिकार का वर्जन नहीं करेगी जिसका वह ऐसे भंग के कारण हकदार हो ।

पंचाटों का प्रवर्तन और व्यवस्थापनों के निष्पादन के लिए निदेश

25. **कतिपय पंचाटों को और व्यवस्थापनों को निष्पादित करने की वसीयती निदेशों को पूर्ववर्ती धाराओं का लागू होना** – इस अध्याय के संविदा विषयक उपबन्ध उन पंचाटों को जिन्हें माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 (1940 का 10) लागू नहीं होता, और बिल या क्रोड़पत्र के ऐसे निदेशों को, जो किसी विशिष्ट व्यवस्थापन को निष्पादित करने के बारे में हो, लागू होंगे ।

अध्याय 3
लिखतों की परिशुद्धि

26. **लिखतें कब परिशोधित की जा सकेंगी** – (1) जबकि पक्षकारों के कपट या पारस्परिक भूल के कारण कोई लिखित संविदा या अन्य लिखत [जो किसी ऐसी कम्पनी के संगम-अनुच्छेद न हों, जिसे कम्पनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) लागू होता हो] उनके वास्तविक आशय को अभिव्यक्त नहीं करती, तब –

(क) दोनों में से कोई पक्षकार या उसका हित प्रतिनिधि लिखत को परिशोधित कराने का वाद संस्थित कर सकेगा; अथवा

(ख) वादी किसी ऐसे वाद में, जिसमें लिखत के अधीन उद्भूत कोई अधिकार विवाद्य हो, अपने अभिवचन में दावा कर सकेगा कि लिखत परिशोधित की जाए; अथवा

(ग) ऐसे किसी वाद में जैसा खण्ड (ख) में निर्दिष्ट है, प्रतिवादी किसी अन्य प्रतिरक्षा के साथ-साथ जो उसको उपलब्ध हो, लिखत की परिशुद्धि की मांग कर सकेगा ।

(2) यदि किसी वाद में, जिसमें संविदा या अन्य लिखत का उपधारा (1) के अधीन परिशोधित कराना ईप्सित हो, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि कपट या भूल के कारण, वह लिखत, पक्षकारों का वास्तविक आशय अभिव्यक्त नहीं करती, तो जहां तक पर-व्यक्तियों द्वारा सद्भावपूर्वक और मूल्यार्थ अर्जित अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसा किया जा सके, न्यायालय स्वविवेक में लिखत को ऐसे परिशोधित करने का निदेश दे सकेगा जिससे वह आशय अभिव्यक्त हो जाए ।

(3) लिखित संविदा पहले परिशोधित की जा सकेगी और तब, यदि परिशुद्धि का दावा करने वाले पक्षकार ने अपने अभिवचन में ऐसी प्रार्थना की हो और न्यायालय ठीक समझे तो वह विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित की जा सकेगी ।

(4) किसी लिखत की परिशुद्धि के लिए इस धारा के अधीन किसी भी पक्षकार को अनुतोष अनुदत्त न किया जाएगा जब तक कि उसका विनिर्दिष्टतः दावा न किया गया हो :

परन्तु जहां कि किसी पक्षकार ने अपने अभिवचन में किसी ऐसे अनुतोष का दावा न किया हो, वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में ऐसे दावे को अन्तर्गत करने के लिए अभिवचन को संशोधित करने की अनुज्ञा ऐसे निबन्धनों पर देगा, जो न्यायसंगत हों ।

अध्याय 4
संविदाओं का विखंडन

27. **विखंडन कब न्यायनिर्णीत या नामंजूर किया जा सकेगा** – (1) किसी संविदा में हितबद्ध कोई भी व्यक्ति उसे विखंडित कराने के लिए वाद ला सकेगा और ऐसा विखंडन निम्नलिखित दशाओं में से किसी में भी न्यायालय द्वारा न्यायनिर्णीत किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) जहां कि संविदा वादी द्वारा शून्यकरणीय या पर्यवसेय हो;

(ख) जहां कि संविदा ऐसे हेतुकों से विधिविरुद्ध हो जो उसके देखने ही से प्रकट नहीं है और प्रतिवादी का दोष वादी से अधिक है ।

(2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, न्यायालय संविदा का विखंडन नामंजूर कर सकेगा –

(क) जहां कि वादी ने अभिव्यक्ततः या विवक्षिततः संविदा को अनुसमर्पित कर दिया है; अथवा

(ख) जहां कि परिस्थितियों में ऐसी तब्दीली के कारण, जो संविदा के लिए जाने के पश्चात् (स्वयं प्रतिवादी के किसी कार्य के कारण नहीं) हो गई हो, पक्षकारों को उसी स्थिति में सारतः प्रत्यावर्तित न किया जा सके जिसमें वे सब थे जब संविदा की गई थी; अथवा

(ग) जहां कि संविदा के अस्तित्व के दौरान पर-व्यक्तियों ने सद्भावपूर्वक सूचना के बिना और मूल्यार्थ अधिकार अर्जित कर लिए हों; अथवा

(घ) जहां कि संविदा के केवल एक भाग का ही विखंडन ईप्सित हो और ऐसा भाग संविदा के शेष भाग से पृथक् न किया जा सकता हो ।

स्पष्टीकरण – इस धारा में संविदा से उन राज्यक्षेत्रों के सम्बन्ध में, जिन पर सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4) का विस्तार नहीं है, लिखित ''संविदा'' अभिप्रेत है ।

28. **स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे पर दिए जाने के लिए ऐसी संविदाओं का, जिनके विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री की जा चुकी हो, कतिपय परिस्थितियों में विखंडन** – (1) जहां कि किसी वाद में स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे पर दिए जाने की संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री की जा चुकी हो और क्रेता या पट्टेदार डिक्री द्वारा अनुज्ञात कालावधि के भीतर या ऐसी अतिरिक्त कालावधि के भीतर, जो न्यायालय अनुज्ञात करे, विक्रय धन या अन्य राशि, जिसे देने के लिए न्यायालय ने उसे आदेश दिया हो, न दे, वहां विक्रेता या पट्टाकर्ता उसी वाद में जिसमें डिक्री की गई है, संविदा के विखंडित किए जाने का आवेदन कर सकेगा और ऐसे आवेदन पर न्यायालय आदेश द्वारा संविदा को, या तो वहां तक जहां तक कि व्यतिक्रम करने वाले पक्षकार का सम्बन्ध है, या सम्पूर्णतः, जैसा भी मामले में न्याय द्वारा अपेक्षित हो, विखंडित कर सकेगा ।

(2) जहां कि उपधारा (1) के अधीन संविदा विखंडित कर दी गई हो, वहा न्यायालय –

(क) यदि क्रेता या पट्टेदार ने संविदा के अधीन सम्पत्ति का कब्जा अभिप्राप्त कर लिया हो, तो न्यायालय उसे निदेश देगा कि वह विक्रेता या पट्टाकर्ता को कब्जा प्रत्यावर्तित कर दे; तथा

(ख) ऐस सब भाटकों और लाभों का संदाय जो सम्पत्ति के सम्बन्ध में उस तारीख से जिसको क्रेता या पट्टेदार द्वारा ऐसा कब्जा अभिप्राप्त किया गया था, विक्रेता या पट्टाकर्ता को कब्जे के प्रत्यावर्तन तक प्रोद्भूत हुए हों, विक्रेता या पट्टकर्ता को किए जाने के लिए और यदि मामले में न्याय द्वारा ऐसा अपेक्षित हो, तो संविदा के सम्बन्ध में अग्रिम धन या निक्षेप के तौर पर क्रेता या पट्टेदार द्वारा दी गई किसी राशि के प्रतिदाय के लिए निदेश दे सकेगा ।

(3) यदि क्रेता या पट्टेदार ऐसा क्रय धन या अन्य राशि, जिसको उसे डिक्री द्वारा उपधारा (1) में निर्दिष्ट कालावधि के भीतर देने का आदेश दिया गया हो, दे दें तो न्यायालय उसी वाद में किए गए आवेदन पर क्रेता या पट्टेदार को ऐसा अतिरिक्त अनुतोष दिला सकेगा जिसका वह हकदार हो और जिसके अन्तर्गत समुचित मामलों में निम्नलिखित में से सब या कोई अनुतोष भी आता है, अर्थात् :–

(क) विक्रेता या पट्टाकर्ता द्वारा उचित हस्तान्तर पत्र या पट्टे का निष्पादन;

(ख) ऐसे हस्तान्तर पत्र या पट्टे के निष्पादन पर सम्पत्ति के कब्जे का या विभाजन और पृथक् कब्जे का परिदान ।

(4) ऐसे किसी अनुतोष के बारे में, जिसका इस धारा के अधीन दावा किया जा सके, कोई पृथक् वाद जो, यथास्थिति, विक्रेता, क्रेता या पट्टाकर्ता या पट्टेदार की प्रेरणा पर लाया गया हो, ग्राह्य नहीं होगा ।

(5) इस धारा के अधीन की किसी भी कार्यवाही के खर्च न्यायालय के विवेकाधिकार में होंगे ।

29. **विनिर्दिष्ट पालन के बाद में विखंडन की अनुकल्पिक प्रार्थना** – किसी लिखित संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का वाद संस्थित करने वाला वादी अनुकल्पतः यह प्रार्थना कर सकेगा कि यदि संविदा विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित नहीं की जा सकती, तो वह विखंडित कर दी जाए और रद्द किए जाने के लिए न्यायालय को परिदत्त कर दी जाए और न्यायालय यदि

संविदा को विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित कराने से इनकार कर दे तो वह तदनुसार उसके विखंडित और न्यायालय को परिदत्त किए जाने को निर्दिष्ट कर सकेगा ।

30. **विखंडित कराने वाले पक्षकारों से न्यायालय साम्या बरतने की अपेक्षा कर सकेगा** – किसी संविदा का विखंडन न्यायनिर्णीत करने पर न्यायालय, उस पक्षकार से, जिसे ऐसा अनुतोष अनुदत्त किया गया है, अपेक्षा कर सकेगा कि वह दूसरे पक्षकार को ऐसा कोई फायदा, जो उसने उस पक्षकार से प्राप्त किया हो, यावत्शक्य प्रत्यावर्तित करे और उसे ऐसा प्रतिकर दे, जो न्याय द्वारा अपेक्षित हो ।

अध्याय 5
लिखतों का रद्दकरण

31. **कब रद्दकरण का आदेश दिया जा सकेगा** – (1) कोई व्यक्ति, जिसके विरुद्ध कोई लिखत शून्य या शून्यकरणीय हो और जिसको यह युक्तियुक्त आशंका हो कि ऐसी लिखत यदि विद्यमान छोड़ दी गई, तो वह उसे गंभीर क्षति कर सकती है, उसको शून्य या शून्यकरणीय न्यायनिर्णीत कराने के लिए वाद ला सकेगा; और न्यायालय स्वविवेक में, उसे ऐसा न्यायनिर्णीत कर सकेगा और उस न्यायालय को परिदत्त और रद्द किए जाने के लिए आदेश दे सकेगा ।

(2) यदि लिखत भारतीय रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का 16) के अधीन रजिस्ट्रीकृत हो तो न्यायालय अपनी डिक्री की एक प्रतिलिपि ऐसे आफिसर को भेजेगा जिसके कार्यालय में लिखत का इस प्रकार रजिस्ट्रीकरण हुआ है, और ऐसा आफिसर अपनी पुस्तकों में अन्तर्विष्ट लिखत की प्रति पर उसके रद्दकरण का तथ्य टिप्पणित कर लेगा ।

32. **कौन सी लिखतें भागतः रद्द की जा सकेंगी** – जहां कि कोई लिखत विभिन्न अधिकारों या विभिन्न बाध्यताओं का साक्ष्य हो, वहां न्यायालय, उचित मामले में, उसे भागतः रद्द कर सकेगा और अवशिष्ट को बना रहने दे सकेगा ।

33. **फायदा प्रत्यावर्तित करने या प्रतिकर दिलाने की अपेक्षा करने की शक्ति जब लिखत रद्द की जाए या उसका शून्य या शून्यकरणीय होने के आधार पर सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया जाए** – (1) किसी लिखत का

रद्दकरण न्यायनिर्णीत करने पर, न्यायालय उस पक्षकार से, जिसे ऐसा अनुतोष अनुदत्त किया गया है, अपेक्षा कर सकेगा कि वह दूसरे पक्षकार को ऐसा कोई फायदा जो उसने उस पक्षकार से प्राप्त किया हो यावत्शक्य प्रत्यावर्तित करे और उसे ऐसा प्रतिकर दे, जो न्याय द्वारा अपेक्षित हो ।

(2) जहां कि प्रतिवादी किसी वाद का सफलतापूर्वक इस आधार पर प्रतिरोध करे –

(क) कि वह लिखत, जिसे वाद में उसके विरुद्ध प्रवर्तित कराना ईप्सित है, शून्यकरणीय है, वहां यदि प्रतिवादी ने दूसरे पक्षकार से लिखत के अधीन कोई फायदा प्राप्त किया हो जो न्यायालय ऐसा फायदा उस पक्षकार को यावत्शक्य प्रत्यावर्तित करने या उसके लिए प्रतिकर देने की उससे अपेक्षा कर सकेगा;

(ख) कि वह करार, जिस वाद में उसके विरुद्ध प्रवर्तित कराना ईप्सित है, भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) की धारा 11 के अधीन संविदा करने में, उसके सक्षम न होने के कारण शून्य है, वहां यदि प्रतिवादी ने दूसरे पक्षकार से करार के अधीन कोई फायदा प्राप्त किया हो तो न्यायालय ऐसा उस पक्षकार को यावत्शक्य, उस विस्तार तक प्रत्यावर्तित करने की उससे अपेक्षा कर सकेगा जहां तक कि उसे या उसकी संपदा का तद्द्वारा फायदा पहुंचा हो ।

अध्याय 6
घोषणात्मक डिक्रियां

34. **प्रास्थिति की या अधिकार की घोषणा के बारे में न्यायालय का विवेकाधिकार** – कोई व्यक्ति, जो किसी विधिक हैसियत का या किसी सम्पत्ति के बारे में किसी अधिकार का हकदार हो, ऐसे किसी व्यक्ति के विरुद्ध, जो ऐसी हैसियत का या ऐसे अधिकार के हक का प्रत्याख्यान करता हो या प्रत्याख्यान करने में हितबद्ध हो, वाद संस्थित कर सकेगा और न्यायालय स्वविवेक में उस वाद में यह घोषणा कर सकेगा कि वह ऐसा हकदार है और वादी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह उस वाद में किसी अतिरिक्त अनुतोष की मांग करे :

परन्तु कोई भी न्यायालय वहां ऐसी घोषणा नहीं करेगा जहां कि वादी

हक की घोषणा मात्र के अतिरिक्त कोई अनुतोष मांगने के योग्य होते हुए भी वैसा करने में लोप करे ।

स्पष्टीकरण – सम्पत्ति का न्यासी ऐसे हक का प्रत्याख्यान करने में ''हितबद्ध व्यक्ति'' है जो ऐसे व्यक्ति के हक के प्रतिकूल हो जो अस्तित्व में नहीं है, और जिसके लिए वह न्यासी होता यदि वह व्यक्ति अस्तित्व में आता ।

35. **घोषणा का प्रभाव** – इस अध्याय के अधीन की गई घोषणा केवल वाद के पक्षकार और उनसे व्युत्पन्न अधिकार के द्वारा दावा करने वाले व्यक्तियों को ही आबद्ध करती है और जहां कि पक्षकारों में से कोई पक्षकार न्यासी हो वहां उन व्यक्तियों को ही आबद्ध करती है जिनके लिए ऐसे पक्षकार न्यासी होते यदि घोषणा की तारीख को उनका अस्तित्व होता ।

भाग 3

निवारक अनुतोष

अध्याय 7

व्यादेश साधारणतः

36. **निवारक अनुतोष कैसे अनुदत्त किया जाता है** – निवारक अनुतोष न्यायालय के विवेकानुसार अस्थायी या शाश्वत व्यादेश द्वारा अनुदत्त किया जाता है ।

37. **अस्थायी और शाश्वत व्यादेश** – (1) अस्थायी व्यादेश ऐसे होते हैं जिन्हें विनिर्दिष्ट समय तक या न्यायालय के अतिरिक्त आदेश तक बने रहना है तथा वे वाद के किसी भी प्रक्रम में अनुदत्त किए जा सकेंगे और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) द्वारा विनियमित होते हैं ।

(2) शाश्वत व्यादेश वाद की सुनवाई पर और उसके गुणागुण के आधार पर की गई डिक्री द्वारा ही अनुदत्त किया जा सकता है; तद्द्वारा प्रतिवादी किसी अधिकार का ऐसा प्राख्यान या कोई ऐसा कार्य जो वादी के अधिकारों के प्रतिकूल हो, न करने के लिए शाश्वत काल के लिए व्यादिष्ट कर दिया जाता है ।

अध्याय 8

शाश्वत व्यादेश

38. **शाश्वत व्यादेश कब अनुदत्त किया जाता है** – (1) इस अध्याय

में अन्तर्विष्ट या निर्दिष्ट अन्य उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि शाश्वत व्यादेश वादी को उसके पक्ष में विद्यमान बाध्यता के, चाहे वह अभिव्यक्त हो या विवक्षित, भंग का निवारण करने के लिए अनुदत्त किया जा सकेगा ।

(2) जबकि ऐसी कोई बाध्यता संविदा से उद्भूत होती हो तब न्यायालय अध्याय 2 में अन्तर्विष्ट नियमों और उपबन्धों द्वारा मार्गदर्शित होगा ।

(3) जबकि प्रतिवादी के सम्पत्ति के अधिकार या उपभोग पर आक्रमण करे या आक्रमण की धमकी दे तब न्यायालय निम्नलिखित दशाओं में शाश्वत व्यादेश दे सकेगा, अर्थात् –

(क) जहां कि प्रतिवादी वादी के लिए उस सम्पत्ति का न्यासी हो;

(ख) जहां कि उस वास्तविक नुकसान का, जो उस आक्रमण द्वारा कारित है या जिसका उस आक्रमण द्वारा कारित होना संभाव्य है, अभिनिश्चय करने के लिए कोई मानक विद्यमान न हों;

(ग) जहां कि वह आक्रमण ऐसा हो कि धन के रूप में प्रतिकर यथायोग्य अनुतोष न देगा;

(घ) जहां कि व्यादेश न्यायिक कार्यवाही के बाहुल्य निवारित करने के लिए आवश्यक हो ।

39. **आज्ञापक व्यादेश** – जबकि किसी बाध्यता के भंग का निवारण करने के लिए कतिपय ऐसे कार्यों का जिनका प्रवर्तन कराने को न्यायालय समर्थ है पालन विवश करना आवश्यक हो, तब न्यायालय, परिवादित भंग को निवारित करने ओर अपेक्षित कार्यों का पालन विवश करने के लिए भी, स्वविवेक में, व्यादेश अनुदत्त कर सकेगा ।

40. **व्यादेश के स्थान पर या उसके अतिरिक्त नुकसानी** – (1) धारा 38 के अधीन शाश्वत व्यादेश के या धारा 39 के अधीन आज्ञापक व्यादेश के वाद में वादी ऐसे व्यादेश के अतिरिक्त या स्थान पर, नुकसानी का दावा कर सकेगा और न्यायालय यदि ठीक समझे तो ऐसी नुकसानी दिला सकेगा ।

(2) इस धारा के अधीन नुकसानी का कोई अनुतोष तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक कि वादी ने अपने वादपत्र में ऐसे अनुतोष का दावा न किया हो :

परन्तु जहां कि वादपत्र में ऐसी किसी भी नुकसानी का दावा न किया गया हो वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में इसलिए कि वादी ऐसे दावे को वादपत्र में अन्तर्गत कर सके वादपत्र का संशोधन करने के लिए ऐसे निबन्धनों पर अनुज्ञा देगा जैसे न्यायसंगत हों ।

(3) वादी के पक्ष में विद्यमान बाध्यता के भंग को निवारित करने के बाद की खारिजी ऐसे भंग के लिए नुकसानी का वाद लाने के उसके अधिकार को वर्जित करेगी ।

41. **व्यादेश कब नामंजूर किया जाता है** – व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जा सकता –

(क) किसी व्यक्ति को किसी ऐसी न्यायिक कार्यवाही के अभियोजन से अवरुद्ध करने को जो ऐसे वाद के जिसमें व्यादेश ईप्सित है, संस्थित किए जाने के समय लंबित हो, जब तक कि ऐसा अवरोध कार्यवाहियों के बाहुल्य को निवारित करने के लिए आवश्यक न हो;

(ख) किसी व्यक्ति को ऐसे न्यायालय में, जो उस न्यायालय के अधीनस्थ नहीं है जिससे व्यादेश ईप्सित है, किसी कार्यवाही को संस्थित या अभियोजित करने से अवरुद्ध करने को;

(ग) किसी व्यक्ति को किसी विधायी निकाय के समक्ष आवेदन करने से अवरुद्ध करने को;

(घ) किसी व्यक्ति को किसी आपराधिक मामले में कोई कार्यवाही संस्थित या अभियोजित करने से अवरुद्ध करने को;

(ङ) ऐसी संविदा का भंग निवारित करने को जिसका विनिर्दिष्टतः पालन प्रवर्तनीय नहीं है;

(च) किसी ऐसे कार्य की न्यूसेंस के आधार पर निवारित करने को, जिसके संबंध में यह युक्तियुक्त तौर पर स्पष्ट न हो कि वह न्यूसेंस हो जाएगा;

(छ) किसी ऐसे चालू रहने वाले भंग को निवारित करने को, जिसमें वादी उपमत हो गया हो;

(ज) जब कि समानतः प्रभावकारी अनुतोष, कार्यवाही के किसी अन्य प्रायिक ढंग द्वारा निश्चयपूर्वक अभिप्राप्त किया जा सकता हो

सिवाय न्यासभंग की दशा के;

(झ) जबकि वादी या उसके अभिकर्ताओं का आचरण ऐसा रहा हो जो उसे न्यायालय की मदद पाने के लिए निर्हकित कर दे :

(ञ) जबकि वादी का उस मामले में कोई वैयक्तिक हित न हो ।

42. **नकारात्मक करार के पालन का व्यादेश** – धारा 41 के खण्ड (ङ) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां कि किसी संविदा में किसी निश्चित कार्य को करने का सकारात्मक करार और उसी के साथ किसी निश्चित कार्य को न करने का अभिव्यक्त या विवक्षित नकारात्मक करार, समाविष्ट हो वहां यह परिस्थिति कि न्यायालय सकारात्मक करार का विनिर्दिष्टतः पालन विवश करने में असमर्थ है न्यायालय को नकारात्मक करार पालन का व्यादेश अनुदत्त करने से प्रवारित नहीं करेगी :

परन्तु यह तब जबकि वादी संविदा के पालन में, जहां तक वह उसके लिए आबद्धकर है, असफल रहा हो ।

43. **[1940 के अधिनियम 10 का संशोधन ।]** – 1974 के अधिनियम सं. 56 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा 43 निरसित ।

44. **[निरसन ।]** – 1974 के अधिनियम सं. 56 की धारा 2 और अनुसूची 1 द्वारा 44 निरसित ।